



साहित्य अमृत

पौष-माघ, संवत्-२०७९ ❖ जनवरी २०२३

मासिक

वर्ष-२८ ❖ अंक-६ ❖ पृष्ठ ८८

यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित

ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

**डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी
श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी**

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

ई-मेल : sahytaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US\$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US\$45)

साहित्य अमृत के बैंक खाते का विवरण

बैंक ऑफ इंडिया

खाता सं. : 600120110001052

IFSC : BKID0006001

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२

से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद

इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV,

गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।



संपादकीय

संकल्पों का समय** ४

प्रतिस्मृति

कलंकी अवतार/ शिवप्रसाद सिंह ६

कहानी

आधी रात का सपना/ राकेश भ्रमर ११

छातेवाले बाबा/ इंदु सिन्हा १८

मोरा नैहर छूटो जाए/ रविशंकर सिंह २८

खजाने का रहस्य/ भरतचंद्र शर्मा ३४

भगवत/ मानेश्वर मनुज ४८

जीवनसाथी/ नलिनी श्रीवास्तव ५८

छुट्टा छंड/ रमा पांडेय ७०

लघुकथा

सरकारी पेड़/ दिवाकर पांडेय ३०

तीसरा आदमी/ दिवाकर पांडेय ५५

आलेख

आचार्य विद्यानिवास मिश्र : लोक तथा शास्त्र
का समन्वय/ अजयेंद्र नाथ त्रिवेदी १४

ध्वनि रोगकारक एवं रोगशामक/

दुर्गादत्त ओझा २२

चाय बागान की छाँव में/ चितरंजन भारती ५२

गणतंत्र की गौरव-गाथा/ देवेंद्रराज सुथार ६८

कविता

दुनिया भ्रम के गीत/ प्रशांत उपाध्याय १७

कविताएँ/ विवेक गौतम २१

गजलें/ भूमिका जैन २७

नेताजी का तुलादान/ श्रीकृष्ण सरल ४१

बुरा मत मानिए/ राहुल राजेश ४७

गजलें/ गोविंद गुलशन ६३

गीत/ रमेश शर्मा ६७

बच्चे हम आँगनवाड़ी के/

लाल बहादुर श्रीवास्तव ७३

कविताएँ/ मधु मोहिनी उपाध्याय ७६

राम झरोखे बैठ के

जोड़-तोड़ की यात्रा/ गोपाल चतुर्वेदी ३१

यात्रा-संस्मरण

बीटल्स की अधूरी साधना का साक्षी : चौरासी

कुटीर आश्रम/ स्मिता मिश्र ३८

ललित-निबंध

हम गवालिन जुठिहारे/ गोविंद गुंजन ५६

रिपोर्टाज

नागद्वारी : देवलाक के रास्ते में एक दिन/

अखिलेश सिंह श्रीवास्तव ६०

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

शुभ होता है, शुभ!/ के.वी. तिरुमलेश ६४

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

हम हार नहीं मानते/ टॉमस ट्रांसट्रोमर ७२

व्यंग्य

सोफा कवर/ परगत सिंह जठोल ७४

लोक-साहित्य

छत्तीसगढ़ी लोक-नाट्य/

बीरू लाल बरगाह ७७

बाल-संसार

नववर्ष की साँझ/ रोचिका अरुण शर्मा ६६

इतिहास बन गए***/ सुरेंद्र दत्त सेमल्टी ८०

वर्ग-पहेली ८१

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८२

साहित्यिक गतिविधियाँ ८३

संकल्पों का समय

आप सभी को नववर्ष २०२३ की हार्दिक शुभकामनाएँ। पूरे विश्व में नए वर्ष में कुछ नए संकल्प लेने की परंपरा चली आ रही है। प्रायः ये संकल्प निजी जीवन से जुड़े होते हैं। कोई अपनी बुरी आदतों से छुटकारा पाने का संकल्प करता है तो कोई कुछ नया सीखने या मन में पल रही किसी आकांक्षा को मूर्त रूप देने का संकल्प करता है। अकसर ये संकल्प कुछ दिनों या महीनों के बाद अपनी चमक खो देते हैं किंतु इसके विपरीत कुछ लोग अपने संकल्पों पर खरे उतरकर अपने जीवन की दिशा बदल देते हैं। स्वाभाविक है कि जो लोग सार्वजनिक जीवन से संबंध रखते हैं, समाज के लिए किसी विशेष भूमिका में कार्य करते हैं, उनके संकल्प कुछ अलग तथा कठिन होते हैं। ऐसे लोगों में साहित्य, संगीत, कला, थियेटर, सिनेमा, समाज सेवा, राजनीति, अध्यात्म आदि से जुड़े व्यक्तित्व होते हैं, जिनके संकल्प अखबारों-पत्रिकाओं में छपते हैं अथवा रेडियो-टेलीविजन पर प्रसारित होते हैं। प्रायः कुछ संस्थाएँ एवं संस्थान भी कुछ नए संकल्प लेते हैं। नए विचार, नई योजनाएँ, नए आविष्कार, नई तकनीकें, नवाचार, नई अवधारणाएँ ही मानव सभ्यता को आगे बढ़ाती रही हैं, आगे बढ़ाती रहेंगी। इसलिए नए संकल्प लेने, उन्हें पूरा करने की परंपरा जारी रहे तो व्यक्ति, व्यक्तित्व, संस्था, संस्थान आदि सभी के लिए हितकारी है।

आइए, हम साहित्य जगत् में नए संकल्पों की चर्चा करें। हमारे लेखक संकल्प ले सकते हैं कि वे उन अछूते विषयों पर लेखनी चलाएँ, जिन पर या तो लिखा ही नहीं गया है अथवा बहुत कम लिखा गया है। कुछ उदाहरणों से इसे समझना आसान होगा। हमारी थलसेना, वायुसेना, नौसेना में लाखों वीर सैनिक एवं सैन्य अधिकारी सेवारत हैं। उनके परिवारों की संख्या जोड़ लें तो सेनाओं से जुड़े लोगों की संख्या कई लाख हो जाएगी। हमने चार युद्धों के साथ-साथ कारगिल की लड़ाई भी देखी है। फौजियों के जीवन पर, उनके शौर्य एवं बलिदान पर, उनके परिवारों के संघर्ष पर, शहीदों के परिवारों के संघर्ष पर, शहीदों के परिवारों की व्यथा पर आपने कितने उपन्यास पढ़े हैं? अंग्रेजी से अनूदित कुछ कृतियाँ हिंदी में पहुँची हैं अथवा कुछ कहानियाँ अवश्य मिलती हैं या 'कितने मोर्चे' जैसे एक-दो उपन्यास।

इसी तरह के दर्जनों उदाहरण दिए जा सकते हैं। हमारा फिल्म उद्योग विश्व के सबसे बड़े फिल्म उद्योगों में है। लाखों लोग इससे रोजगार पाते हैं और करोड़ों लोग मनोरंजन, फिल्म जगत् या उसके कलाकारों या उनमें परदे के पीछे काम करनेवालों के संघर्ष अथवा महिला कलाकारों के शोषण अथवा प्रतिभाओं के मानसिक उत्पीड़न अथवा तरह-तरह की राजनीति तथा कुचक्रों पर कितने उपन्यास अथवा नाटक पढ़े हैं आपने? और भी बहुत से क्षेत्र हैं, जिनपर लेखकों का ध्यान नहीं गया है। कुछ

कृतियाँ अवश्य आई हैं, किंतु वहाँ किसी सितारे की लोकप्रियता तथा उससे जुड़ी सनसनी लेखन का विशेष कारक रही हैं।

इसी प्रकार के संकल्प और भी संभव हैं, जैसे नाट्य कृतियों का अभाव। हिंदी में नाटकों के मंचन के लिए प्रायः दूसरी भाषाओं से अनूदित कृतियों का बाहुल्य रहता है, चाहे वे काफ़का, गोगोल, चेखव, शेक्सपीयर जैसे विदेशी लेखक हों अथवा मराठी, बांग्ला आदि के लेखक। गंभीर बाल लेखन का भी प्रायः अभाव सा ही है। कुछ समर्पित लेखकों, कवियों के नियमित लेखन को साधुवाद अवश्य है, किंतु आज के बच्चों के अनुकूल साहित्य की उपलब्धता के मामले में बहुत कुछ किए जाने की आवश्यकता है। कविता के क्षेत्र में कितने ही संकल्प किए जा सकते हैं। जो कविता, कवि-सम्मेलनों के माध्यम से अथवा टी.वी. चैनलों के माध्यम से करोड़ों लोगों तक पहुँच रही है, क्या वह सचमुच कविता है? कवि-सम्मेलनों के संयोजक भी थोड़ी 'जिम्मेदारी' दिखाकर कविता का प्रतिशत बढ़ाने का संकल्प ले सकते हैं। अपने को 'साहित्यिक कवि' माननेवाले भी अपनी कविताओं को आम लोगों तक ले जाने का संकल्प कर सकते हैं। सरकारी संस्थाओं में कार्यरत अधिकारी भी 'लोकप्रियता' के जाल में फँस जाते हैं तथा साहित्यिक प्रदूषण में भागीदार बन जाते हैं। कम-से-कम साहित्यिक संस्थाओं को अपना दायित्व गंभीरता से निभाने का संकल्प लेना चाहिए।

महाविद्यालयों, विद्यालयों के शिक्षक अच्छे साहित्य को किशोरों, युवाओं तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने का संकल्प ले सकते हैं। साहित्यिक कृतियाँ कैसे आसानी से प्रकाशित हों, कैसे बाजार में उपलब्ध हों, इसके लिए भी संकल्प लेने होंगे। ६० करोड़ हिंदी समझनेवाले देश में किसी साहित्यिक कृति का मात्र ३०० से ५०० की संख्या में छपना कितना दुःखद है! इसलिए सबसे महत्वपूर्ण संकल्प तो हिंदी भाषियों को लेना होगा। ६० करोड़ हिंदी भाषियों में मात्र दस प्रतिशत को भी आर्थिक रूप से समर्थ मान लिया जाए तो भी ६ करोड़ की संख्या बहुत बड़ी संख्या है। यदि ये लोग अपने घर में एक साहित्यिक पत्रिका तथा एक साहित्यिक कृति भी हर माह खरीदने का संकल्प कर लें तो पूरा परिदृश्य ही बदल जाए। इससे भला सिर्फ साहित्य का ही नहीं होगा वरन् समाज का भी होगा! आज जितनी भयावह खबरें सुनने-देखने को मिलती हैं, समाज में जितनी क्रूरता, संवेदनहीनता, घृणा, अमानवीयता फैल रही है, उसका उपचार साहित्य से ही संभव है। कानून व्यवस्था की अपनी ही सीमाएँ हैं, जीवन-मूल्यों की ओर तो साहित्य ही लौटा सकता है।

विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र

इस वर्ष का गणतंत्र दिवस निश्चय ही बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह ७४वाँ गणतंत्र दिवस है। अगले वर्ष ७५वाँ गणतंत्र दिवस मनाने का गौरव प्राप्त होगा। २६ जनवरी यों भी महत्वपूर्ण है कि १५ अगस्त को

स्वाधीनता दिवस मनाए जाने से पहले २६ जनवरी को ही स्वाधीनता दिवस के रूप में मनाया जाता था, क्योंकि इसी दिन पूर्ण स्वाधीनता की शपथ ली गई थी। भावनात्मक रूप से १५ अगस्त का जितना महत्त्व है, उतना ही २६ जनवरी यानी गणतंत्र दिवस का भी है, क्योंकि इसी दिन हमने अपना संविधान लागू किया और अपनी स्वाधीनता को सार्थक बनाने का संकल्प लिया। हम विश्व-फलक पर एक सर्वप्रभुता-संपन्न राष्ट्र बने। शहीदों ने जिस भारत का सपना देखा था, जहाँ गरीबी, भुखमरी, बेकारी, शोषण, दमन, अन्याय, अत्याचार, ऊँच-नीच, भेदभाव, सांप्रदायिकता, जातिवाद आदि से मुक्ति मिलेगी, उसे साकार करने के लिए संविधान जैसा पवित्र ग्रंथ हमें मिल गया था। अमृत महोत्सव के दौरान जो संकल्प लिये गए हैं, विकसित भारत का जो सपना देखा गया है, उसे पूरा करने के लिए, लोकतंत्र एवं लोकतांत्रिक मूल्यों की प्रतिष्ठा आवश्यक है।

कुछ कमियों को स्वीकार करना तो उचित है किंतु भारत में जिस प्रकार शांतिपूर्ण ढंग से सत्ता-परिवर्तन हुए हैं, वे पूरे विश्व के लिए उदाहरण हैं। यहाँ जिस दल या नेता ने स्वयं को देश या संविधान से बड़ा समझने की भूल की, उसे जनता ने सही सबक सिखा दिया। आपातकाल के बाद की जनक्रांति इसका उदाहरण है। इसीलिए जब गणतंत्र दिवस का अमृत महोत्सव दस्तक दे रहा है तो आवश्यक है कि राजनीति के क्षेत्र में आई अनेक विकृतियों को दूर किया जाए। राजनीति से आपराधिक पृष्ठभूमि वाले नेताओं को दूर किया जाए। राजनीति धन कमाने का आसान जरिया बनने की बजाय जनसेवा का माध्यम बने। चुनाव में अनाप-शनाप धन का खर्च रोका जाए। ऐसी स्थितियाँ बनें जिससे समाजसेवी या राष्ट्रसेवा का स्वप्न पालनेवाले बुद्धिजीवी भी राजनीति में आने का स्वप्न देख सकें। राजनीति में जाति के आधार पर टिकट मिलने का कुचक्र तोड़ा जाए और जातिविहीन समाज की ओर बढ़ा जाए। जब सभी राजनीतिक दलों का लक्ष्य एक है कि भारत खुशहाल बने, सशक्त बने, विश्व में अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाए तो फिर इतनी कटुता क्यों? भारत में पूर्ण साक्षरता कैसे आए, नारी कैसे सुरक्षित हो, बच्चों को अनिवार्य शिक्षा मिले, उन्हें मासूम उम्र में काम पर न लगाना पड़े, गाँव कैसे इतने संपन्न बनें कि नगरों की ओर पलायन रुके, झुग्गी-बस्तियों से मुक्ति मिले, युवाओं को अपने स्वप्नों को साकार करने के लिए विदेश न जाना पड़े, उन्हें बेरोजगारी या अल्परोजगार या अपनी प्रतिभा के प्रतिकूल रोजगार की विवशता का शिकार न होना पड़े।

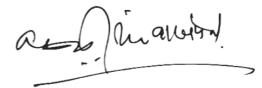
लोकतंत्र के चौथे स्तंभ के नाते मीडिया तथा अखबारों को भी गंभीर मुद्दों पर विमर्श करना होगा। टी.आर.पी. कमाने के लालच में मीडिया की बहसों पर संसद् में भी चिंता व्यक्त की गई है तथा सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों में भी। आम नागरिकों को भी मात्र वोट देने तक अपने को सीमित करने की बजाय राष्ट्र-निर्माण में सार्थक भागीदारी हेतु अधिक जागरूक भी होना पड़ेगा तथा सरकार की योजनाओं में अपनी भूमिका भी निभानी होगी।

इंटरनेट युग में हिंदी

विश्व के अनेकानेक देशों में 'विश्व हिंदी दिवस' का आयोजन अत्यंत सुखद और गर्व से भर देनेवाला अनुभव है। इसका एक और

सुखद पहलू भारत के दूतावासों, सांस्कृतिक केंद्रों के साथ-साथ प्रवासी भारतीयों तथा भारतवंशियों द्वारा विभिन्न संस्थाओं, समूहों के माध्यम से हिंदी दिवस के सैकड़ों आयोजन हैं। इस बात में तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं है कि प्रवासी भारतीयों तथा भारतवंशियों की विविध साहित्यिक, सांस्कृतिक अथवा स्वयंसेवी संस्थाएँ, जिस निष्ठा, लगन, समर्पण के साथ हिंदी के प्रचार-प्रसार में लगी हैं, वह अनेक भारतीय संस्थाओं से कुछ अलग तथा बेहतर ही हैं। अमरीका, कनाडा, इंग्लैंड, ऑस्ट्रेलिया जैसे देश हों, चाहे बहरीन, केन्या, कुवैत, सिंगापुर जैसे देश हों, सभी जगह हिंदी के उत्थान के लिए अनेकानेक प्रयास हो रहे हैं। जगह-जगह हिंदी के सामुदायिक रेडियो कार्य कर रहे हैं। मॉरीशस, फीजी, त्रिनिदाद, सूरीनाम आदि देशों का तो कहना ही क्या, जहाँ हिंदी अत्यंत सम्मानित स्थान बनाए हुए है। स्वाभाविक है कि इस बदलाव में 'इंटरनेट' की क्रांतिकारी भूमिका है। इंटरनेट के आने के पहले, दुनिया के अन्य देशों में बसे हिंदी प्रेमियों की स्थिति की कल्पना करिए। किससे हिंदी में बात करें, किससे अपनी रचनाएँ साझा करें। उन दिनों जिन्होंने भी साहित्य रचना की, उनकी रचनाधर्मिता को नमन है, किंतु कितने ही संभावनाशील रचनाकारों की प्रतिभा समुचित वातावरण न मिलने से कुंठित हुई होगी!

प्रतिदिन दुनिया भर के देशों से दर्जनों 'ऑनलाइन' कार्यक्रम नियमित रूप से आयोजित होते हैं, जिनमें दुनिया भर के रचनाकार तथा दर्शक जुड़ते हैं। आज एक-एक देश में दर्जनों रचनाकार लेखन करके हिंदी को समृद्ध कर रहे हैं। मात्र कविता, कहानी, लेख ही नहीं वरन् हिंदी में लघु नाटकों का मंचन, छोटी फिल्मों का निर्माण तथा अन्य विधाओं में योगदान भी शामिल है। इस सुखद बदलाव के साथ जब हम इंटरनेट पर हिंदी की ज्ञान सामग्री पर विचार करते हैं तो थोड़ी चिंता होती है। भारत में इंटरनेट तथा मोबाइल का उपयोग करनेवाले तो विश्व में शीर्ष पर हैं, किंतु ज्ञान सामग्री की तरफ उनका ध्यान कम है। यदि अंग्रेजी जैसी भाषा के ६० लाख से अधिक आलेख इंटरनेट पर हैं तथा दूसरी भाषाओं के भी १४ लाख से ४० लाख के बीच हैं तो हिंदी में आलेखों की संख्या दो लाख से भी कम है। विश्व के बड़े-बड़े पुस्तकालयों के 'विदेशी भाषा विभाग' में भी हिंदी पुस्तकों की संख्या नगण्य सी है। हिंदी-सेवियों को इस दिशा में सोचना होगा। इंटरनेट का जो वरदान हमें उपलब्ध हुआ है, उससे हिंदी को समृद्ध, संपन्न और ज्ञान-विज्ञान की भाषा बना सकते हैं। विश्वभर की भाषाओं से अनुवाद करके श्रेष्ठतम ज्ञान को उपलब्ध करवाना भी महत्त्वपूर्ण है तथा मौलिक सामग्री को भी और बढ़ाने की जरूरत है। एक बात यह भी उल्लेखनीय है कि प्रवासी भारतीयों तथा भारतवंशियों के लिए हिंदी उनकी पहचान, अस्मिता तथा सम्मान की भाषा है, जबकि भारत में हिंदी अभी भी सम्मानजनक स्थान हेतु संघर्षरत है। भारत के हिंदी-प्रेमी विश्वभर के हिंदी प्रेमियों के साथ इस संकल्प के साथ आगे बढ़ें कि हिंदी संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा बने।



(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

कलंकी अवतार

• शिवप्रसाद सिंह

डॉ. शिवप्रसाद सिंह का जन्म १९ अगस्त, १९२८ को जलालपुर गाँव (जमानिया), उ.प्र. में हुआ था। उन्होंने हिंदी साहित्य की अप्रतिम सेवा करते हुए कुल ४५ ग्रंथों की रचना की एवं कई पत्रिकाएँ, जैसे 'वीक्षा', 'सरोकार' आदि का संपादन भी किया। उनके आठ उपन्यास, आठ कहानी-संग्रह, ललित निबंधों की सात पुस्तकें, दो नाटक तथा विविध विषयों की दस पुस्तकें प्रकाशित हैं। 'नीला चाँद'; 'अलग-अलग वैतरणी'; 'गली आगे मुड़ती है'; 'वैश्वानर' सर्वाधिक लोकप्रिय कृतियाँ हैं। उन्हें 'उत्तरयोगी' पर बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' पुरस्कार, 'अलग-अलग वैतरणी' पर देव पुरस्कार, 'गली आगे मुड़ती है' पर प्रेमचंद पुरस्कार, 'रसरतन' पर मदन मोहन मालवीय पुरस्कार, 'कस्तूरी मृग' पर आचार्य रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार, 'नीला चाँद' पर साहित्य अकादेमी पुरस्कार, व्यास सम्मान तथा शारदा सम्मान, 'वैश्वानर' पर लोहिया अति विशिष्ट पुरस्कार प्राप्त हुए।



रोपन बारी उस समय कुल्ला-दतीन करने गाँव के बाहर निकले थे। उनके आगे बैसवारियों के पास से वह घोड़ा निकला। दक-लक सफेद। मुँह ऐसा निलोम ललछौंहा कि सींक से खोद दें तो खून निकल जाए। घोड़ा धीरे-धीरे चला जा रहा था, मुँह नीचे की ओर, ऎंटे हुए, रोब के साथ। कड़बड़, कड़बड़, कड़बड़।

अचानक रोपन के शरीर में एक चमक सी हुई और 'सन्न' सी करती कोई चीज एड़ी से लेकर चोटी तक बींधती चली गई।

उन्होंने अपने दोनों हाथों से आँखें मलीं। पलकें मुलमुलाई। "नहीं, सपना नहीं है।" वे बुदबुदाए। उन्होंने जोर से अपनी बाँह में चुटकी भरी। दर्द हुमा, यानी यह विश्वास कि रोपन पूरी तरह जिंदा हैं, पर इस विश्वास ने उनके दिल की धड़कनों को और भी तेज कर दिया। घोड़ा अब बैसवारियों के दूसरे छोर पर पहुँच चुका था। रोपन ने देखा कि उसपर सवार आदमी एकदम काला है।

"एकदम काला ? हे भगवान्।" रोपन के रोएँ भरभरा आए। उनका शरीर डगमगाने लगा। जाड़े के दिन में भी अँगरखे के नीचे पसीना छुटने लगा। उन्होंने अपने को बड़ी मुश्किल से सँभाला। हाथ अपने-आप ही जुड़ गए। जुड़े हाथों को सिर के ऊपर लगाकर रोपन बुदबुदाए, "कृपा करो स्वामी। इस दास ने ऐसे पुण्य कहाँ किए हैं दीनबंधो! तब भी

आपने इतनी दया की। आप कितने दयालु हैं गरीबपरवर!"

रोपन अब ढलककर घोड़े के पीछे चल पड़े। उन्हें बड़ा अचंभा हो रहा था कि इतना बड़ा गाँव है अपना। इतने जन रहते हैं यहाँ, मगर कोई भी इस अद्भुत चीज को देख नहीं पा रहा है। कहीं भी कोलाहल नहीं, भीड़ नहीं, हल्ला-गुल्ला नहीं! तमाशा देखनेवालों का नामोनिशान नहीं, आखिर यह क्या माजरा है, तभी उन्हें ठाकुरवाड़ी के 'पुजेरी' घनश्याम उपध्या की याद आई। पुजेरीजी कहते थे कि भगत की आँख के सामने भगवान् खड़े हो जाते हैं, पर क्या मजाल कि कोई दूसरा देख ले। हूँ, तो यह बात है। अचानक रोपन का चेहरा खिला। टुड्डी झुकी तो इस 'महानगर' में एक भी ऐसा जन नहीं, जो भगवान् को देख रहा हो, सिर्फ रोपन ही देख रहे हैं। खाली रोपन। कितनी बड़ी बात है। कितना बड़ा पुन। रोपन की आँखों से झरझर आँसू गिरने लगे।

वे बेतहाशा घोड़े के पीछे दौड़ पड़े। कैसे मिलूँ। कैसे चरण पकड़कर नैनन जल से उन्हें पखार दूँ।

अब घोड़ा पड़ोसी गाँव की ओर मुड़ गया था। आगे का रास्ता बहुत चौड़ा और समतल था। सवार ने बाग खींचकर एड़ लगा दी थी। घोड़ा दोगामा में चल पड़ा। आगे-आगे घोड़ा, पीछे-पीछे रोपन।

"आखिर इधर ये जा कहाँ रहे हैं?" रोपन ने मन-ही-मन पूछा। एक लम्हे के लिए वे सोचते रहे और तभी उनके चेहरे पर कपूरी हँसी

उभर पाई।

“यही बात है। प्राज्ञ अत्याचारी का नाश हो जाएगा।” रोपन की चाल अपने-आप मंद हो गई। उनकी आँखों के आगे बाबू भेदूसिंह का कटा हुआ चेहरा नाचने लगा।

रोपन को दुःख हुआ। किसी का भी कटा चेहरा देखने की उनमें ताब न थी। परसाल अपने गाँव में एक मदारी आया था। वह बड़ी देर तक जादू दिखाता रहा। समुद्री कौड़ी के पेटे में से ठक-ठक करके उससे भी बड़ी-बड़ी कौड़ियाँ चालीस-पचास निकाल देता। एक कपड़े की पुतली हँडिया भर पानी पी जाती। एक मैली सी टोपी हिला देता तो उसमें से मुरगी निकल आती। खूब मजा आया था। आखिर में उसने अपने साथ के छोकरे को काले कपड़े से ढक दिया था। हम लोग नहीं-नहीं चिल्लाते रहे, पर वो न माना। लंबा सा छूरा लेकर उसने कपड़े के भीतर हाथ डाला और लड़के की गरदन रेत दी। बाप रे! उसकी तो याद आते रोपन को कँपकँपी छूट जाती है। उसने छूरेवाला हाथ बाहर किया था। पूरा छूरा खून से रँगा था। उसकी हथेली भी एकदम लाल हो गई थी। रोपन को गश आ गया था। बड़ा निर्दयी था साला। लड़के की गरदन हिला-हिलाकर दिखा रहा था सबको, जैसे कह रहा हो, मैं बाप हूँ बाप, कसाई नहीं, पर फिर भी अपने लड़के की गरदन काट रहा हूँ। क्यों? क्या समझे? सचमुच रोपन कुछ नहीं समझे। वे वहाँ से चुपचाप खिसक आए थे। दिन भर मन बड़ा उदास रहा। उस दिन खाना भी खाया नहीं गया।

उन्होंने मन को हलका करने की कोशिश की, पर लाख चाहने पर भी भेदूसिंह के कटे सिर को वे भुला नहीं पाए।

घोड़ा काफी आगे जा चुका था, तभी रोपन को याद आया कि सवार के हाथ में तलवार नहीं थी।

“ई क्या बात? यह कैसे हो सकता है?”

रोपन एक क्षण के लिए हतबुद्धि खड़े रह गए। उनका चेहरा उदास हो गया। जाने चींटी ने काटा या तितये ने, वे घबराकर धोती के नीचे हाथ डालकर जाँघ खुजलाने लगे, तभी पैर धोती में उलझा और वे गिरते-गिरते बचे।

“धत्त तेरे की। मैं भी कितना घोंचू हूँ। भला भगवान् को भी तलवार की जरूरत होती है। पुजारीजी कहते थे कि जब अंबरीश की ओर दुरवासा की चुड़ेल चली थी कि भगवान् को भात की रच्छा का खियाल आया। बस उनकी तरजनी अंगूरी में सुदर्शन चक्रलट्टू की तरह नाचने लगा। ई तो सब उनकी माया है। राई को परबत कर दें। परबत को राई करते देर नहीं लगती।”

रोपन फिर दुलकी लेते दौड़ पड़े।

परसडीहा के इस पुरवे में सुबह सदा ही एक ढंग से आती। पूरब को बँसवारियों को चीरकर सूरज की किरणे गाँव के पूरबी भाग पर अपना अधिकार जमातीं और घरों से निकलकर औरतें जूठे बरतनों को सँभाले अपने-अपने दरवाजे आ बैठतीं। दरवाजे पर बैठकर बरतन

साफ करने में दुहरा लाभ था। सामने बैठी पड़ोसिन ने इस-उसके बारे में तीन-पाँच जोड़ने का मजा और गंदा पानी आँगन में गिराकर सार्वजनिक गली में बहाने का सुख। मरदाने बैठकों में लोग-बार उठते हुए दिन को देखकर धसकते हुए मन को बहलाने का बहाना ढूँढ़ते।

“का हो रोपन चाचा।” इन सारी कारगुजारियों से अपने को अलगाता हुआ शोभन अपनी पुरानी आदत के मुताबिक जोर से पुकारता, “अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। चले चलो आज से ही। देखना, साँझ को घर पाते सीना बित्ता भर ऊँचा रहेगा, हाँ।”

“अरे जा बचवा।” रोपन अपनी उसी पुरानी गिरी हुई आवाज में कहते, “तू लोग नए जमाने के आदमी हो। जाओ सँभालो टीसन पर खोंचा। अपने से ऊ सब करम नहीं होने का।”

“नए जमाने के लोग ही पुराने लोगों को ठीक करेंगे, दादा। गाँठ बाँध लो। हमें अवतार नहीं करतार चाहिए। करतार यानी अपना हाथ ही तारेगा, हाँ।” शोभन मुसकराता और स्टेशन की ओर चल देता। रोपन उसे देर तक देखते रहते। जब वह खेतों की पगडंडियों से होता हुआ देउला के बगीचे की पाड़ में नहीं चला जाता, उनकी प्रारी उसी पर लगी रहतीं।

रोपन बारी ने जिंदगी के पाँच साल बड़े लोगों की खिदमत में गुजार दिए। उन्हें गाँव के किस लड़के के जनम, जनेऊ या शादी-ब्याह का ब्योरा नहीं मालूम? दूसरों के सुख में अपनी जिंदगी लगाकर रोपन को कभी दुःख नहीं हुआ। जूठी पत्तलें उठाते-उठा। कमर दुखने लगती। गाँव के एक-एक घर लोगों को भोज-भात के लिए ‘दुलौवा’ पहुँचाते-पहुँचाते रोपन पचास को पहुँच गए, पर कभी भी उन्हें अपने ‘करम’ पर रोना नहीं आया, जैसे-तैसे करके ‘जिंदगानी’ कट ही रही थी। कट ही जाती। ऐसा भी नहीं कि रोपन ने दूसरों के दुःख में सहानुभूति न दिखाई हो। बरसी, किरिया-करम, पिंडदान में भी रोपन सबके आगे-आगे ही रहते। कार-परोजन के घर में घरवालों के जगने के पहले पहुँचना और भोर में थके हुए घरवालों के सो जाने पर काम से छदी पाकर अपने घर को याद करना रोपन को विरासत में मिला था। रोपन ने कसम है ‘गोसँया’ की, कभी भी अपने ‘धरम’ को निभाने में आलस नहीं दिखाया, पर फल का मिला! लड़की की शादी में तीन सौ रुपए के करज में घर का पुशतैनी खेत नीलाम हुआ। लाख रोने-गिड़गिड़ाने पर भी भेदूसिंह खेत छोड़ने को तैयार नहीं हुए। करज दिया। नालिश की। नीलामी कराई और घूम-फिरकर नीलाम खेत भेदूसिंह की जोत में आ गया। बाह रे नियाव। बाह रे फैसला! रोपन वह गम भी पी गए, पर जब भेदूसिंह ने अपने पहले लड़के की शादी पर बाप-दादे के वख्त का रवाज छोड़कर ‘वारी और वारिन’ का ‘पहिरावा’ तक नहीं दिया तो रोपन का कलेजा टूट गया।

“क्या सरकार, दूल्हे के साथ वारी पुराना कपड़ा पहनकर चलेगा तो नव-हँसाई नहीं होगी?” इतना ही रोपन ने कहा था।

भेदूसिंह के तेवर चढ़ गए थे, “तुम साले हमारी ‘नवहँसाई’ देखते

हो, सब परजा-पौनी को पहिरावे के बदले पाँच-पाँच रुपया मिला है, वही तुम्हें भी मिलेगा, चलना हो लड़के के साथ चलो, नहीं घर बैठो। तुम क्या समझते हो कि बारी नहीं जाएगा तो बारात नहीं चढ़ेगी?”

रोपन चुप हो गए थे। वे बारात गए। वर के पानी का मंगलकलश भी ढोया। पालकी के साथ सुरही गाय की पूँछ का ‘चँवर’ भी हाथ में उठाए-उठाए फिरे, पर जब बारात लौटी तो रोपन रास्ते में ही अपने पुरवे पर रुक गए। भेदूसिंह की बहू की पालकी के साथ उनके दरवाजे तक जाने में उन्हें ऐसी शर्म आई कि वे तीन दिन तक खटिया पर पड़े रहे। गाँव-घर के लोगों ने समझाया-बुझाया। भई, अब जमाना बदल गया है। गिरहस्थ को परजा पौनी की फिकर नहीं। अब कोई नया काम-धंधा ढूँढना चाहिए, पर रोपन के मन को चैन नहीं मिलता। उन्हें विश्वास नहीं होता कि बाप-दादे के जमाने से चला आता पेशा बंझा हो गया है। वे शोभन की बातें सुनकर हँस देते। “स्वराज पाया है तो सब जगह बरक्कत होनी चाहिए कि गरीब आदमी को रोटी के भी लाले पड़ जाना चाहिए, मैं अपने पुश्तैनी काम से नहीं हटा तो भगवान् मेरी रोजी देने से कैसे हट जाएँगे?”

रोपन बारी को बबुमानों के गाँव गए पाँच साल हो गए। वे अब उधर आँख उठाकर भी नहीं देखते।

इसी बीच एक और घटना घटी। बाबू भेदूसिंह का बड़ा लड़का पिछले माघ में निमोनिया से मर गया। रोपन बारी ने सुना तो अचानक मुँह से निकल पड़ा, “हाय बेचारा, नई बहू को मँझधार में छोड़कर चला गया।” उस दिन रोपन बारी से खाना खाया नहीं गया। जो कुछ भी हो, वे भेदूसिंह से नाराज थे, उनके खानदान से नहीं। रोपन दिन भर मन मारे खटिया पर पड़े रहे।

“सुनते हो,” संझा को उनकी घरवाली ने बिफरते हुए कहा, “तुम यहाँ उनके लड़के के सोग में चारपाई पकड़े हो, वहाँ गाँव भर में चर्चा है कि दुलहिन की डोली के साथ रोपन गाँव नहीं आए थे, सो उसी असगुन से बहू विधवा हो गई।”

“क्या?” रोपन के कलेजे में जैसे किसी ने बिना अनी की बरछी मार दी हो।

“असगुन पाँच साल के बाद फला है? सालों को कहते सरम भी नहीं लगी। साल भर भी सादी के नहीं बीते कि बहू की कोख भरी। लड़का हुआ। वह सब भी असगुन ही था?”

“अब जो हो, गाँववाले तो यही कहते हैं। भेदूसिंह कहते हैं कि अब साला इस गाँव की ओर दिखा तो टाँग तुड़वा दूँगा।”

“जाएँ साले भरसाय में, मैं सालों के दरवज्जे मूतने भी नहीं जाऊँगा। हुँह।”

रोपन बारी फिर चारपाई पर लेट गए। घरवाली के सामने अकड़कर बातें करते हुए दिल का दर्द गरमाया था, पीड़ा कम थी। चारपाई पर एकांत में फिर जैसे कलेजे में फोड़ा टपकने लगा। पचास

के ऊपर जिंदगी हुई, ऐसा अपजस कभी नहीं मिला। जाने कितनी डोलियाँ उन्होंने ड्योही पर पहुँचाई। जाने कितने मंगल-कलश कंधे पर ढोए, जाने कितने बच्चों के जन्म पर बधावा पहुँचाया, जाने कितनों के मुंडन संस्कार, जनेऊ, वरेक्षा पर उन्होंने हल्दी और दूब पीसकर सुगुन घेरा, पंडित को बुलाने से लेकर लोगों को खिलाने-पिलाने तक वे एक पैर पर खड़े रहे। यह सब इसी का इनाम मिला है। रोपन की आँखों से झर-झर आँसू गिरने लगे। उनका गला रूँध गया और हिचक-हिचककर रो पड़े।

अब ठाकुरवारी के पुजेरी घनस्याम उपध्या के अलावा उनका किसी में विश्वास नहीं रह गया था। वे संझा होते ठाकुरवारी में आ जाते। पुजेरीजी उस वक्त लालटेन रखकर सुखसागर की पोथी बाँचते।

“तो सुनते हो भगत।” पुजेरीजी कहते, “सुखदेव मुनी बोले कि हे महाराज, गोमाता के रूप में पृथ्वी की गुहार सुन, भगवान् ने कहा कि मैं तुरत ही अवतार लूँगा और अत्याचारिन को संहार करिके दुःखी-दीन भगतजनों का उद्धार करूँगा।”

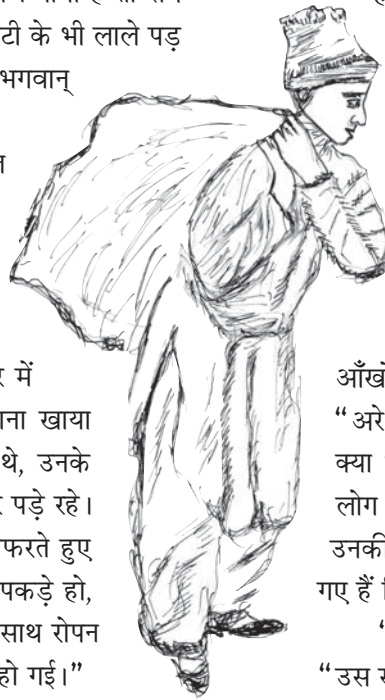
“धन्न हो, धन्न हो।” रोपन की आँखों से झर-झर आँसू गिरने लगते। उन्हें तुरंत अपने गमछे से पोंछकर वे पूछते, “ई तो म की बात है। इस कलजुग में भगवान् वितार लेंगे कि नहीं?”

पुजेरीजी चश्मे के भीतर से ही मुसकराती आँखों से भगत के ऊपर नेह की बरसा करते हुए कहते, “अरे वाह भगत, भला भगवान् के लिए द्वापर-कलजुग में क्या भेद? ऊ तो जब-जब धरम की हानि होती है, असुर लोग अत्याचार करते हैं, तभी-तभी अवतार लेते हैं। यही तो उनकी महिमा है और इसी सुखसागर में, भगत, भगवान् बह गए हैं कि कलजुग में कलंकी अवतार लूँगा।”

“अच्छा!” रोपन की आँखें आश्चर्य से चिलक उठतीं, “उस समय भगवान् जी किस भेष में अवतरेंगे, महाराजजी?” घनस्याम उपध्या सुखसागर के रखते हुए सफे में मोर की पंख लगाकर जल्दी-जल्दी पन्ने उलटते और फिर मुसकराकर कहते, “सुनो भगत, सुखदेव मुनी बोले कि महाराज कलजुग के अंतकाल में सेंभल ग्राम के विष्णुयश ब्राह्मण के घर कलंकी अवतार होगा। श्वेत अश्व पर सवार कृष्णकाय कांतिवाले वे भगवान् हाथ में नंगी तलवार लेकर सारे अत्याचारिन को नाश करेंगे।”

“वाह महाराज। तो इस बार भगवान् जी का रंग काला होगा, तब अपना जमाना आएगा। गरीबों का राज अब होकर रहेगा।” रोपन बारी अपनी काली बाँहें सहलाते-सहलाते आत्मविभोर हो जाते।

घोड़ा बड़ी तेजी के साथ दूसरे गाँव की ओर बढ़ा जा रहा था। रोपन बारी उसके पीछे-पीछे दौड़ते-दौड़ते होने लगे थे। उनका सारा शरीर पसीने से लथपथ हो गया था, पर पता नहीं उनके पैरों में कहाँ की



शक्ति आ गई थी कि वे रुकना ही नहीं चाहते थे। आज पूरे पाँच साल के बाद रोपन बारी बाबूगाँव की ओर मुड़े थे। रास्ते में आते-जाते लोग उन्हें देखकर अचंभे से खड़े हो जाते।

“रोपना पगला गया है क्या?” लोग घोड़े के पीछे रोपन को दौड़ते देख एक-दूसरे से पूछते।

“पगला तो है ही, पाँच साल से खाने बिना मर रहा है, पर कभी गाँव नहीं आता। जवान लड़की सिर पर खड़ी है और ई साला घनस्याम के यहाँ बैठकर धूनी रमाता है।”

घोड़ा बाबू भेदूसिंह के दरवाजे पर जाकर रुक गया। रोपन उनकी बखरी के सामने गली के मोड़ पर पक्खे से सटकर खड़े हो गए। उनका हृदय दीवाल से बुरी तरह दबे रहने पर भी धक्कड़ किए जा रहा था। बाबू भेदूसिंह अपनी चारपाई से उठे। उनके चेहरे पर बड़ी गर्व भरी मुसकराहट थी।

“हँस लो, हँस लो ससुर, एक पल और हँस लो।” रोपन मन-ही-मन बुदबुदाए। उनकी आँखें सवार पर केंद्रित थीं। उन्हें लग रहा था कि बस तनिक देर में चमचमाती तल पर हाथ में कौंधेगी और एक लम्हें में भेदूसिंह का सिर धड़ से अलग होकर घोड़े के पैरों के नीचे तड़फड़ाएगा।

तभी एक आदमी ने आगे बढ़कर घोड़े की बाग पकड़ ली। रोपन ने उचककर देखा, वह भेदूसिंह का चरवाहा सोबरना था।

“वाह, ई भी पुन्न किए है।” रोपन फिर बुदबुदाए, “ऐसा न होता तो भला अवतारी जानवर की बाग कैसे पकड़ लेता।”

बाबू भेदूसिंह उसी समय बखरी की ओर चले। गली की मोड़ पर पहुँचते ही उनकी नजर दीवाल से चिपके रोपन पर जा पड़ी।

“अरे वाह!” वे आश्चर्य से प्रसन्न होकर खिलखिलाए, “अरे वाह, भई आदमी हो तो ऐसा। याद किया नहीं कि हाजिर।” तभी उनकी गरदन झटके से तनी—“क्यों रे रोपना, तूने तो कसम खाई थी न कि अब मलिकार के दरवाजे पर पाँव नहीं धरेगा? फिर कैसे दुलककर चल पड़ा?” भेदूसिंह को अपने लड़के की शादी की खूब याद थी। रोपना बहू की डोली के साथ बखरी तक नहीं आया था। समाचार से भेदूसिंह तिलमिला उठे थे, “साला नया जमाना क्या आया परखना-पौनी की आँखें चढ़ गई हैं।” उन्हें अपने लड़के की मौत पर उठी चर्चाएँ भी याद आई पर वे कुछ बोले नहीं। सोचा, अच्छा ही हुआ, साला डोली के साथ आता तो पाँचेक रुपए न्योछावर के देने ही पड़ते। आज यह मौका पाया है। कहार या नाई किसी को बुलाता तो चार-पाँच रुपए लगते। इसे तो खाना ही खिला देंगे तो खुश हो जाएगा।

“अच्छा-अच्छा, जब अपने से आ ही गया तो दीवार से सटकर आँखें मत मुलमुलाता रह। जाकर बब्बन की अम्मा से कहकर नाश्ता-पानी का इंतजाम करवाकर जल्दी आ। यह नहीं कि वहीं जाकर बैठ रहना और यहाँ हम लोग बैठकर झख मारते रहें। इज्जत का मामला है, समझे?”

भेदूसिंह लौट गए। रोपन खूब समझ गए।

“अच्छा-अच्छा ससुर नाश्ता-पानी, सुआगत-सत्कार खूब कर लो, कोई कसर न रहे। बस, दो घड़ी के मेहमान हो, क्या बोलूँ, नहीं तो ऐसा सुनाता कि तुम्हारे सात पुश्त की नानी मर जाती, पर मरे को मारने में क्या मर्दानगी!” रोपन एक छिन वहीं खड़े होकर अपनी अंगारक आँखों से भेदूसिंह को ताकते रहे, फिर बखरी में चले गए।

कुएँ से खींचकर बाल्टी का ताजा पानी वही लाए। दरवाजे की पलंगड़ी पर तोशक खिंच गई थी। सवार अपने पैर लटकाए बैठा था। रोपन ने पैरों के नीचे थाली रख दी। काले-काले पैरों को पखारते उनकी आँखें भरभरा आईं।

“अति आनंद उमगि अनुरागा। चरन सरोज पखारन लागा।”

रोपन बारी के कानों में ठाकुरबारी की घंटियाँ टुनटनाने लगीं। उनकी आँखों से आँसू टपक पड़े, पर उन्होंने तुरंत अपने को सँभाला और हाथ पोंछने के बहाने गमछे से आँसू भी पोंछ लिये।

अब काला सवार पैर ऊपर करके तकिए के सहारे उठंग कर लेट गया था।

“अब यहाँ क्या खड़े हो, जाओ देखो, नाश्ता-पानी ले आयो और खिलाने-पिलाने का इंतजाम करो।” भेदूसिंह बड़े रोब से बोले। उनकी आवाज में ठकुराई ठसक थी, जो हर क्षण यह दिखाना चाहती थी कि सारी दुनिया हाथ जोड़े उनके हुकुम का इंतजार करती रहती है।

रोपन बेचारे बड़ी साँसत में थे। वे टकटकी बाँधे अवतारी पुरुष के चेहरे को श्रद्धा से देखे जा रहे थे। उनको इस ढंग से टकटकी बाँधे देखकर एक क्षण के लिए कलंकी भगवान् भी घबड़ा गए।

“आपका नौकर तो बड़ा सरधावान् है।” उनके मुँह से निकला—रोपन निहाल हो गए तो भगवान् ने भगत को पहचान ही लिया! वे गद्गद चित्त से चल पड़े, अब उन्हें तनिक भी संदेह नहीं रहा कि आज कुछ अनहोनी घटकर रहेगी।

“हमारे सभी आदमी सरधावान् हैं, किसकी हिम्मत है कि नाही-नुकर करे।” चलते-चलते रोपन को भेदूसिंह की आवाज सुनाई पड़ी।

‘कैसा पापी है साला।’ वे मन-ही-मन सोचने लगे—‘ऐसे मौके पर भी आँख नहीं खुली। पापियों का हाल ही यही होता है। भगवान् सामने रहते हैं और साले जान नहीं पाते। यही तो ईश्वर की माया है।’

दिन भर रोपन बारी सब्जी, मसाला, दही, दूध के लिए दौड़ते रहे। सारा दिन खिलाने-पिलाने, पैर दबाने में बीत गया। उन्हें किसी ने खाने के लिए भी नहीं पूछा।

शाम हो पाई।

“तो सरकार हुकुम दिया जाए!” काला सवार हाथ जोड़कर भेदूसिंह से बोला, “चार-पाँच दिन में बाबूजी आकर आपसे बात कर लेंगे। मुझे तो लड़का देखना था। सो पा गया। मुझे लड़का बहुत पसंद है।”

“लड़का तो हीरा है पुरसोतम बेटा। अब अपने ही लड़के की क्या

तारीफ करूँ!” भेदूसिंह पुनः गर्वस्फीत नयनों से रोपन की ओर देखते हुए बोले, “अरे देवल के देखनहरू हैं। अब ई कहो कि देवल के साले हुए ये।” वे जोर से ताली पीटकर हँसे। काला सवार झेंप गया।

उसने घोड़े की बाग पकड़ी और उचककर चढ़ गया।

रोपन तो जैसे आसमान से गिरे। उन्हें लग रहा था कि धरती घूम रही है। ठाकुर का मकान चक्कर खा रहा है। वे हकबकाकर चल पड़े। घोड़ा बखरी की मोड़ के पास गली में आ गया था। रोपन दुलककर उसके पीछे आए।

“अरे सुनो-सुनो,” काला सवार उन्हें बुला रहा था, “यह लो भई, अपनी बखरीश, मैं तो भूल ही गया।”

रोपन घोड़े के पास खड़े हो गए। उनकी हथेली पर अठन्नी थी। सवार ने एड़ लगा दी, पर घोड़ा रुका रहा। उसने पूँछ उठाई और लीद कर दी, फिर चल पड़ा।

रोपन ने नाक पर गमछा लगा लिया।

“धत्त, साला कलंकी अवतार। हत्तरे की!”

तभी बखरी के दरवाजे से एक लड़का निकला। वह बाएँ हाथ में एक छड़ी पकड़े था। छड़ी उसके दोनों पैरों के बीच ठरठरा रही थी। दाहिने हाथ में एक पोटली थी।

“तुम रोपन हो न?” उसने एकदम पास आकर पूछा।

रोपन चिहुँककर उछल पड़े। वे भी नाक पर गमछा लगाए हतचेत भाव से खड़े थे।

“हाँ-हाँ, मैं ही रोपन हूँ। तुम कौन। हो भैया?” रोपन उस गोल-मटोल सुंदर लड़के को एक क्षण देखते रहे।

“मैं मुन्नू बाबू हूँ। यह लो मेरी अम्मा ने दिया है। तुम खाना नहीं खाए, है न? मेरी अम्मा ने कहा कि धीरे से रोपन को दे आओ और देखो, दादा न देखने पाएँ। लो भई, मैं तो चला। आज हमारा घोड़ा बीमार है।”

“घोड़ा?” रोपन फिर चौंके।

लड़के ने छड़ी की ओर इशारा किया “आज यह एकदम नहीं दौड़ा। हमारा दादा बहुत बुरा आदमी है। कहता था कि चाचा के देखनहर आए हैं। तुम शरारत मत करो। मैं दिन भर घर में रहा।”

रोपन ने लड़के को गोद में ले लिया तो यह विधवा बहूरानी का बेटा है! उन्होंने सोचा और जाने क्यों उनकी आँखों से झर-झर आँसू गिरने लगे।

“अरे, तुम दादा के डर से रोते हो?” लड़का तिनककर बोला, “ओ तुम्हारा कुछ नहीं कर सकता, तुम खाना ले जाओ?”

“और कुछ करें तो?” रोपन मुसकराए।

“वह क्या कर सकता है! मैं घोड़े-घोड़े पीटकर उसे ठीक कर दूँगा। हम लोग उससे अलग रहेंगे। वह मेरी अम्मा को भी सताता है। मैं साले को एकदम से ठीक करूँगा।” लड़के ने पोटली रोपन के हाथ में थमा दी और अपने काठ के घोड़े पर चढ़ गली में फुर से भागा।

अबकी रोपन काठ के घोड़े के पीछे दौड़ पड़े।

सा
अ

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

आधी रात का सपना

● राकेश भ्रमर

उ

सकी शादी तय हो गई थी। वह बहुत खुश था। खुश होने का कारण भी था। आज तक उसे किसी लड़की का प्यार नहीं मिला था। मन-ही-मन कई लड़कियों को प्यार किया था, परंतु किसी लड़की से अपने प्यार का इजहार नहीं कर पाया था। कोई लड़की भी उसकी तरफ आकर्षित नहीं हुई थी।

वह संकोची और बेहद शर्मीला था। लड़कियाँ उसे अच्छी लगती थीं। सुंदर लड़कियों को देखकर हर युवा की तरह उसके हृदय में भी तरंगें उठती थीं। मन में चंचलता व्याप्त हो जाती थी। आस-पास मधुर संगीत गूँजने लगता था। रातों की नींद उड़ जाती थी और जागती आँखों से वह सुनहरे रंगीन सपनों में खो जाता था, परंतु उसके प्यार का दुःखद पहलू यह था कि आज तक वह किसी भी लड़की से अपने प्यार का इजहार नहीं कर पाया। आँखों से भी संप्रेषित नहीं कर सका। परिणामतः किसी लड़की ने भी उसकी तरफ प्रेमभरी निगाहों से नहीं देखा। देखा भी होगा, तो वह महसूस नहीं कर सका और वह प्रेम से वंचित वीरान, ऊबड़-खाबड़, रेगिस्तानी मैदानों में तपती रेत में प्यार की प्यास लिये पच्चीस वर्षों तक भटकता रहा।

पच्चीस वर्ष तक किसी लड़की के प्यार से वंचित रहने के बाद जब उसके घरवालों ने उसकी शादी तय की तो उसके मन में फूल खिलने लगे, हृदय में संगीत गूँजने लगा और वह रात-दिन सुनहरे सपनों में खोया-खोया सा रहने लगा। बहुत अच्छे दिन थे उसके जीवन के। उसे विश्वास हो गया था कि अब वह कभी प्यार के सुख से वंचित नहीं रहेगा। पत्नी के रूप में उसे जीवन भर का प्यार मिलनेवाला था।

वह पढ़ने में बहुत तेज नहीं रहा, तब भी घिस-पिटकर बी.ए. कर लिया था। मेहनती था, इसीलिए रात-दिन किताबें घोंटकर एस.एस.सी. की ग्रैजुएट लेवल परीक्षा पास करके केंद्रीय सरकार के एक महत्त्वपूर्ण विभाग में नॉन-गजटेड अफसर हो गया था। उसके खानदान और समाज के लिए यह कम उपलब्धि नहीं थी। नौकरी मिलते ही उसके लिए इस तरह रिश्तों की बौछार होने लगी, जैसे उसके हाथों खजाना लग गया था, और लुटेरों ने उसे हथियाने के लिए चारों तरफ



सुपरिचित साहित्यकार। 'जंगल बबूलों के', 'हवाओं के शहर में' (गजल-संग्रह), 'उस गली में' (उपन्यास), 'अब और नहीं' (कहानी-संग्रह)। 'प्राची' मासिक पत्रिका का संपादन। पत्र-पत्रिकाओं में सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। दूरदर्शन लखनऊ तथा आकाशवाणी रामपुर, जबलपुर और मुंबई से रचनाओं का प्रसारण। संप्रति केंद्र सरकार में अधिकारी।

से आक्रमण आरंभ कर दिए थे।

उसके पिता हाल में ही एक सरकारी उपक्रम से सेवानिवृत्त हुए थे। माँ गृहणी थीं। जब उसकी शादी की बात चली तो आजकल के जमाने के चलन को देखते हुए बाप ने बेटे से पूछा, "तुम्हारा किसी लड़की के साथ कोई चक्कर तो नहीं है?"

उसके लिए यह अप्रत्याशित प्रश्न था। वह शरमा गया। बोला कुछ नहीं।

"बेटा, इसमें शरमानेवाली कोई बात नहीं है। तुम्हारी शादी के लिए ढेरों रिश्ते आ रहे हैं। हम उनसे बात करने से पहले जान लेना चाहते हैं, अगर तुम्हारी कोई पसंद हो तो पहले हम उस लड़की के माँ-बाप से बात करें।"

वह और ज्यादा शरमा गया, जैसे सचमुच ही उसकी कोई प्रेमिका थी। बोला नहीं।

बाप ने कहा, "बेटा, मैंने दुनिया देखी है। हम लोगों के जमाने की बात और थी। आज कोई भी लड़का-लड़की प्रेम से अछूता नहीं है। इसलिए शर्म छोड़कर अपने दिल की बात बता दो। हम तुम्हारी पसंद को प्रमुखता देंगे।"

वह बड़ी देर तक सकुचाता-शरमाता रहा। माँ-बाप पूछते रहे, तो हारकर उसने बता दिया कि उसकी कोई पसंद नहीं और आजतक उसने किसी लड़की को प्यार नहीं किया। यह बात अविश्वसनीय थी, परंतु माँ-बाप को मानना पड़ा कि उनका बेटा आधुनिक नहीं है।

उसकी सहमति से उसके माँ-बाप ने उसके लिए आनेवाले रिश्तों

को जाँचा-परखा और अंत में एक नौकरीशुदा लड़की का रिश्ता पक्का कर दिया। लड़की उसी शहर में किसी प्राइवेट फर्म में नौकरी करती थी। उसका बाप सरकारी नौकरी में द्वितीय श्रेणी अधिकारी था। लड़के की अच्छी नौकरी को देखते हुए वह शादी में अच्छे खासे दहेज के साथ-साथ कार भी देने को तैयार था।

एक दिन लड़कीवाले आए और रिश्ता पक्का कर गए। दो दिन बाद लड़केवाले लड़की देखने के लिए गए। उसने जब लड़की देखी तो उसकी सुंदरता से इतना अभिभूत हुआ कि उसने भगवान् को धन्यवाद दिया और अपने भाग्य को सराहा कि अबतक प्रेम से अछूता रहने के कारण ही शायद भगवान् ने उसके लिए एक अतीव सुंदर लड़की का रिश्ता भेजा है। उसे अपने भाग्य पर ईर्ष्या होने लगी।

यह रस्म भी सही ढंग से निपट गई। लड़के में कोई कमी नहीं थी, अतः लड़की भी मना नहीं कर पाई। माँ-बाप के सामने उसने 'हाँ' कर दी। लड़का तो पहले से ही तैयार बैठा था। एक सुंदर लड़की, जो अपने साथ लाखों का दहेज लेकर आनेवाली थी, का रिश्ता कोई मूर्ख भी नहीं टुकरा सकता था।

सारी बातें तय होने के बाद लड़का-लड़की को कमरे में अकेला छोड़ दिया गया, ताकि दोनों बात करके एक-दूसरे के मन को समझ सकें। उसका जैसा स्वभाव था, अंतर्मुखी लड़की से बस उसका नाम पूछ सका 'प्रियंका' नाम सुनते ही उसके हृदय में जैसे अजस्र प्रेम का स्रोत फूट पड़ा। कितना प्यारा नाम है। नाम में ही प्रेम टपकता है। शक्ल-सूरत और शारीरिक सौष्ठव में भी वह प्रेम की 'देवी' लगती है। वह बस धड़कते दिल से बीच-बीच में तिरछी नजर से उस दिव्य लड़की की मोहिनी सूरत को देख लेता और फिर उसका हृदय और अधिक गति से धड़कने लगता था। उसकी साँसें फूल जातीं। हृदय की गति और फूली साँसों को नियंत्रित करने के चक्कर में भूल जाता कि उसे प्रियंका से बातें भी करनी हैं, परंतु वह अंत तक प्रियंका से कोई बात नहीं पूछ सका, जैसे आज तक व ह किसी लड़की से अपने प्रेम का इजहार नहीं कर सका और लड़कियाँ उसके जीवन में रेगिस्तान में घास की तरह नदारद ही रहीं।

काफी देर की चुप्पी के बाद प्रियंका ने पूछा, "आपका नाम क्या है?"

"दीपेंद्र!" उसने मरी सी आवाज में बताया।

"ओ.के., नाम तो अच्छा है और वेतन कितना मिलता है?" प्रियंका ने मुँह बिचकाकर कहा, जैसे 'अच्छा' कहने के बावजूद उसे नाम अच्छा नहीं लगा था।

"अभी तो पहला साल है, यही कोई ३५ हजार मिल जाते हैं। सातवाँ वेतन आयोग लागू होनेवाला है। तब लगभग पंद्रह-बीस हजार तनख्वाह और बढ़ जाएगी।" दीपेंद्र ने प्रियंका को प्रभावित करने के लिए कहा।

"ओह! वेतन तो अच्छा-खासा है, परंतु..."

प्रियंका ने फिर मुँह बिचका दिया। प्रियंका के मुँह से 'परंतु' सुनकर दीपेंद्र ने निगाह उठाकर प्रियंका को देखा—उसके चेहरे के भावों से ऐसा लग रहा था, जैसे दीपेंद्र के वेतन से प्रभावित होने के बावजूद उसे कुछ अच्छा नहीं लग रहा हो। यह 'कुछ' क्या था, यह दीपेंद्र समझ नहीं पा रहा था, न उसकी पूछने की हिम्मत हो रही थी।

"ठीक है, देखा जाएगा, क्या होता है?" प्रियंका ने लगभग उदास स्वर में कहा। दीपेंद्र उसका मुँह ताकता रह गया। प्रियंका ने पूछा, "आपको कुछ पूछना है?"

"नहीं, परंतु आप बहुत अच्छी हो।" उसने किसी तरह दिल को कड़ा करके कहा।

"अच्छा!" प्रियंका ने हल्की उदास मुसकराहट के साथ कहा।

उनकी बातचीत समाप्त हो गई। प्रियंका की उदासी के बावजूद दीपेंद्र यह नहीं समझ पाया कि कहीं कोई गड़बड़ है। उसने इसे प्रियंका की स्वाभाविक उदासी समझा। वह तो प्रियंका की खूबसूरती में इतना डूब गया था कि कोई और चीज उसे दिखाई नहीं पड़ रही थी।

प्रियंका ने सबके सामने 'हाँ' कह दिया था। दोनों के परिवारवाले राजी थे। बस और क्या चाहिए था? दोनों तरफ से रिश्ता पक्का हो गया। आरंभिक रस्में भी फटाफट निबटा दी गईं। बस तिलक और विवाह की तिथियाँ तय करनी बाकी रह गई थीं।

दीपेंद्र खुशी में मग्न रात-दिन अपनी होनेवाली पत्नी के सपने देखने लगा। रोज रात को सपनों में प्रियंका एक परी बनकर धरती पर उतरती, उसको एक झलक दिखाती और फिर पलक झपकते गायब हो जाती। सपने में ही वह उसे चारों तरफ ढूँढ़ता, परंतु वह उसे न मिलती। तब वह चीखकर उसे पुकारता और उसी चीख में उसकी नींद खुल जाती। कुछ देर बाद उसे समझ में आता कि अरे, यह तो सपना था और आधी रात के सपने सच नहीं होते।

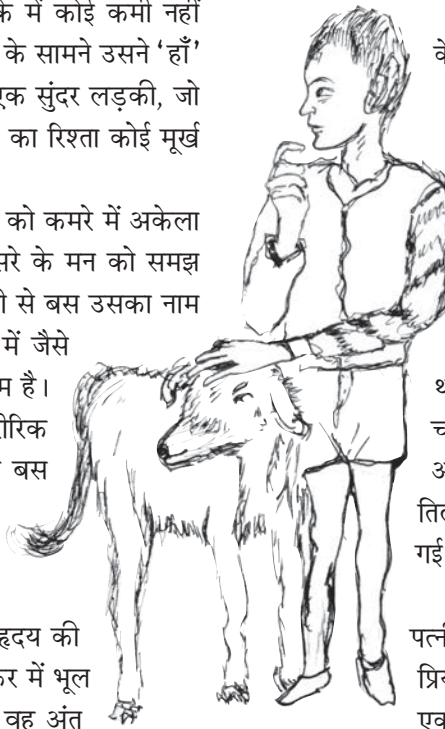
वह फिर से सो जाता। दिन में वह बहुत खुश रहता, क्योंकि प्रतिपल प्रियंका उसके खयालों में साथ रहती।

इन्हीं खुशियों भरे दिनों के बीच दोनों पक्षों ने तिलक और शादी की तिथियाँ भी तय कर ली थीं। अब उसे पक्का विश्वास हो गया था कि प्रियंका के साथ उसका बंधन अटूट है।

तभी एक दिन उसके मोबाइल पर किसी अनजाने नंबर से फोन आया। उसने कहा, "हैलो...कौन?"

उधर से आवाज आई, "आप दीपेंद्र बोल रहे हैं?"

"जी हाँ! बोल रहा हूँ। आप कौन...?"



उधर से शांत गंभीर स्वर में कहा गया, “मेरा परिचय आपके लिए जरूरी नहीं है। आप यह बताइए, आपकी शादी तय हो गई है?”

“हाँ, परंतु...” उसने कुछ कहना चाहा।

“मैंने कह दिया, परंतु-वरंतु कुछ नहीं। अब ध्यान से मेरी बात सुनो। आपकी शादी जिस लड़की के साथ होनेवाली है, वह आपसे शादी नहीं करना चाहती है?”

“क्यों?” उसे झटका सा लगा, “उसने तो स्वयं कहा है, सबके सामने!” न जाने उसमें कैसा साहस आ गया था कि इतना कह गया। उसे कुछ गुस्सा भी आ रहा था। कौन है यह लड़का या आदमी, जो उसका रिश्ता तुड़वाना चाहता है? क्या प्रियंका का कोई प्रेमी या दीवाना आशिक या दिलजला इकतरफा प्रेम करनेवाला कोई पागल।

“कहा होगा, परंतु उस ‘हाँ’ के कोई मायने नहीं हैं। ठीक से समझ लीजिए, वह लड़की आपसे शादी नहीं करना चाहती, बस। आप मना कर दीजिए।”

दीपेंद्र को गुस्सा आ गया। उसका घर बसने के पहले ही उजड़ने जा रहा था। तेज आवाज में बोला, “मैं क्यों मना कर दूँ? आप में इतना साहस है तो सामने आकर बात करिए, प्रियंका के माँ-बाप से जाकर रिश्ता तोड़ने की बात करिए या प्रियंका का अगर किसी के साथ संबंध है, तो स्वयं अपने माँ-बाप से जाकर कहे। मुझे क्यों बीच में ला रहे हो? और मैं बिना कुछ जाने-समझे क्यों रिश्ता तोड़ दूँ। आप प्रियंका को लेकर मेरे सामने आइए, तब मैं कुछ करूँगा या कहूँगा।”

उधर कुछ पल के लिए सन्नाटा छाया रहा, फिर शांत आवाज आई, “अगर प्रियंका से आपकी बात करवा दूँ, तो...?”

दीपेंद्र का दिल धड़क उठा। क्या सचमुच प्रियंका किसी और को प्रेम करती है। उसे लगा कि उसके हृदय पर बड़ा पर्वत टूटकर गिर गया है। उसकी आँखों के समक्ष आसमान हिलने लगा। बड़ी मुश्किल से उसने कहा, “हाँ, बात करवाइए।”

उधर कुछ खटपट हुई, फिर फोन पर एक आवाज उभरी, “हैलो, दीपेंद्र, यह मैं हूँ।” यह प्रियंका की आवाज थी, बहुत ही मधुर और कोमल, परंतु उस वक्त उसे बहुत कर्कश और कड़वी लगी।

वह समझ रहा था, यह उसके रिश्ते का अंत था। अतः उसे डरने की आवश्यकता नहीं थी। अनुचित कार्य करनेवाला व्यक्ति डरपोक होता है। उसने आत्मविश्वास से कहा, “यह सब क्या है प्रियंका?”

“कुछ नहीं, बस आपसे एक अनुरोध है।”

“क्या तुम किसी और को प्यार करती हो?”

“हाँ,” उसने स्वीकार किया।

“तो स्वयं माँ-बाप से क्यों नहीं कहा। बात को इतना आगे तक क्यों ले गई?”

“कहा था, परंतु वह हमारे रिश्ते के लिए नहीं माने।”

“तो अब कैसे मान जाएँगे?”

“मानेंगे नहीं, इसीलिए हम दोनों ने कोर्ट मैरिज कर ली है। आपकी तरफ से न हो जाएगी, तो हम अपनी शादी की बात बताकर

उन्हें मना लेंगे।”

उसका दिल पूरी तरह से टूट गया, परंतु अपने को संयत करके बोला, “ठीक है, अगर तुम स्वयं राजी नहीं हो तो तुमसे शादी करके मुझे कोई सुख नहीं मिलेगा, लेकिन एक बात बताओ, अगर हमने ‘न’ की और तुम्हारे घरवाले हमारे इनकार करने पर कहीं दहेज का मुकदमा तो दर्ज नहीं कर देंगे?”

“नहीं, ऐसा कुछ नहीं है, अगर ऐसा कुछ हो तो आप उनसे कहिएगा कि उन्होंने अपनी बेटी के प्रेम की बात क्यों छुपाई? बस वे चुप हो जाएँगे।”

शाम को घर जाकर उसने माँ-बाप को सारी बात बताई तो सभी बहुत दुःखी हुए। इतना अच्छा रिश्ता हाथ से निकल गया।

शाम को ही उसके बाप ने प्रियंका के पिता को अपने घर बुलवाया और बिना कुछ छिपाए दीपेंद्र से फोन पर हुई सारी बात बता दी। पहले ही सारी पोल खोल दी, ताकि प्रियंका का पिता अस्त्रहीन हो जाए और सचमुच उसका मुँह पीला पड़ गया। उसके मुँह से बस इतना ही निकला, “यह लड़की हमारी नाक कटवाकर ही मानेगी।”

“जब आप अपनी लड़की के प्रेम की बात जानते थे, तो क्यों जबरदस्ती उसकी शादी कर रहे थे?”

प्रियंका के पिता हताश स्वर में बोले, “जानता था, परंतु सोचा था किसी तरह उसकी शादी हो जाएगी तो वह पुराने प्रेम को भूलकर नई जिंदगी में एडजस्ट कर लेगी। परंतु वह बहुत चालाक निकली।”

“उसने शायद कोर्ट-मैरिज भी कर ली है।” दीपेंद्र के पिता ने बताया।

प्रियंका के पिता के पास कोई शब्द नहीं थे। वह लुटा-पिटा सा चला गया।

इस तरह दीपेंद्र का रिश्ता टूट गया। रिश्ता टूटते ही उसकी सारी खुशियाँ भी काफूर हो गईं। अब उसे लगने लगा था कि आधी रात के सपने भी सच होते हैं। सपने में प्रियंका रूपी जो परी उसको झलक दिखलाकर गायब हो जाती थी, वह वास्तविक रूप में कटु सत्य बनकर उसे डराने लगी थी।

प्रियंका अपनी एक झलक दिखलाकर उसकी निगाहों से हमेशा के लिए दूर हो गई थी।

उसने तय किया कि अब कभी शादी नहीं करेगा। उसके जीवन में न प्रेमिका का सुख है, न पत्नी का! किसी लड़की से प्यार वह कर नहीं सकता था और किसी अनजान लड़की से फिर रिश्ता तय करे, तो इसकी क्या गारंटी है कि प्रियंका की तरह वह किसी और लड़के को प्यार न करती हो?

सा
अ

९६-सी, प्रथम तल,
डी.डी.ए. फ्लैट्स, पॉकेट-४,
मयूर विहार फेज-१, दिल्ली-११००९१
दूरभाष : ९९६८०२०९३०

आचार्य विद्यानिवास मिश्र

लोक तथा शास्त्र का समन्वय

• अजयेंद्र नाथ त्रिवेदी

आ

चार्य विद्यानिवास मिश्र के साहित्य से परिचित सभी विज्ञान जानते हैं कि वहाँ लोक तथा शास्त्र की अनुपूरकता तथा उनके समन्वय की चर्चा अनेकत्र पाई जाती है।

लोक तथा शास्त्र सामान्यतः विपरीतार्थक शब्द समझे जाते हैं। हमारी सामान्य बुद्धि भी लोक को वाचिक परंपरा तथा शास्त्र को लिखित परंपरा में देखती है। हमने प्रायः यही समझा है कि लोक अपट्ट, निपट-निरक्षर जनसमूह की तथा शास्त्र विदग्धजनों की संपदा है। लोक तथा शास्त्र के इस द्वैध का प्रत्याख्यान आचार्य विद्यानिवास मिश्र ने अपने लेखन के माध्यम से किया है।

उन्होंने प्रमाण के साथ दिखलाया है कि भारत के विशेष संदर्भ में लोक तथा शास्त्र परस्पर पूरक रहे हैं तथा भारतीय मनीषा ने सदा ही इनका समन्वय करने का कार्य किया है हालाँकि इसके प्रति पाश्चात्य पंडित हमेशा ही द्वैत भाव रखते आए हैं।

लोक तथा शास्त्र के समन्वय के संबंध में आचार्य विद्यानिवास मिश्र के उद्गार मुख्यतः लोक के अर्थापकर्ष से उत्पन्न उनकी वेदना के उपजात हैं। 'लोक की पहचान' शीर्षक निबंध में मिश्रजी कहते हैं, '... लोक जिसे हमने अब उलटे अधिक संकुचित अर्थ दिया है—अशिक्षित, अर्धशिक्षित लोग; अंग्रेजी में फोक का पर्याय बनाकर उसे कुछ दयनीय बना दिया है। लोक का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है—जो कुछ दिखता है, इंद्रियगोचर है, प्रत्यक्ष है, सामने है। इसी से उसमें एक समकालीनता और प्रत्यक्ष विषयता का बोध होता है।'

अनेक भाषणों तथा विभिन्न निबंधों में पंडित विद्यानिवास मिश्र ने जोर देकर कहा है—'यद्यपि शुद्ध लोक विरुद्ध न हि करणीयं न हि करणीयम्।' यह श्लोक लोक तथा शास्त्र की समझ के संदर्भ में आचार्य मिश्र का घोषवाक्य ही बन गया है। प्रस्तुत विषय को पल्लवित करने के लिए आवश्यक है कि हम लोक तथा शास्त्र के संबंध में आचार्य मिश्र के विचारों को समझने की चेष्टा करें। इस प्रयोजन से हम उनके कतिपय निबंधों से इस आलेख को पुष्ट करना चाहेंगे। यों तो लोक को लेकर आचार्य मिश्र की एक पुस्तक 'लोक और लोक का स्वर' प्रकाशित हुई



है तथापि वर्तमान विषय को समझने के लिए हमें उनके अन्य निबंधों का भी सहारा लेना पड़ा है। जिन निबंधों में आचार्य मिश्र ने लोक तथा शास्त्र को लेकर चिंतन किया है, उनमें सबसे प्रधान है, 'भारतीय परंपरा के दो अक्षय स्रोत—लोक तथा शास्त्र'। उनके जिन अन्य निबंधों में लोक तथा शास्त्र विषयक चर्चा मिलती है, उनमें 'लोक और शास्त्र' तथा 'लोकमत और साधुमत' की चर्चा भी की जाएगी। इन निबंधों के माध्यम से प्रत्यक्षतः तथा अन्य अनेक निबंधों के माध्यम से प्रसंगतः आचार्य मिश्र ने लोक तथा शास्त्र की प्रकृति तथा भारतीय संस्कृति में चली आ रही उनकी समन्वयात्मक प्रकृति की पड़ताल की

है। लोक और उसके छंद को शास्त्रीय ढंग से परिभाषित करने के साथ ही आचार्य मिश्र ने शास्त्र और उसके अनुशासन का उल्लेखनीय उद्घाटन अपने व्याख्यानों में किया है। इस निबंध में हमने आचार्य मिश्र के विषय से संबंधित अन्य निबंधों की सहायता भी ली है।

आरंभ में हम डॉ. श्याम सिंह शशि द्वारा लिखे एक आलेख में उद्धृत आचार्य मिश्र का लोक और शास्त्र विषयक एक विचार प्रस्तुत करना चाहेंगे। आचार्य विद्यानिवास मिश्र कहते हैं—'लोक न प्राचीनता का बोधक है, न पिछड़ेपन का, न किसी सीमित अलग-अलग समुदाय का। लोक शास्त्र विरुद्ध नहीं, शास्त्रपूरक है, क्योंकि शास्त्र को शास्त्र का लोक विरुद्ध होना अभीष्ट नहीं है। एक तरह से लोक शास्त्र का ही प्रकृत रूप है और शास्त्र भी लोक-स्वीकृतियों का एक घनीभूत रूप है। इसलिए शिष्ट-से-शिष्ट, प्रबुद्ध-से-प्रबुद्ध समुदाय में, ऊँची-से-ऊँची जाति में ऐसे अनेक अनुष्ठान हैं, जो ठेठ वन्य या ग्राम्य जीवन में लगाव का संकेत देते हैं।'

उक्त उद्धरण एक प्रकार से लोक और शास्त्र के संबंध का घोषणा पत्र ही है। जिस प्रकार भ्रमवश हम आत्मा तथा परमात्मा के द्वैत का आश्रय लेकर तत्त्वबोध से दूर हो जाते हैं, उसी प्रकार हम लोक तथा शास्त्र में विरोध देखकर भारतीय संस्कृति के समन्वयवादी महनीय चरित्र से अपरिचित रह जाते हैं। आत्मा तथा परमात्मा जिस प्रकार अभिन्न हैं, लोक तथा शास्त्र भी उसी प्रकार अभिन्न हैं। यह अज्ञान कि आत्मा

परमात्मा से अलग है, हमें उसी प्रकार भ्रम में रखता है, जिस प्रकार हम लोक को कुछ कमतर तथा शास्त्र को कुछ बेहतर समझकर दोनों की परस्पर पूरकता से उत्पन्न भारतीय सांस्कृतिक चेतना से अनभिज्ञ होकर रह जाते हैं। इस अनभिज्ञता से समग्र की सच्ची तसवीर हमारे सामने उभर नहीं पाती, जो मानव मात्र में विद्यमान भावात्मक एकता को समझने के लिए बहुत आवश्यक है।

लोक तथा शास्त्र की अनुपूरकता को स्पष्ट करते हुए मिश्रजी कालिदास का निम्नलिखित श्लोक उद्धृत करते हुए कहते हैं—

द्विधा प्रयुक्तेन च वाङ्मयेन सरस्वती तं मिथुनं नुनाव।

संस्कार पूतेन वरं वरेण्यं वधूं सुखग्राह्य निबंधनेन॥

सरस्वती ने अपने को दो रूपों में बाँधकर शिव-पार्वती दंपती की स्तुति की। उसने संस्कारपूत भाषा में जहाँ वर शिव का वरण किया, वहीं लोकभाषा में वधू पार्वती का। इसका अभिप्राय यह है कि मांगलिक अनुष्ठान की संसिद्धि में मंत्र और लोक गायन दोनों की परस्पर पूरक भूमिका भारत में रही है। आज भी यदि सबसे अधिक परंपरानिष्ठ वर्गों का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया जाए तो पता चलेगा कि उनके वर्ग की स्त्रियों के आदिम-से-आदिम आचारों, अभिप्राय को किसी-न-किसी व्रत में संजोकर रखा गया है।

उक्त उद्धरण के साथ में मिश्रजी ने यह स्थापित करने की चेष्टा की है कि लोक तथा शास्त्र परस्पर अविरोधी हैं। एक प्रकार से वे अलग-अलग बौद्धिक क्षमता समूहों के लिए अलग-अलग निर्देश जैसे ही समझे जाने चाहिए। पाश्चात्य चिंतन के दुष्प्रभाव में हमें आज लोक तथा शास्त्र पृथक्-पृथक् लगने लगा है—यह स्थापना आचार्य मिश्र ने सप्रमाण की है। लोक को फोक का पर्याय समझने को भी वे एक बड़ी भूल मानते हैं। फोक मानव केंद्रित चिंतन है। इसमें मानव तथा मानववेतर सृष्टि को अलग-अलग देखा जाता है तथा मानवेतर सृष्टि को मानव के उपभोग का पदार्थ समझा जाता है। इसके विपरीत, भारतीय चिंतन में लोक का विस्तार चर-अचर, मानव तथा मानवेतर सृष्टि को परिवेष्टित किए हुए बताया गया है। भारतीय चिंतन तथा व्यवहार में मानवेतर सृष्टि मानव का उपभोग नहीं, उद्विकास में उसका प्रतिभागी है। लोक की भारतीय अवधारणा सर्वभूतवादी विचार का व्यवहार पक्ष है।

हमने लक्ष्य किया है कि आचार्य विद्यानिवास मिश्र का जीवन लोक तथा शास्त्र के बीच संतरण का एक जीवंत तथा अनुकरणीय आयाम है। वे गाँव में पले-बढ़े थे। वहाँ उन्होंने सामाजिक समरसता, पारस्परिक सौहार्द तथा अन्योन्याश्रितता का निकट स्पर्श पाया। लोकगीतों में वर्णित प्रकृति का, मानव तथा प्रकृति के बीच के घनिष्ठ संबंध का, धरती, दूब, अक्षत, नारियल आदि के प्रति मानवीय संवेदना तथा संसक्ति का अनुभव उन्हें वहीं हुआ। 'घर से घर से घर' नामक निबंध में उन्होंने सगर्व लिखा है कि उनका जन्म खुदाई के शिविर में नहीं हुआ, अस्पताल में नहीं हुआ, परिवार की बड़ी-बूढ़ियों के बीच घर में हुआ और उनके जन्म से ही पूरे गाँव में एक शोर हो गया। इस परिवेश में जनमे पंडितजी को एक गहन लोकदृष्टि मिली। उच्च अध्ययन के लिए वे पूर्व के ऑक्सफर्ड कहे



सुपरिचित लेखक। हिंदी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, जर्नलों में निबंध, शोध-आलेख प्रकाशित। संप्रति मुख्य प्रबंधक (राजभाषा), यूको बैंक।

जानेवाले इलाहाबाद विश्वविद्यालय गए। वहाँ गुरु के रूप में उन्हें पंडित क्षेत्रेशचंद्र चट्टोपाध्याय का सान्निध्य मिला। शास्त्र के अनुशीलन के लिए यह एक दैवदत्त अवसर था। आगे चलकर उन्हें महापंडित राहुल सांकृत्यायन तथा अज्ञेयजी के साथ काम करने का अवसर मिला। इस प्रकार उनकी शास्त्र-निष्ठा दृढ़ से दृढ़तर होती चली गई। वे वैदिक-अवैदिक, पौराण्य-पाश्चात्य चिंतन के निकट संपर्क में आए। लोक से आचार्य मिश्र का मन भावसिक्त हुआ तथा शास्त्र ने उन्हें एक: सूते सकलम् (सब एक ही सूत्र में आबद्ध हैं) की प्रतीति कराई।

आचार्य मिश्र ने कहा है कि लोक पूर्णता की आकांक्षा से अपना व्यापार करता है और परार्थता में अपनी सार्थकता पाता है। लोक का व्यवहारशास्त्र साझेदारी का रहा है। वह अपने भाव की अनुपूरकता के लिए कलाओं तथा प्रथाओं का आश्रय ग्रहण करता है। लोक का शिष्टाचार प्रकृत होता है, औपचारिक नहीं। आगे चलकर अपने उच्च अध्ययन के सिलसिले में उन्होंने आगमन-निगम, स्मृति-पुराणों तथा महाकाव्यों का अध्ययन किया। इस अध्ययन से उनका यह विश्वास दृढ़ हुआ कि इन सभी शास्त्रों में लोक-दृष्टि मुखर है और यही लोक-दृष्टि लोक-स्मृति में इन शास्त्रों की प्रतिष्ठा आधार रही है। इसी वजह से शास्त्रों की लोकग्राहिता भी बनी हुई है और लोक तथा शास्त्र की प्रतिस्पर्धा का अवसर यहाँ नहीं रहता। इस प्रकार आचार्य मिश्र भारतीय सभ्यता की निर्मिति में वे लोक तथा शास्त्र दोनों की परंपरा का परस्पर पूरक योगदान मानते हैं।

ध्यान से देखें तो हमारे अनुष्ठानों तथा हमारे व्यवहारों में लोक तथा शास्त्र सामान्य रूप से विद्यमान है। वैवाहिक अनुष्ठान को ही लें। मंडप में पंडितजी वर-वधू को लेकर वैदिक रीति से सप्तपदी की ओर बढ़ रहे हैं। ठीक उसी समय हजामिन टोकती है, ठहरिए पंडितजी! अभी अमुक संस्कार गीत नहीं हुआ है। सप्तपदी वहीं रुक जाती है। शास्त्रीय विधि-विधान पर लोकचर्या का अनुशासन चलता है। पंडितजी संस्कारगीत संपन्न होने तक सप्तपदी का अनुष्ठान स्थगित रखते हैं। यही नहीं, हम कहीं यात्रा पर निकल रहे होते हैं, सारे मुहूर्त सही हैं, सहसा एक बिल्ली रास्ता काट जाती है। यात्रा को थोड़ी देर के लिए रोक लिया जाता है। शास्त्रीय विधान को लोक विधान के ऊपर मानते हुए भी हम लोक की अवमानना करने का जोखिम मोल नहीं लेते। एक अन्य उदाहरण से इस बात को स्पष्ट करना चाहेंगे। नवजात के आयुष्य के लिए सभी वैदिक अनुष्ठान संपन्न हो जाने के बाद भी उसके माथे पर जब तक एक काला टीका न दे दिया जाता हो, उसकी आँखों में जब तक अंजन नहीं आँज दिया जाता हो, तब तक निरापदता आशंकित रहती है। इस प्रकार व्यवहार

में लोक तथा सिद्धांत में शास्त्र की अनुपूरकता का सम्मान भारतीय मन करता आया है।

हमारी परंपरा में शास्त्रों तथा लोक के बीच संवाद सदा से ही चलता आया है। हमारे युग में इस संवाद को अपनी कृतियों में तुलसीदास ने प्रभावी तरीके से आगे बढ़ाया है। अपने समय के शीर्ष शास्त्रज्ञ होने के बावजूद तुलसीदास ने रामचरितमानस की रचना करते समय शास्त्रों को ही प्रमाण नहीं माना, लोक के प्रति भी वे सदा सजग रहे। रामचरित मानस के लक्ष्मण-परशुराम संवाद में आई निम्नलिखित पंक्ति में शास्त्र में अभिव्यक्त लोक की परंपरा का उदाहरण इस प्रकार मिलता है—

इहाँ कुम्हड़बतिया कोऊ नहीं। जे तरजनी देखि मर जाहीं॥

इस पंक्ति में तुलसीदासजी लक्ष्मणजी के मुख से परशुरामजी को उद्घुष्ट करके कहलवाते हैं कि हम भी कोई कोंहड़े का ताजा फूल नहीं है, जो तर्जनी देखकर मर जाएँगे। लोक परंपरा में यह मान्यता है कि लौकी या कोंहड़े के फूल को यदि तर्जनी से निर्देशित किया जाए है तो वह फूल मुरझा जाता है तथा फल में नहीं बदल पाता। इस लोक मान्यता का तुलसीदासजी द्वारा किया गया उल्लेख यह संकेत करता है कि भारतीय परंपरा में लोक तथा शास्त्र में समन्वय तथा सहअस्तित्व कोई नई बात नहीं रही है।

लोक तथा शास्त्र के सामंजस्य के उदाहरण हमें कालिदास की कृतियों में भी मिलते हैं। उनके नाटकों में निरक्षर तथा नारीपात्र जहाँ प्राकृत बोलते हैं, वहीं राजा और विदग्ध जन संस्कृत का प्रयोग करते हैं। भारतीय चिंतन के शीर्ष ग्रंथ हैं उपनिषद्। उपनिषदों में घोर शास्त्रीय चर्चा भी लोकजीवन के उपकरणों यथा बैलगाड़ी, कुम्हार का चाक, दांपत्य जीवन के प्रसंगों, पशु-पक्षियों के व्यवहार की उपमा तथा प्राकृतिक घटनाओं के साक्ष्य को आधार बनाकर हुई है। शास्त्र की मर्यादा यदि एक रेखांकन है, तो उसके रिक्त स्थलों को लोकाचार के रंग उन्मीलित करते हैं, श्रमसिक्त जीवन को काम्य बनाए रखते हैं। शास्त्र यदि मेधा है तो लोक-जीवन की अलंकृति है। इन दोनों के सामंजस्य का उद्देश्य जीवन में घुसे-पैटे विवाद तथा नकारात्मकता का परिहार करना है। इस सामंजस्य के क्रम में होनेवाले आदान-प्रदान के संबंध में पंडितजी कहते हैं—‘किसने किससे लिया, इसका कोई महत्त्व नहीं रहता। पारंपरिक दृष्टि से महत्त्व रहता है कि किस मन से लेते हो किस मन से देते हो, लेते समय बड़े होकर नहीं लेते तो वह लेना अभाव हो जाता है, देते समय छोटे होकर नहीं देते तो वह देना विराट् बन जाता है। (हमारी परंपरा के दो अक्षय स्रोत : लोक और शास्त्र)

लोक तथा शास्त्र के सामंजस्य के उदाहरण हमें कालिदास की कृतियों में भी मिलते हैं। उनके नाटकों में निरक्षर तथा नारीपात्र जहाँ प्राकृत बोलते हैं, वहीं राजा और विदग्ध जन संस्कृत का प्रयोग करते हैं। भारतीय चिंतन के शीर्ष ग्रंथ हैं उपनिषद्। उपनिषदों में घोर शास्त्रीय चर्चा भी लोकजीवन के उपकरणों यथा बैलगाड़ी, कुम्हार का चाक, दांपत्य जीवन के प्रसंगों, पशु-पक्षियों के व्यवहार की उपमा तथा प्राकृतिक घटनाओं के साक्ष्य को आधार बनाकर हुई है। शास्त्र की मर्यादा यदि एक रेखांकन है, तो उसके रिक्त स्थलों को लोकाचार के रंग उन्मीलित करते हैं, श्रमसिक्त जीवन को काम्य बनाए रखते हैं। शास्त्र यदि मेधा है तो लोक-जीवन की अलंकृति है।

लोक तथा शास्त्र की परस्परपूरकता को पहचानने तथा उसकी पहचान कराने की दिशा में आचार्य विद्यानिवास मिश्र के प्रयासों से लोक-संस्कृति के अध्ययन को एक नई दिशा मिली है तथा एक समरस समाज के निर्माण में लोक तथा शास्त्र का महत्त्व रेखांकित हुआ है। वे मानते हैं कि इन दोनों के समन्वय से भारतीय कलासृष्टि तथा काव्यसृष्टि महीनी हो उठी है। श्रीराम परिहार ने एक आलेख में आचार्य मिश्र को उद्धृत करते हुए कहा है, ‘यह समझना कि लोक-साहित्य की रचना असंस्कृत जीवन की रचना है, सबसे बड़ा प्रमाद होगा, क्योंकि संस्कृति का जो शाश्वतमय राग हो सकता है, वही लोक-जीवन का श्वास बनकर मुखरित होता है। संस्कृति का क्षणभंगुर उपकरण लोक-जीवन तक नहीं पहुँच सकता और इसीलिए लोक-जीवन के श्वास-प्रश्वास से मुखरित होनेवाला स्वर जिस राग को गुंजरित करता है, वह संस्कृति का सबसे मर्मभूत, सबसे अनश्वर और सबसे शिवप्रद राग होता है।

राजेंद्रनाथ चतुर्वेदी ने एक आलेख में सासनी में आयोजित हुए एक लोक विज्ञान प्रशिक्षण शिविर में आचार्य मिश्र के वक्तव्य का उल्लेख इस प्रकार किया है, ‘मैं समझता हूँ, जब प्रत्यावलोकन करता हूँ अपने जीवन पर, तो जितना कुछ मैं हूँ, उसमें से लगता यही है कि अस्सी प्रतिशत योगदान उस गाँव का है, उस गाँव की गूँजों का है, जहाँ में पैदा हुआ। अगर वे गूँजें मेरे साथ नहीं रहती तो मैं जो कुछ भी हूँ, वह नहीं हो पाता। घर पर संस्कृत पढ़ाई जाती थी। जब छुट्टी होती थी, तब मैं ननिहाल जाता था। ननिहाल में मेरी नानी उस बड़े गाँव की एक तरह से लोकविद्या की परम आचार्या थीं। सब लोग आचार-विचार, पर्व-त्योहार, रीति-रिवाज के बारे में पूछने आते थे। गीत लिखने-लिखाने आते थे। नानी से माँ ने भी पाया और माँ के कंठ से मैंने लोकगीत सुने। जब कोई उत्सव होता था, जिस सुरुचि और सौष्ठव से आयोजन होते थे, उसकी मन पर गहरी छाप है।’ यह छाप लेकर आचार्य विद्यानिवास मिश्र देश-विदेश हो आए। लोकजीवन की इसी गहरी छाप से उनका व्यक्तित्व बना है।

सा
अ

मुख्य प्रबंधक ‘राजभाषा’
यूको बैंक, सेंट्रल स्टाफ कॉलेज
जी.ई.-८, सेक्टर-३, साल्ट लेक,
कोलकाता-७८१००३ (प. बंगाल)
दूरभाष : ६२८९३५२७३४

दुनिया भ्रम के गीत

● प्रशांत उपाध्याय

बर्फ सी जमने लगी
भावनाएँ आ गई किस अक्ष में
बर्फ सी जमने लगी अब वक्ष में!

चेतना पर भ्रांति के
पहरे घने हैं
प्रीति के स्वर भी हुए
अब अनमने हैं
बंद हैं अनुभूतियाँ सब कक्ष में!

हाथ थामे आस का
चलती उदासी
आँख में चुभने लगा
हर स्वप्न बासी
सर्जनाएँ भी खड़ीं प्रतिपक्ष में!

कामना को मुँह चिढ़ाता
रोज दर्पण
माँगता बैसाखियाँ
लँगड़ा समर्पण
नेकियाँ औंधी पड़ीं प्रत्यक्ष में!

संबंध कपास हुए
गूँगे बहरे लँगड़े लूले
अब अहसास हुए
पथरीले से भाव सभी
संबंध कपास हुए!

पासे पलटे देर लगी न
अपनों की फिर टेर लगी न
दुश्मन के दुश्मन थे जो भी
अपने खास हुए!

काँधे पर जो चढ़े बड़े वे
अपनों से जो लड़े बड़े वे
लटका लड़ियाँ गले छद्म की
नव विन्यास हुए!

बेबस हुए सत्य के दशरथ
दीखे नहीं न्यास का भी पथ
विश्वासों में राम लखन को
फिर वनवास हुए!

जीवन हुआ दुकान
पाँव पसारे बैठ गया है
चिंतन में सुनसान
उल्लासों की बस्ती के सब
खँडहर हुए मकान!

मर्यादा का मैला आँगन
कोई नहीं बुहारे
नफरत के घर वधू प्रीति की
कैसे वंश सँवारे
गोद पुण्य की खेल रही है
पापों की संतान!

कर्तव्यों की दीवारों पर
हैं मकड़ी के जाले
अधिकारों के मुद्दे हमने
दिनभर खूब उछाले
दोषारोपण के गढ़ते हम
नित्य नए प्रतिमान!

पलभर की खुशियों की खातिर
कितने द्रंढ जिए
भ्रम के जंगल-जंगल भटके
मन विश्वास लिये
अंदर-अंदर आग सुलगती
अधरों पर मुसकान!

उगता दिन तो द्वारे-द्वारे
रोज निराशा बाँटे
भीड़-भाड़ के बीच घूमते
कितने ही सन्नाटे



सुपरिचित कवि-लेखक। 'शब्द की आँख में जंगल' (नई कविता-संकलन), 'गीतों में झाँकते दोहे' (दोहा-संकलन) 'थोड़ी-बहुत गजल की कोशिश' तथा विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में दो सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित एवं आकाशवाणी, दूरदर्शन से रचनाओं का प्रसारण। 'व्यंग्य सम्राट', 'साहित्य सम्मान' सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

कुंठाओं के राशन वाली
जीवन हुआ दुकान!

जिंदा रहें उसूल
दीवारों पर चिपक गई जब
बस अनजानी भूल
साँस-साँस हो गई जंगली
नागफनी के शूल!

राजमहल की राहों पर हम
निश-दिन गए छले
प्रीत उन्हें भी रास न आई
जिनके मिले गले
उपहासों की ब्याज मिली और
दर्द हो गया मूल!

काम कभी भी आ न सके हैं
जीवन के छल-छंद
छोटी सी अपनी चादर में
अनगिन हैं पैबंद
दरवाजे पर कीचड़ फैला
आँगन बिछे बबूल!

जय-जय वाले नारों का अब
दौर गया है बीत
ज्यादा देर नहीं सुनाती है
दुनिया भ्रम के गीत
घायल होते पाँव झूठ के
जिंदा रहें उसूल!

आँगन में उग आए जंगल
चोरी-चोरी चुपके-चुपके
आँगन में उग आए जंगल
मगर प्रगति की राहों पर
हम चले जा रहे पैदल-पैदल!

आलपिनो सी हुई साजिशें
गुब्बारे से नेह
विकलांगों सी दीख रही है
रिशतों वाली देह
संन्यासी सा भटक रहा मन
रीता-रीता लिये कमंडल!

गली-गली में घूम रहे हैं
आतंकी संत्रास
कमरों में अब छिपे हुए हैं
डरे-डरे अहसास
मानवता के द्वारे-द्वारे
बिखर गया है कीचड़-दलदल!

फँसे हुए सपनों के पंछी
षड्यंत्रों के जाल
राजनीति तो तिलक लगाए
सिर्फ बजाती गाल
सूख गई आशा की नदिया
बहती थी जो कल-कल-कल-कल!

सा
अ

३६४, शंभू नगर
शिकोहाबाद-२८३१३५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८९७३३५३८५

छातेवाले बाबा

• इंदु सिन्हा

में

जब भी टी.वी. सीरियल तारक मेहता का उल्टा चश्मा देखती हूँ। मुझे पोपटलाल के छाते को देखकर मेरे दादा के भाई हरिराम याद आ जाते हैं। उनको देखकर लगता था कि कभी सुख-सुविधा अपने जीवन में देखी ही नहीं। मेरे दादा पूरी सुख-सुविधाओं के बीच रहे, लेकिन हरिराम दादा गरीब रहे। हालाँकि दोनों का काम एक ही था, पंडिताई का, मेरे दादा पुश्तैनी मंदिर की देखभाल और पूजा पाठ करते रहे, यही बात वह अपने भाई हरिराम से भी कहते थे। लेकिन हरिराम की पत्नी मतलब हमारी दादी को यह बात नहीं सुहाई। उनको लगता कि मेरे दादा बड़े भाई हैं, जीवनभर उनके अधीन रहना पड़ेगा। यही सोचकर हरिराम को विवश होकर दादा से अलग होना पड़ा। जायदाद में सिर्फ मंदिर ही था। मकान किराए का ही था। इसलिए हरिराम कुछ हिस्सा ले नहीं पाए। मेरे दादा उनको साथ रखना चाहते थे। वह चाहते थे कि दोनों भाई मंदिर की देखभाल, पूजा-पाठ साथ ही करते रहें। लेकिन ऐसा नहीं हो सका।

मेरे दादा ने धीरे-धीरे मकान आदि खरीदे लिये थे, मंदिर के चढ़ावे से, यजमानों की भीड़ भी जमा कर ली थी।

हरिराम दादा के पास एक छाता था। जिसे वह हमेशा प्यार से रखते, जैसे पोपटलाल रखता है। छाती से लगाए रखते, किसी को छूने नहीं देते, यहाँ तक कि पत्नी-बच्चों को भी नहीं। पूजा पाठ करने भी जाते तो छाता साथ रहता था। धूप, गरमी, बरसात, सभी मौसम में। यही देखकर लोग उनका असली नाम तो भूल ही गए थे। 'छातेवाले बाबा' कहकर बुलाते थे। धीरे-धीरे बाबा के नाम से पहचाने जाने लगे।

वैसे तो छाता इतने प्यार से रखा जाता था। कभी मरम्मत की जरूरत ही नहीं पड़ती थी। कभी-कभी मामूली मरम्मत की जरूरत पड़ती तो दादा खुद ही ले जाते थे। किसी को छाता लेकर नहीं जाने देते थे।

एक बार उनके बेटे दयाराम को कहीं जाना पड़ा, तेज धूप थी, जाना जरूरी था। उसने सोचा, छाता ले जाता हूँ। यह सोचकर उसने दादा से छाता माँगा था। दादा बोले, कहाँ तक जाना है? नौकरी का इंटरव्यू देना था पापा, दयाराम



संप्रति स्वतंत्र लेखन।

सुपरिचित लेखिका। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। 'श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान सम्मान' तथा 'शब्द साधिका सम्मान' सहित कई सम्मानों से सम्मानित। रेलवे की सेवा के दौरान (रतलाम मंडल) रेलवे के जे.सी. बैंक में निदेशक रहीं।

अपने पापा के पैर छूकर बोला।

'अरे वाह, ले ले छाता।' दादा खुश होकर बोले।

दयाराम आश्चर्य में था, छाता लेने के लिए पास बनी कोठरी में गया, वापस आया तो देखा, दादा भी तैयार हैं चलने के लिए।

'पापा आप!' दयाराम बोला।

'में भी चलूँगा, छाता लेकर कौन, चलेगा? दादा बोले बड़ा छाता है न, हाथ दुखने लगेंगे तेरे। जल्दी कर इंटरव्यू का टाइम क्या है?' जी ग्यारह बजे, दयाराम ने कहा। चल अभी निकलते हैं। दादा बोले—अरे, दही-शक्कर तो खाते जाओ, दादी कटोरी में दही-शक्कर ले आई। पल्लू में बँधे पाँच रुपए दयाराम के हाथ में देकर बोलीं, ये रुपए भी रख ले, पैदल जाने की बजाय रिक्शा कर लेना।

'अरे नहीं माँ, पापा जा रहे हैं साथ, पैदल निकल जाएँगे। पाँच रुपए मिठाई के लिए रख लेते हैं।' दयाराम ने माँ के पैर छुए।

'खुश रहो, भगवान् करे तू सफल हो' माँ ने दयाराम के सिर पर हाथ फेरा।

पैदल चलते-चलते दादा के उपदेश कम नहीं हुए थे। बेटा, छाता बड़ी मुश्किल से एक-एक रुपए जोड़कर खरीदा है। तुम छाते की कीमत तभी समझोगे, जब अपने कमाई से छाता खरीदोगे।

दयाराम शांति से उपदेश सुनता रहा और चलता रहा। दादा की बातों को वह उपदेश ही बोलता था।

लगभग आधे घंटे बाद कंपनी के ऑफिस में पहुँच गए थे। बाहर



लंबी बेंच लगी हुई थी। बहुत से लड़के-लड़कियाँ पहले से ही मौजूद थे। दयाराम भी उनकी कतार में जाकर बैठ गया। दादा अपने छाते को सँभालकर दूर रखी कुरसियों पर बैठ गए।

लगभग घंटाभर के लंबे इंतजार के बाद दयाराम का नंबर आया। इंटरव्यू से फ्री होकर दयाराम बाहर आया। दादा तुरंत दौड़ते हुए आए।

‘क्या हुआ, बेटा, कैसा रहा इंटरव्यू?’ दादा ने पूछा। अच्छा हुआ पापा, सप्ताहभर बाद घर के पते पर सूचना भिजवा देंगे चलो।” तेरा इंटरव्यू अच्छा हुआ, खुशी की बात है दादा बोले।

चल कुछ खा लेते हैं, तू घर से निकला था तो नाश्ता भी नहीं किया था। दादा बोले— नहीं पापा, घर चलकर ही खाएँगे, माँ भी इंतजार कर रही होगी। दयाराम बोला।

‘चल बेटा, फिर घर चलते हैं।’ कहकर दादा ने छाता खोल दिया। दोनों पैदल चलते-चलते बातें करते-करते घर पहुँच गए।

लगभग सप्ताहभर बाद घर के पते पर जब सूचना मिली कि दयाराम को नौकरी के लिए चुन लिया है। घर में खुशी की लहर दौड़ने लगी। लेकिन दयाराम की माँ उदास थी।

‘माँ उदास क्यों हो?’ दयाराम ने माँ से पूछा।

‘कौन उदास है?’ दादा मिठाई लेकर आते हुए बोले, आखरी शब्द उन्होंने सुन लिया था।

‘माँ उदास है पापा।’ दयाराम बोला।

‘किसलिए दयाराम की माँ?’ दादा बोले।

‘जिस कंपनी में नौकरी लगी है वह बाहर दूसरे शहर में भी भेज सकते हैं।’ दयाराम ने बताया।

‘तो क्या हुआ? तरक्की करेगा बेटा।’ दादा बोले।

‘अभी नहीं भेज रहे हैं, माँ, साल-दो साल बाद भेजेंगे, तुम अभी क्यों चिंता कर रही हो?’ दयाराम माँ के आँसू देखकर घबरा गया था। तू बोले तो नहीं करूँगा नौकरी। दयाराम बोला।

‘फिर क्या करेगा?’ अब दादा ने बोला।

‘पंडिताई कर लूँगा आपके साथ।’ दयाराम बोला।

‘बेटा, ये दो कमरे का ही कच्चा-पक्का मकान बन पाया है। रोटी का जुगाड़ ही हो पाता है।’ दादा बोले, तेरी पढ़ाई-लिखाई तो खुद तुमने मेहनत से की है बच्चों की ट्यूशन लेकर। दादा बोले, आप लोगों का साथ है मुझे, यही बहुत है आपका आशीर्वाद बना रहे। दयाराम भावुक हो गया। चिंता मत कर, दादा ने बेटे को गले लगा लिया।

यह किस्सा जब उसे माँ ने सुनाया था, तब उसे भी गर्व हुआ था पापा पर। माँ अपनी मूल बात पर आ जाती है, बोलती है, जब तू पेट में था, उस समय आठवाँ महीना लगा था। जून का पहला हफ्ता था, गरमी भयंकर पड़ रही थी, दो दिनों से बादल गहराते फिर भाग जाते। हल्की बूँदाबाँदी भी हुई थी, पर उसने उमस को ज्यादा बढ़ा दिया था। सरकारी अस्पताल बड़ी दूर था, पैसे के लिए रुपए नहीं थे, जो थोड़े बहुत थे, वह तेरे पापा ने फल-फ्रूट में खर्च कर दिए थे।

माँ रसोईघर में चली गई बढ़िया खाना बनाने, खुश थी, बेटे की नौकरी जो लग गई थी।

आज उसने दयाराम की पसंद की चीजें बनाई थीं। आलू की सब्जी तरीवाली, काशीफल की सब्जी और पूरी, सूजी का हलवा। दोनों बाप बेटे साथ ही खाना खाने बैठे। दादा दयाराम को उपदेश दे रहे थे, छाते को सँभालकर रखो, वह हमारा हर जगह साथ देता है।

छाते के विषय में माँ भी पति का साथ देती थी। छाता खरीदना कितना कठिन काम है, यह काम तुम्हारे पापा ने कैसे किया होगा, तुमको पता नहीं शायद। छाते में हमें कोई लापरवाही नहीं बरतनी चाहिए। यह सुख-दुःख में काम आता है।

‘तुमको पता है?’ माँ बोली।

‘क्या माँ?’ दयाराम छाता-पुराण से ऊबने भी लगता था।

‘पूरी कॉलोनी में इस छाते जैसा कोई छाता नहीं है।’ माँ गर्व से बोली, ‘तुझे पता है छाता कैसे खरीदा गया था?’ माँ ने अपना खाना भी थाली में परस लिया था। दादा खाना खाकर अंत में हलवा खा रहे थे। वह मीठा खाने के बीच में नहीं खाकर आखिरी में खाते थे। हलवा खाते-खाते भी वह पत्नी बातें ध्यान से सुन रहे थे और गर्व से उनका चेहरा चमक उठा था।

‘कैसे माँ?’ दयाराम बोला।

‘जब तू पेट में था, तब यह छाता आया था।’ माँ ने राज खोला।

‘क्या इतना पुराना?’ दयाराम आश्चर्य में था।

‘लगभग तेईस साल पुराना छाता।’ दयाराम के चेहरे पर आश्चर्य ही आश्चर्य था।

माँ अकसर ही बोलती है, पुराना छाता है, सँभालकर रखो, इतना पुराना है, यह पता नहीं था। इसके पीछे की कहानी भी आज पता चल रही है, जब उसे नौकरी मिली है।

माँ बोली, यह मकान तो किसी यजमान की भेंट है। वे बाहर जा रहे थे, तो यह हमें दे गए थे। हम उनके किराएदार थे। तब से वह नहीं लौटे हैं। लेकिन छाता तो बड़ी मुश्किल से ही खरीदा है।

तुझे पता है, छाता खरीदने के लिए कई बार में खाने में कटौती करनी पड़ती थी। कभी रोटी नमक-तेल से खाते थे। सब्जी नहीं बनाते थे। तेरे पापा भी बड़े स्वाभिमानी हैं। दान-दक्षिणा में जो मिल जाए, वही लेते थे। अलग से कुछ नहीं माँगते थे। कभी एक रुपए, पचास पैसे पूजा-पाठ में लोग आरती की थाली में रख देते थे। तुम में इतना दम नहीं होगा बेटे, कहकर माँ जोर-जोर से हँसने लगी।

यह किस्सा जब उसे माँ ने सुनाया था, तब उसे भी गर्व हुआ था पापा पर। माँ अपनी मूल बात पर आ जाती है, बोलती है, जब तू पेट में था, उस समय आठवाँ महीना लगा था। जून का पहला हफ्ता था, गरमी भयंकर पड़ रही थी, दो दिनों से बादल गहराते फिर भाग जाते। हल्की बूँदाबाँदी भी हुई थी, पर उसने उमस को ज्यादा बढ़ा दिया था। सरकारी अस्पताल बड़ी दूर था, पैसे के लिए रुपए नहीं थे, जो थोड़े बहुत थे, वह तेरे पापा ने फल-फ्रूट में खर्च कर दिए थे। गर्भवती को फल, फ्रूट खाने रहना चाहिए। पूजा में भी जो फल आते थे, वह सब पापा मुझे खिला देते थे। उन दिनों तेरे पापा भी कभी-कभी बेगानी शादी में अब्दुल्ला दीवाना वाली हरकत भी कर देते थे। कहीं पूजा पाठ में नहीं बुलाया गया हो तो भी अचानक पहुँच जाते थे। तेरे पापा को तो सभी जानते थे।

फिर कुछ-न-कुछ भोज देकर पापा को विदा करते थे। माँ बोली, ऐसे करते-करते जून का आखिरी सप्ताह आ गया था। उस दिन बारिश के आसार नजर आ रहे थे, सुबह से हल्के-हल्के दर्द भी हो रहे थे, तेरे पापा को चिंता थी कि अस्पताल कैसे जाएँगे? भीगने का डर था, पानी आ गया तो? तेरे पापा बहुत देर तक घर में बेचैन से घूमते रहे, फिर पुराना संदूक निकाला, जो उन्होंने अपनी धार्मिक पुस्तकों के लिए रखा था, उसमें एक छोटी सी डिब्बी थी, जिसमें कुछ रुपए रखे थे। जो उन्होंने अचानक आई किसी विपदा के लिए जोड़े थे। कुल पच्चीस रुपए निकले।

फिर वह बिना कुछ कहे घर से निकल गए थे। लगभग घंटेभर बाद जब वह वापस आए तो छाता साथ था। तेरे पापा ने मुझे पैदल ही लेकर सरकारी अस्पताल पहुँचे थे। फिर भी तीन रुपए बचे थे। ऐसे छाता घर आया था, समझे बबुआ। तेरा जन्म भी उसी रात को हो गया था तीस जून।

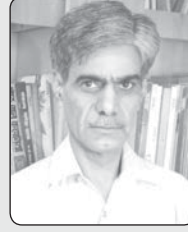
एक किस्सा यह भी बताती है माँ, कि छाते की बात कॉलोनी को पता चली, सब लोग पापा का छाता देखने आते थे। इतना बड़ा छाता किसी के पास नहीं था। चमकीला काला कपड़ा, हेंडिल बड़ा सुंदर था छाते का। सभी छाते की तारीफ करते। अस्पताल में भी छाते ने साथ दिया।

सरकारी अस्पताल में खाना-पीना तो मिलता था, दूध, चाय पापा बाहर टपरी से लाते थे। तब छाते में ही आना-जाना होता था। हमारे सुख-दुःख का छाता है, यह हमारे परिवार का सदस्य है।

कई बार टूट-फूट भी हुई है छाते में, बहुत बार कमानियाँ टूट गई थीं, कपड़ा भी बहुत पुराना हो गया था। लेकिन पापा ने एक कारीगर पकड़ा हुआ था, वह कम पैसे में छाते को ठीक कर देता था और कई बार ऐसे ही ठीक कर देता था, पापा का आशीर्वाद ले जाता था। पापा को बोला भी वो, अब इस छाते का सामान नहीं मिलता। क्यों फालतू समय खराब करते हो। पापा नहीं सुनते थे, जैसे-तैसे समझा-बुझाकर उसे ठीक करवा लेते थे।

एक दिन रात में बहुत बारिश हो रही थी। कॉलोनी के खरे चाचा बीमार पड़ गए थे। रात में तबीयत ज्यादा बिगड़ गई थी। बेटा-बहू घर पर नहीं थे। पत्नी बहुत पहले मर चुकी थी। सात साल का पोता घर पर

इस अंक के चित्रकार



शशिमूषण बडोनी

सुपरिचित रचनाकार तथा चित्रकार। रेखांकन व छायांकन में रुचि। पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर रेखांकन प्रकाशित। पंजाब कला साहित्य अकादमी जालंधर द्वारा साहित्य के लिए विशिष्ट साहित्य सम्मान एवं पर्वतीय लोक विकास समिति उत्तराखंड द्वारा सम्मानित।

संपर्क : आदर्श विहार
ग्राम व पो.-शमशेरगढ़
देहरादून-२४८०१४
दूरभाष : ९४१०५९०१००

ही था, बच्चा क्या करता? दौड़कर अपने घर आ गया। बोला, दादा की तबीयत खराब है, पापा इस छाते में उन्हें डॉक्टर के पास ले गए थे। खरे चाचा की जान बच गई थी। उन्हें दमे का दौरा पड़ा था।

ऐसे ही दयाराम को छाते का इतिहास पता चला था। दयाराम की नौकरी लगने से घर की दशा सुधारने लगी थी।

दयाराम ने कई बार कहा, पापा नया छाता ले लो। बाजार में बहुत से छाते आ गए हैं।

पापा बिल्कुल भी नहीं सुनते थे। उन्होंने मना किया हुआ था कि वह उनके लिए छाता नहीं खरीदें। छाते को दीवार पर टाँगे रखते धूल-मिट्टी को साफ करते रहते। एक बार तो धूल साफ करते-करते एक दो कमानि भी हाथ में आ गई थीं। कारीगर के पास गए तो उसने साफ मना कर दिया।

‘पंडितजी अब ठीक नहीं हो पाएगा। अब रहने दो।’

लेकिन उन्होंने जैसे-तैसे कमानियाँ अटकाकर उसे वहीं टाँग दिया, उसका चिकना काला कपड़ा हाथ लगाने से ही फटने लगता, छाता नहीं हटा, वहीं डटा रहा।

सालभर बाद दयाराम को कंपनी ने बाहर भेज दिया। वह वहाँ शहर में बस गया। धीरे-धीरे वहीं का होकर रह गया। वह जब भी घर आता, पापा-मम्मी को अपने साथ शहर चलकर वहीं रहने को बोलता। लेकिन मिट्टी, आँगन, दीवारों का लगाव कहाँ पीछा छोड़ता है? दोनों वहीं रहे शहर नहीं गए, दयाराम के पास।

दयाराम की स्मृतियों में आज भी छाता बसा रहता है, सपने में कभी-कभी ये शब्द सुनाई पड़ते हैं ‘छातेवाले बाबा’।

सा
अ

अरावली अपार्टमेंट,
रतलाम (म.प्र.)
दूरभाष : ९८२७५८९६१२

कविताएँ

• विवेक गौतम

छत

कितने दिनों बाद याद आया
छत ने बुलाया था, देख जाओ
पर भूल गया।

आज आया हूँ
तो हैरान हूँ छत देखकर
छत भी हैरान है
मुझे देखकर
मुस्कराई भी नहीं छत
कि मैं ही हूँ।

गमलों में लगे पौधे
कानाफूसी करने लगे
कि मैं...

सचमुच हूँ भी या नहीं
मुसकराए वे भी नहीं।

हाल-चाल पूछा
तो कहने लगी छत—
देखो आस-पास की छतों को
कितना ऊपर उठ गई हैं।

एक मैं हूँ
जो जहाँ की तहाँ हूँ।

नजर दौड़ाई
तो बात सचमुच सही थी
छतें छू रही थीं आसमान।

अगले ही दिन मैंने
आग लगा दी
पिताजी की यादों को

फूँक दिया अम्मा की आस को
तार-तार कर दिया
छत के विश्वास को
बेच डाली छत
कि कौन सुनेगा रोज-रोज
छत के उलाहने।

आज पिताजी का श्राद्ध है
और छत का भी।

आज सब कुछ है मेरे पास
सुख है, सुविधा है
पिता की आत्मा का साया है
पर नहीं है, तो नहीं है
पिता की डाली छत।

हो भी तो आखिर क्यों
पिता के साथ-साथ
वह भी तो कर रही है आज
आसमान से बातें।

जंगल जिंदा है

जंगलों से निकलकर
तुमने...
धीरे-धीरे
बहुत तरक्की कर ली।

पहले धरती नापी
फिर चाँद
और...अब
घूम आए हो मंगल तक।

पत्थर लेकर
नंगे बदन



सुपरिचित कवि एवं शिक्षाविद्। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। हिंदी अकादमी दिल्ली सरकार की संचालन समिति के सदस्य रहे। रेडियो, टेलिविजन सहित राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मंचों से काव्य प्रस्तुतियाँ दीं। 'उद्भव' सामाजिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक संस्था के अध्यक्ष और अनेक सम्मानों से अलंकृत।

जानवरों के पीछे-पीछे दौड़नेवाले फिर कटे।

पेड़ों और गुफाओं में
ठिकाना तलाशते-तलाशते
हथियार तराश लिए
आग ढूँढ़ी
पाल लिए जानवर
बना लिए घर
और...
घरों के आस-पास खेत।

जंगलों से निकलकर
लगा लिए दरवाजे घरों में
शहर बसा लिये।

अब...
जंगल बाहर था
और तुम घर के भीतर
बददुआएँ तो लगनी ही थीं
नया घर बसाते-बसाते
पुराने घर को
कोई भूल जाता है क्या ?

शहर फैले
सड़कें बनीं तो जंगल कटे
पटरियाँ और हवाई पट्टियाँ बिछीं
तो जंगल...

पढ़े-लिखे जंगली
एक दूसरे को कुचलने लगे
इस्पाती मशीनों से।

जंगल से भागे थे
लेकिन...
भीतर का जंगल फैलता चला गया
भीतर और भीतर तक।

आदमी कितने भी घर बना ले
पहले घर के आशीष, यादें
दिल से निकलती कब हैं ?
इसीलिए...
जंगल आज भी जिंदा है।

हथियार पत्थर के नहीं तो क्या
पत्थर के दिल तो हैं
और इन पत्थरों की रगड़ से
पैदा हुई आग
भस्म करने को काफी है।

(सा.अ.)

सुपर एच.आई.जी. फ्लैट नं-४
संचार विहार अपार्टमेंट्स
ब्लॉक-सी, सेक्टर-६२, नोएडा (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९१११७०८३२

ध्वनि रोगकारक एवं रोगशामक

• दुर्गादत्त ओझा

ध्वनि एवं शब्द विज्ञान : वेदों की देन

सं पूर्ण विश्व में केवल भारतीय मनीषियों ने ही शब्द एवं ध्वनि के बारे में सूक्ष्म अध्ययन कर इस विज्ञान का महत्त्व समूचे जगत् को बताया है। इसकी संपुष्टि बृहदारण्यक उपनिषद् में महर्षि याज्ञवल्क्य एवं राजा जनक के संवाद से होती है। उसमें पूछा गया कि मनुष्य अपने कार्य-कलाप के लिए किस ज्योति को रखता है—किंज्योतिरयं पुरुषः? इसमें उल्लेख किया गया कि यह सूर्य की ज्योति ही है। इसके सहारे मनुष्य अवस्थिति प्राप्त करता है। अपने विभिन्न कार्यों के लिए दूर-दूर तक जाता है तथा वहाँ से लौटकर भी आता है। बृ.उ. ३.४.३.२—

*आदित्यज्योतिः सम्राडिति होवाच। आदित्येनैवायं
ज्योतिशाऽऽस्ते पल्ययते, कर्म कुरुते, विपर्येति।*

वस्तुतः ध्वनि कानों द्वारा ग्रहण की गई एवं मस्तिष्क को पहुँचाई गई एक संवेदना है। हमें ध्वनि का बोध कानों से ही होता है, परंतु इतने से ही ध्वनि की धारणा पूरी नहीं होती है। जब हम कोई ध्वनि सुनते हैं तो हमें यह आभास होता है कि यह किसी-न-किसी द्रव्य में उत्पन्न हुई है और एक दिशा विशेष से कुछ दूरी तय करके हमारे पास पहुँच रही है। एक अन्य विचार के अनुसार हवा में बदलते हुए दबाव, जिसे हम सुन सकते हैं, को ध्वनि कहते हैं। ध्वनि का पर्याय है 'नाद'। भारतीय संगीताचार्यों ने नाद की उत्पत्ति, उसके प्रकारों एवं प्रभावों के बारे में विस्तृत रूप से लिखा है। इस प्रकार सारा विश्व ही नादात्मक एवं ब्रह्मस्वरूप है। मस्तिष्क में विभिन्न विचारों, अनुभूतियों, परिस्थितियों के लिए अलग-अलग केंद्र रहते हैं। शिशु के दिमाग में तो एक-एक शब्द का अर्थ एकत्र होता जाता है और वह अपनी अभिव्यक्ति के लिए उनका उपयोग करना प्रारंभ कर देता है तथा उसकी वाणी विकसित होने लगती है। इस प्रक्रिया में शब्दों का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है।

ध्वनि का रोगशामक या औषधीय रूप

जैसा कि विदित ही है, संगीत की ध्वनि में लय तथा तालमेल होता है, जिससे हमें आनंद की अनुभूति होती है। मनोचिकित्सक आजकल कई रोगों का उपचार संगीत के द्वारा ही करते हैं। स्नायुतंत्र के कई रोगों के लिए एकाग्रता पाने के लिए तथा तनाव मुक्ति के लिए संगीत बहुत लाभकारी है। प्रत्येक वाद्य की एक अपनी ध्वनि होती है तथा अलग-अलग ध्वनियाँ व्यक्ति के मन पर पृथक्-पृथक् प्रभाव डालती हैं। न्यूयॉर्क



सुप्रसिद्ध विज्ञान-लेखक। पुरातन एवं अद्यतन विज्ञान विषयों पर हिंदी में ५० से अधिक पुस्तकें, सहस्राधिक विज्ञान आलेख एवं शताधिक शोध-पत्र प्रकाशित। पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर लेखन, अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों एवं सम्मानोपाधियों से अलंकृत।

में अल्बर्ट आइंस्टाइन कॉलेज ऑफ मेडिसन में ध्वनि तरंगों के उपयोग से विविध रोगों का उपचार किया जाता है। अमेरिका के डॉ. हर्षिसन ने विभिन्न प्रकार की ध्वनियों की सहायता से ही अनेक असाध्य रोगों की सफल चिकित्सा की है। उनका मानना है कि भक्ति संगीत की ध्वनि तरंगों के संप्रेषण से अद्भुत कार्य किए जा सकते हैं। आधुनिक शोध परिणामों से यह सिद्ध हुआ है कि पेड़-पौधे भी संगीत के प्रभाव से अधिक फलते-फूलते हैं।

संगीत सभी प्रकार के तनाव कम करके शरीर, मन आदि को विश्राम प्रदान करता है तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। आज विदेशों में तो ऐसे टेप मिलने आरंभ हो गए हैं, जिनमें वृक्षों की सरसराहट, निर्झर का निनाद, हल्की-हल्की रेत से टकराकर लौटनेवाली लहरों की ध्वनियाँ एवं सुरीला संगीत होता है, जिसके कारण व्यक्ति आनंदित हो जाता है।

वैदिक ध्वनि में रोगोपचारक क्षमता—शब्दों में बड़ी विलक्षण शक्ति होती है। जहाँ तक स्वास्थ्य रक्षा में शब्द या नाद शक्ति के उपयोग की बात है, तो पूर्व से पश्चिम में कोई भी इससे अछूता नहीं है। शब्द शक्ति के रूप में आयुर्वेद में मंत्रोपचार का पूरा अध्याय है। स्वास्थ्य रक्षा एवं शब्द लहरी के संबंध में वैज्ञानिक प्रमाण इसी शताब्दी के मध्य से प्रारंभ हुए। इसके महत्त्वपूर्ण परिणाम भी प्राप्त हुए हैं। भारतवर्ष में वेद-मंत्रों का पाठ भी लयबद्ध तरीकों से होता रहा है, जिसका मस्तिष्क पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत लाभदायक होता है। अमेरिका के ओहायो विश्वविद्यालय के प्रो. एच.एस. शर्मा ने इस संबंध में शोध कार्य करके सफलता भी प्राप्त की है। प्रो. शर्मा के दल के अन्य सदस्यों, यथा—डॉ. एलन एवं डॉ. स्टीफन के शोध के तुलनात्मक अध्ययन से विदित होता है कि पाश्चात्य रॉक/पॉप संगीत को लगातार सुनने से कई असाध्य रोग से ग्रस्त हो जाते हैं, जबकि

सामवेद, यजुर्वेद एवं ऋग्वेद की ऋचाओं के लयबद्ध गायन से मस्तिष्क, मन, हृदय, फेफड़े एवं त्वचा की कोशिकाओं में सकारात्मक प्रभाव देखे जा चुके हैं।

प्रो. शर्मा तथा उनके अध्ययन दल ने अपना यह प्रयोग पहले चूहों पर करके देखा। उन्होंने कुछ चूहों को एक माह तक पश्चिमी देशों का शोर भरा संगीत सुनाया तथा दूसरी ओर कुछ चूहों को वेद की ऋचाओं का गायन। उन्होंने दोनों में प्रभावशाली परिवर्तन प्रेक्षित किए। उन्होंने पाया कि जो चूहे पश्चिमी संगीत सुन रहे थे वे कई रोगों से ग्रसित हो गए और जो मंत्रोच्चारण सुन रहे थे, वे स्वस्थ तो हुए ही, साथ में उनमें स्फूर्ति भी कई गुना बढ़ गई। प्रो. शर्मा के शोध परिणामों से दो बातों को बल मिलता है। एक तो तेज तथा उच्च डेसिबल की ध्वनि स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होती है। तथा दूसरा संगीत की रोगों की रोकथाम और उपचार में महती भूमिका होती है। वस्तुतः संस्कृत भाषा एवं वैदिक ध्वनि की यह विशेषता है कि इनका अर्थ एवं भाव नहीं जानने पर भी सुननेवाले को आनंद की अनुभूति होती है।

अग्लि मंत्र शक्ति का महत्त्व—भारतीय वैदिक संस्कृति में अनादिकाल से शुभकार्य की शुरुआत मंत्रोच्चारण से होती है। वेदों में अलग-अलग समय पर किन-किन मंत्रों का उपयोग होना चाहिए, उल्लेख किया गया है। परंतु आज विडंबना है कि पश्चिमी देशों में हमारी सदियों से सँजोकर रखी गई इस महान् वैदिक संपत्ति पर अनुसंधान कार्य हो रहे हैं, उनका महत्त्व समझा जा रहा है और हम इस संपदा को व्यर्थ में ही खो रहे हैं।

वस्तुतः मंत्र शब्द संस्कृत भाषा से आया है। यदि हम इसे दो अक्षरों में विभाजित करें तो 'मन' का अर्थ होता है—मनन करना, चिंतन करना, सोचना, प्रतिबिंबित करना आदि तथा 'त्र' का अर्थ है—रक्षा, अर्थात् मंत्र का अर्थ हुआ, जिसके मनन से रक्षा होती है।

आज का आधुनिक साइंस कहता है कि पूरा अस्तित्व अलग-अलग स्तर पर होनेवाले स्पंदन ऊर्जा की प्रतिध्वनि (Reverberations of energy, different levels of Vibrations) है। जहाँ कहीं भी स्पंदन है, वहाँ निश्चित ही ध्वनि है। अर्थात् यह पूरा अस्तित्व एक प्रकार का नाद या ध्वनि है अथवा यह सम्मिश्र नाद का जटिल मिश्रण (The whole existence is a kind of sound or a complex amalgamation of sounds) है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि पूरा अस्तित्व अनेक मंत्रों का मिश्रण है। मंत्र भी अनेक प्रकार के होते हैं तथा हर मंत्र एक विशेष प्रकार की ऊर्जा शरीर के विशेष भाग में सक्रिय करता है। आज का साइंस भी मानने लगा है कि मंत्रों से निकली ध्वनि शरीर की कोशिकाओं को पुनर्यौवन प्राप्ति में सहायता करती है।

विश्व में हर चीज परमाणु से बनी है। हर परमाणु में एक नाभिक

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान यह मानता है कि आणविक या सूक्ष्मतम स्तर पर हमारा शरीर 'एटॉमिक पार्टिकल्स' की स्पंदित होनेवाली प्रणाली (Our bodies are systems of vibrating atomic particles) है। हमारा शरीर ध्वनि के स्पंदनों का प्राप्तकर्ता और प्रेषण करने वाली प्रणाली है। ये आवृत्तियाँ (फ्रीक्वेंसीज) हमारे शरीर के अलग-अलग भाग पर उपचारात्मक तथा पुनरुज्जीवन के कार्य में सहायता करती हैं।

या न्यूक्लियस होता है, जिसमें 'न्यूट्रॉन' एवं प्रोटॉन होते हैं, जिसमें इलेक्ट्रॉन होते हैं, जो न्यूक्लियस या केंद्रक के चारों ओर घूमते रहते हैं। ये घूमनेवाले इलेक्ट्रॉन एक स्पंदन का निर्माण करते हैं और यह स्पंदन एक लहर बन जाती है। इसी लहर को हम अपनी भाषा में 'रूप' या पदार्थ की अवधारणा कहते हैं। जब कभी स्पंदन (Pulse), लहर (Wave) और रूप (Form or Matter) होता है, वहाँ ध्वनि निर्माण होती है और इसी को 'लॉ ऑफ ट्रिनिटी' कहते हैं।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान यह मानता है कि आणविक या सूक्ष्मतम स्तर पर हमारा शरीर 'एटॉमिक पार्टिकल्स' की स्पंदित होनेवाली प्रणाली (Our bodies are systems of vibrating atomic particles) है। हमारा

शरीर ध्वनि के स्पंदनों का प्राप्तकर्ता और प्रेषण करने वाली प्रणाली है। ये आवृत्तियाँ (फ्रीक्वेंसीज) हमारे शरीर के अलग-अलग भाग पर उपचारात्मक तथा पुनरुज्जीवन के कार्य में सहायता करती हैं। ये आवृत्तियाँ हमारे आकाशीय तत्त्व पर भी असर करती हैं तथा मानसिक उपचार में भी सहायक सिद्ध हुई हैं। जैसा कि विदित है, मंत्रों की संस्कृत भाषा 'ध्वनि संवेदनशील' अर्थात् Sound Sensitive है तथा यह गहन शोध करके बनी भाषा (Sanskrit is a discovered language) है। इसमें उच्चारित ध्वनि का महत्त्व अर्थ से ज्यादा है। अतः इस भाषा में रटने का महत्त्व अधिक है। यदि अर्थ समझ में न भी आए तो उसके उच्चारण से होनेवाली ध्वनि सकारात्मक प्रभाव डालती है।

वाक् शुद्धि भी जरूरी

ऊर्जा को संतुलित रखने के लिए ध्वनि महत्त्वपूर्ण है। सही किस्म के स्पंदन की बुनियाद जरूर होनी चाहिए। वाक् शुद्धि इसका एक महत्त्वपूर्ण अंग है। वाक् शुद्धि का मतलब है कि आप जिन ध्वनियों का उच्चारण करते हैं, उन्हें शुद्ध बनाना। उचित शब्दों को बोलना और सही तरह की ध्वनियाँ सुनना भी महत्त्वपूर्ण है। कटु या अपशब्द और कर्कश ध्वनियों से दूरी जरूरी है। इससे तंत्रिका तंत्र अपने आस-पास के जीवन के प्रति संवेदनशील हो पाएगा। क्या आपने ध्यान दिया है कि जब आप कुछ घंटों तक गाड़ियों या मशीनों की कर्कश आवाजें सुनते हैं, तो आपको अपने आसपास की साधारण चीजों को भी ठीक से समझने में मुश्किल होती है। जबकि किसी दिन अगर आप सिर्फ घर पर बैठे कुछ शास्त्रीय संगीत सुन रहे होते हैं, उस दिन आपका दिमाग तेज और सजग होता है और बहुत आसानी से चीजों को समझ लेता है। अगर आप सचेतन होकर इन चीजों पर अधिक से अधिक ध्यान दें या कम-से-कम इस बारे में सचेत रहे कि किस तरह की ध्वनि आपके सिस्टम को नुकसान पहुँचा रही है और किस तरह की ध्वनि से लाभ होता है, तो आप उन ध्वनियों को शुद्ध कर लेंगे, जिनका आप उच्चारण करते हैं।

अगर आप ध्वनियों को एक खास तरीके में व्यवस्थित करें, तो उसका एक खास असर होता है। हजारों सालों से ध्वनि का इस्तेमाल उपचार में होता रहा है। एन.सी.बी.आई. में प्रकाशित शोध के अनुसार कम आवृत्ति की ध्वनि फाइब्रोमायल्लिजिया के मरीजों के लिए फायदेमंद साबित होती है। ध्वनि की अलग-अलग आवृत्ति अलग-अलग तरह के इमोशंस पैदा करती है। इम्युनिटी बढ़ाने के साथ अनिद्रा भी दूर कर सकती है। सेंटर फॉर न्यूरोएकॉस्टिक रिसर्च के जेफरी थॉम्पसन के अनुसार इसकी ध्वनि की फ्रीक्वेंसी जितनी कम होती जाती है (४००-५०० हर्ट्ज) आप उसके असर को अपनी मांसपेशियों, जोड़ों और हड्डियों तक में महसूस कर सकते हैं।

तन-मन-मस्तिष्क का सुकून

ध्वनि की विविधताओं को उपचार के लिए इस्तेमाल करने के मकसद से खास तरह के केंद्र बनने लगे हैं। इन 'होलिंग सेंटर्स' पर ध्वनि के माध्यम से आधुनिक जीवन की समस्याओं को हल किया जाता है, जिसमें अहम है तनाव और उत्फुल्लता की कमी। इन सेंटर्स पर विशेष फ्रीक्वेंसी पर घटियाँ, धातु के बोल और गॉनस (एक तरह का वाद्य तंत्र) ऊर्जा का संतुलन बनाए रखने या ऊर्जा खाली करने के लिए इस यंत्र में ध्वनि और कंपन पैदा कर घड़ी की सुई की दिशा में घुमाते हैं। क्रिस्टल से बने बोल अलग-अलग स्पंदन (वाइब्रेशन) पैदा करने के लिए ही बने होते हैं। इन्हें शरीर के चक्र का ध्यान करके उस चक्र के सामने ले जाकर ध्वनि उत्पन्न की जाती है। बीमारी के हिसाब से उस चक्र को ऊर्जा देने के लिए ध्वनि उत्पन्न करते हैं। सिंगिंग बोलस, हिमालयन सिंगिंग बोलस, तिब्बतियन सिंगिंग बोलस के साथ ही क्रिस्टल बोलस अलग-अलग तरीके से मन-मस्तिष्क और शरीर को सुकून पहुँचाते हैं।

शंख की ध्वनि उपयोगी

भारतीय संस्कृति में पूजा करते समय शंख रखा जाता है तथा इसकी भी देवपूजा से पूर्व पूजा होती है। हमारी वैदिक परंपरा में किसी भी धार्मिक कार्य के शुभारंभ तथा नीराजन (आरती) के समय शंख ध्वनि की जाती है। भारत के उच्चकोटि के वैज्ञानिक प्रो. जगदीश चंद्र बसु ने अपने प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि जहाँ तक शंख की ध्वनि (नाद) जाती है, वहाँ उस नाद को सुनकर अनेक विषाक्त कीटाणु नष्ट हो जाते हैं, फलस्वरूप वहाँ की वायु शुद्ध हो जाती है। इसके अलावा भी कई फायदे हैं—

१. शंख बजाने से शरीर में ऑक्सीजन की कमी कभी नहीं होगी। फेफड़े स्वस्थ रहेंगे।

२. रोजाना शंख बजाने से गुदाशय की मांसपेशियाँ मजबूत बनती हैं। शंख बजाना मूत्रमार्ग, मूत्राशय, निचले पेट, डायाफ्राम, छाती और गरदन की मांसपेशियों के लिए बहुत बेहतर साबित होता है। शंख बजाने से इन अंगों का व्यायाम हो जाता है।

३. शंख बजाने से श्वास लेने की क्षमता में सुधार होता है। इससे हमारी थायरॉइड ग्रंथियों और स्वरयंत्र का व्यायाम होता है और बोलने से संबंधित किसी भी प्रकार की समस्या को ठीक करने में मदद मिलती है।

४. शंख बजाने से झुर्रियों की परेशानी भी कम हो सकती है। जब हम शंख बजाते हैं, तो हमारे चेहरे की मांसपेशियों में खिंचाव आता है, जिससे झुर्रियाँ घटती हैं।

५. शंख (Conch) में सौ प्रतिशत कैल्सियम होता है। रात को शंख में पानी भरकर रखें और सुबह उसे अपनी त्वचा पर मालिश करें। इससे त्वचा संबंधी रोग दूर हो जाएँगे।

६. शंख बजाने से घर की नकारात्मक शक्तियाँ दूर हो जाती हैं।

७. ऐसी मान्यता है कि नियमित शंख बजानेवालों को कभी हृदय रोग नहीं होता है। क्योंकि इससे सारे ब्लॉकज खुल जाते हैं तथा रोग की तीन क्रियाएँ—कुंभक, रेचक, प्राणायाम एक साथ होने से फेफड़े स्वस्थ रहते हैं।

८. नासा के शोध के अनुसार शंख बजाने से खगोलीय ऊर्जा का उत्सर्जन होता है, जो हानिकारक जीवाणुओं का नाश कर ऊर्जा एवं शक्ति का संचार करता है।

९. शंख में कैल्सियम, गंधक व फास्फोरस होने से यह हड्डियों को मजबूत करने में सहायक होता है, अतः शंख में पानी भरकर रखने से और उसका सेवन करने से लाभ होता है।

ध्वनि का रोगकारक/कष्टकारी रूप

जब मनुष्य कोई कार्य कर रहा होता है अथवा आराम कर रहा होता है, उस समय एक मच्छर या मक्खी की लगातार भिनभिनाहट भी उसको कष्ट पहुँचाती है। यदि प्रातः काल या सोने से पूर्व ध्वनि विस्तारक यंत्र द्वारा आपको तीव्र ध्वनि सुनने को बाध्य किया जाए तो निश्चित है आपकी मनःस्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। आज शोर का चक्रव्यूह हमें चारों ओर से घेरे हुए हैं। वस्तुतः तीव्र, अनावश्यक, असुविधाजनक एवं अनुपयोगी आवाज ही 'शोर' कहलाती है। शोर जहरीले रसायनों की तुलना में किसी भी अर्थ में कम प्रदूषण नहीं फैलाता है। भौतिक विज्ञान की दृष्टि से, शोर एक ऐसी ध्वनि है, जिसमें कोई क्रम नहीं होता है और जिसकी अवधि लंबी अथवा छोटी तथा आवृत्ति परिवर्तनीय होती है। मनोविज्ञान की दृष्टि से, कोई भी ऐसे ध्वनि जो श्रोता को अप्रिय लगे, चाहे वह कितना ही अच्छा गायन या संगीत भी क्यों न हो, शोर माना जाता है। इलेक्ट्रॉनिक संचार व्यवस्था में शोर को एक क्षोभ की संज्ञा दी गई है, जो संचार में व्यवधान उत्पन्न करती है।

ध्वनि प्रदूषण से तात्पर्य वातावरण में छोड़ी गई या उत्पन्न की गई ऐसी ध्वनि से है, जो अवांछनीय होने के साथ प्रतिकूल व हानिकारक प्रभाव भी उत्पन्न करती है। शोर का निर्धारण व्यक्ति विशेष की मानसिक अवस्था का पैमाना होता है। जैसे एक व्यक्ति के लिए जो ध्वनि संगीत है, वही दूसरे के लिए शोर हो सकती है। इतना ही नहीं, वही संगीत एक व्यक्ति को दिन के समय कर्णप्रिय लग सकता है, किंतु महत्त्वपूर्ण कार्य करते समय या सोते समय अरुचिकर लग सकता है। अतएव कोई ध्वनि शोर है या नहीं, यह उसके कारण, तीव्रता, आवृत्ति निरंतरता अथवा व्यवधान आदि पर निर्भर करता है।

शोर भी पर्यावरण के संदूषण का एकरूप है तथा यह स्रोत के

हट जाने से स्वतः समाप्त हो जाता है। शारीरिक विज्ञान, इलेक्ट्रॉनिकी तथा ध्वानिकी की दृष्टि से शोर एक ऐसा संकेत है, जिसकी कोई सूचना नहीं होती है तथा जिसकी तीव्रता समय के मुताबिक अनियमित रूप से बदलती है।

ध्वनि प्रदूषण के प्रभावी कारक

बढ़ती जनसंख्या एवं आधुनिकीकरण ध्वनि प्रदूषण के प्रमुख कारक हैं। पिछले कुछ वर्षों में औद्योगिक संस्थानों, आवागमन एवं मनोरंजन के साधनों के अत्यधिक विकास के कारण मनुष्य को लाभ कम तथा हानि अधिक हुई है। सामान्यतया ध्वनि या शोर प्रदूषण को दो भागों में विभक्त किया जाता है, यथा—

प्राकृतिक—बादलों की घड़घड़ाहट, बिजली की कड़क, तूफानी हवाएँ, ऊँचे पहाड़ों से गिरते पानी की आवाज, भूकंप, ज्वालामुखियों के फटने से उत्पन्न भीषण कोलाहल एवं अन्य जीवों की आवाजें इसमें सम्मिलित की जाती हैं।

कृत्रिम—उद्योगीकरण तथा नगरीकरण के साथ-साथ सुख-सुविधाओं के अनेक साधन पर्यावरण में ध्वनि प्रदूषण के प्रमुख कारक हैं; इनमें मुख्य हैं—उद्योग-धंधे, मशीनें, मनोरंजन के साधन, सामाजिक क्रिया-कलाप, स्थल परिवहन के विभिन्न साधन।

आजकल जेट विमान के अलावा सुपर-सोनिक विमान भी आकाश में उड़ रहे हैं, जो ध्वनि की गति से ज्यादा तेजी से उड़ते हैं। ये विमान वायुमंडल में प्रतिघाती तरंगें उत्पन्न करते हैं, जो अत्यधिक ऊर्जायुक्त होती हैं तथा बहुत दूर तक फैलकर सर्वाधिक ध्वनि प्रदूषण उत्पन्न करती हैं। कालांतर में इस समस्या के और अधिक बढ़ने की संभावना है। ध्वनि प्रदूषण के विभिन्न स्रोतों को चित्र में दर्शाया गया है।

ध्वनि की तीव्रता मापने की इकाई डेसीबल (डी.बी.) कहलाती है। यह ध्वनि की तीव्रता अथवा कानों तक पहुँची कोलाहलपूर्ण ध्वनि को मापती है। आज ध्वनि प्रदूषण विश्वव्यापी समस्या बन चुकी है। यदि हम विश्व के विभिन्न स्थानों एवं हमारे देश के महानगरों पर दृष्टि डाले तो हमें स्वतः ही ज्ञात हो जाएगा कि ध्वनि प्रदूषण किस द्रुतगति से बढ़ रहा है।

हमारे देश में ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण कार्यक्रम को प्रभावी बनाते समय तथा शोर सीमाओं का मानकीकरण करते समय विश्व के सभी क्षेत्रों की आर्थिक स्थिति, देश की जलवायु तथा लोगों के रहन-सहन के ढंग को ध्यान में रखा गया है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड एवं पर्यावरण तथा वन मंत्रालय द्वारा ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण के लिए विविध क्षेत्रों में स्वीकृत शोर के स्तर, दिन तथा रात्रि के समय के लिए अलग-अलग निर्धारित किए गए हैं।

यद्यपि प्रकृति में विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ विद्यमान होती हैं, परंतु मनुष्य कुछ ही ध्वनि तरंगों को सुनने में सक्षम होता है। कुत्तों में ध्वनि

ध्वनि प्रदूषण से सिरदर्द, उच्च रक्तचाप, अनिद्रा, हृदय गति का बढ़ना, श्वसन तीव्र होना, अधिक पसीना आना, जी मिचलाना, थकान अनुभव होना तथा स्वभाव में चिड़चिड़ापन आदि रोग हो जाते हैं। तेज शोरयुक्त वातावरण में वार्त्तालाप में अधिक शक्ति लगानी पड़ती है, जिससे गले में, स्वरयंत्र में सूजन तथा आवाज में खराश आ जाती है। हाल के अनुसंधान-परिणाम यह दर्शाते हैं कि 9५० डी.बी. वाले शोर में थोड़े समय में रहने से मुनष्य की रक्त-नलिकाओं में संकुचन आरंभ हो जाता है, जिससे रक्त-संचार कम हो जाता है।

सुनने की क्षमता मनुष्यों से अधिक होती है। इसी कारण हल्की सी आवाज सुनकर भी कुत्ता भौंकने लगता है। ५० डेसीबल तथा इससे अधिक की ध्वनि असहनीय होती है, जिसके प्रतिकूल प्रभाव को जानने के लिए श्रवणशक्ति की क्रियाविधि को जानना आवश्यक है। हमारे कान श्रवणशक्ति के साथ-साथ शरीर का संतुलन बनाए रखने का भी कार्य करते हैं।

हमारे कान के तीन भाग होते हैं—बाह्य कान, मध्य कान तथा आंतरिक कान। मध्य कान में कर्ण पटल एवं तीन पतली हड्डियाँ होती हैं। घुमावदार शंख की आकृति के आंतरिक कान के भीतर एक लंबी तनी हुई त्वचा होती है। बाद में तंत्रिका तंत्र होता है, जो संवेगों को मस्तिष्क तक पहुँचाता है। किसी भी ध्वनि तरंग से पारदर्शक झिल्ली जैसा कर्णपटल, यानी कान का परदा कंपित होकर मध्य कान की हड्डियों को कंपित करता है, फिर से कंपन भीतरी कान की तनी

त्वचा पर होता है और तंत्रिकाएँ मस्तिष्क को सूचित करती हैं। तब हमें ध्वनि की अनुभूति एवं पहचान होती है। वायुमंडलीय दाब का संतुलन बनाए रखने के लिए कान का संबंध नाक एवं गले से होता है। आंतरिक कान पर वायुदाब के असंतुलन प्रभाव से वेस्टीबुलर एपरेट्स उत्तेजित हो जाता है, जिससे जी मितलाना, उल्टी आना, कानों में धूँ-धूँ की आवाज, सिरदर्द जैसे लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। एक अध्ययन के अनुसार विश्व में लाखों लोग प्रतिवर्ष बहरे हो रहे हैं। इनमें मजदूर वर्ग, बड़े नगरों के प्रवासी, महामार्ग (हाइवे) के पास रहनेवाले, हवाई अड्डों के समीप रहनेवाले तथा पॉप संगीत सुननेवालों की संख्या औरों के मुकाबले अधिक है।

ध्वनि प्रदूषण से सिरदर्द, उच्च रक्तचाप, अनिद्रा, हृदय गति का बढ़ना, श्वसन तीव्र होना, अधिक पसीना आना, जी मिचलाना, थकान अनुभव होना तथा स्वभाव में चिड़चिड़ापन आदि रोग हो जाते हैं। तेज शोरयुक्त वातावरण में वार्त्तालाप में अधिक शक्ति लगानी पड़ती है, जिससे गले में, स्वरयंत्र में सूजन तथा आवाज में खराश आ जाती है। हाल के अनुसंधान-परिणाम यह दर्शाते हैं कि १५० डी.बी. वाले शोर में थोड़े समय में रहने से मुनष्य की रक्त-नलिकाओं में संकुचन आरंभ हो जाता है, जिससे रक्त-संचार कम हो जाता है।

ध्वनि प्रदूषण व्यक्ति की कार्यक्षमता तथा स्मरणशक्ति को भी कम करता है। बच्चों की स्कूल या कॉलेज शोरयुक्त क्षेत्र में होती है तो वहाँ उनका मन पढ़ाई में नहीं लग पाता है। तीव्र ध्वनि सुनते रहने पर गायों की दूध देने तथा मुरगियों की अंडे देने की क्षमता में भी कमी देखी गई है। अत्यधिक प्रदूषित ध्वनि के वातावरण में रहने पर गर्भस्थ शिशु में भी कई जन्मजात विकृतियाँ हो जाती हैं तथा गर्भपात की आशंका भी बढ़ जाती है।

अधिक शोर युक्त वातावरण में रहने पर रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा बढ़ती है, आँखों की पुतली का आकार छोटा हो जाता है, रंग पहचानने की क्षमता में कमी आ जाती है तथा रात्रि में दृष्टि भी कम पड़ने लगती है। दैनिक जीवन में व्याप्त कोलाहल को सामाजिक तनावों, लड़ाई-झगड़ों, मानसिक अस्थिरता, कुंठा तथा मानसिक रोग आदि विकारों का कारण माना जाता है। शोर से उत्पन्न तनाव एक प्रकार का विष ही है, जो मनुष्य की आयु को कम कर रहा है। आस्ट्रिया के ध्वनि वैज्ञानिक डॉ. गिफिथ का मानना है कि कोलाहल पूर्ण वातावरण में रहनेवाले लोग अपेक्षाकृत जल्दी बूढ़े हो जाते हैं।

ट्रैफिक के शोर से हानि

जीव-जंतुओं पर शोर का असर होता है, यह बात तो वैज्ञानिक अध्ययनों में कई बार साबित हो चुकी है। इसमें भी कोई संदेह नहीं था कि जीवों पर असर होने के कारण पौधों के परागण की प्रक्रिया बाधित होती है और वनस्पति संसार इससे प्रभावित होता है।

बेसिक एंड एप्लाइड इकोलॉजी जर्नल में प्रकाशित हाल में हुए अध्ययन में शोर प्रदूषण का पौधों के विकास पर सीधे असर का खुलासा हुआ है। तेहरान की शाहिद बहशती यूनिवर्सिटी के जीव-विज्ञानी अली अकबर घातबी रवांडी ने शोर से पौधों के प्रभावित होने को लेकर अध्ययन किया है। ईरानी वैज्ञानिक ने शहरी माहौल में बहुतायत में पाए जानेवाले दो पौधों गेंदा (फ्रेंच मेरीगोल्ड) और स्कारलेट सेज को अपने लैब में उगाया। एक ही वातावरण में दो महीने उगाए जाने के बाद उन्हें दो वर्गों में विभाजित किया गया। एक समूह को दिन में १६ घंटे तक तेहरान के व्यस्त यातायात के ७३ डेसिबल के शोर की रिकॉर्डिंग के बीच रखा गया। दूसरे समूह को शांत माहौल में रखा गया। १५ दिन बाद दोनों से अध्ययन के लिए सैंपल लिया गया। यातायात के शोर में रहे पौधों पर इसका आसर देखा जा सकता था। उनके पत्तों के विश्लेषण से जाहिर हो रहा था कि वे पीड़ित हैं। पौधों में हाइड्रोजन पेरॉक्साइड और मैलोनडियालिडडाइड जैसे रसायनों की अधिक मात्रा में मौजूदगी तनाव का संकेत दे रही थी।

शांत वातावरण में उग रहे पौधों की तुलना में शोर के बीच रहे स्कारलेट सेज के सैंपल में मैलोनडियालिडडाइड दोगुना और फ्रेंच मेरीगोल्ड के सैंपल में तीन गुना था। शोर में रखे पौधे में स्वस्थ विकास और वृद्धि करनेवाले हार्मोस का स्तर भी बेहद कम हो गया था।

ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम

स्वस्थ जीवन के लिए ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम नितांत आवश्यक है, क्योंकि यदि ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण संबंधी कोई कदम नहीं उठाया गया तो नोबेल पुरस्कार विजेता रॉबर्ट कॉख का लगभग सात दशक पूर्व का कथन 'एक दिन ऐसा आएगा जब मनुष्य को स्वास्थ्य के सबसे बड़े शत्रु के रूप में 'शोर' का सामना करना पड़ेगा' सार्थक हो जाएगा।

इस संबंध में निम्न उपाय किए जा सकते हैं—

- जिन मशीनों में शोर कम करनेवाले स्तब्धक (साइलेंसर) लग सकते हों, वहाँ इनका उपयोग करना चाहिए। वेल्लिंग में होनेवाले शोर को 'रिवेटिंग' द्वारा कम किया जा सकता है।

- समय-समय पर मशीनों, वाहनों की सफाई तथा तेल एवं ग्रीज देकर भी अतिरिक्त शोर को कम किया जा सकता है।

- हवाई अड्डों, रेलवे स्टेशनों, कल-कारखानों को आवासीय क्षेत्रों से दूर रखना चाहिए।

- यातायात को मुख्य सड़कों तक ही सीमित रखना चाहिए तथा घने बाजारों में परिवहन साधनों के आवागमन को दिन के समय प्रतिबंधित करना चाहिए।

- वाहनों में हॉर्न का प्रयोग आवश्यक स्थिति में ही करना चाहिए, प्रेशर हॉर्न तथा बहुध्वनि वाले हॉर्न बजाने पर प्रतिबंध लगाना चाहिए।

- विवाह, सार्वजनिक स्थलों एवं तेज आवाजवाले बैंड-बाजों तथा लाउडस्पीकर आदि का उपयोग बहुत ही कम करना चाहिए।

- जिन औद्योगिक प्रतिष्ठानों से अधिक एवं निरंतर शोर होता है, वहाँ के कर्मचारियों को ईयर प्लग, इधरमप्स कैंटोप्स तथा हेलमेट की सुविधा प्रदान करनी चाहिए।

- घरों में ध्वनि उत्पन्न करनेवाले साधनों, यथा—रेडियो, टी.वी., टेप-रिकॉर्डर, मिक्सी, वैक्यूम क्लीनर आदि धीमी गति पर चलाने चाहिए।

- बच्चों में आंरभ से ही ऐसे संस्कार डालने चाहिए कि वे धीमे बोलें, वाहन में हॉर्न का उपयोग कम-से-कम करें तथा मनोरंजन के साधनों को धीमी आवाज में ही चलाएँ।

- यह प्रेक्षित किया गया है कि वृक्ष शोर को सोखते हैं, परावर्तित करते हैं और छिपाते हैं। परंतु पेड़ बड़े पत्तेवाले और घने होने चाहिए। यदि घने पेड़ के नीचे के भाग में छोटे पौधे हों तो वे बाधा के रूप में उत्तम कार्य कर सकते हैं। रेल की पटरियों के किनारे, सड़कों के दोनों ओर, कारखानों के अहाते आदि में थोर, तेंदू, नीम, पीपल, जामुन, करंज, फराश, रोहिड़ा, इमली तथा गुलमोहर आदि का वृक्षारोपण करना चाहिए।

- ध्वनि प्रदूषण रोकने हेतु जन चेतना जाग्रत करना भी आवश्यक है। अतः विद्यार्थियों, जन सामान्य को इस प्रकार की शिक्षा देनी चाहिए, ध्वनि प्रदूषण निवारण विषयक संगोष्ठियाँ, नुक्कड़ सभा, कार्यशाला आदि संयोजित की जानी चाहिए। संचार माध्यम भी इसको रोकने में प्रभावी हो सकते हैं, का प्रयोग करना चाहिए।

भारत सरकार ने भी सन् १९८६ में ध्वनि प्रदूषण को रोकने के लिए कई कारगर कदम उठाए हैं, जैसे भारतीय दंड संहिता, मोटर वाहन अधिनियम, १९३९, औद्योगिक अधिनियम, १९५१ की तरह पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम भी बनाया गया है। सरकार ने ध्वनि प्रदूषण को भी वायु एवं जल प्रदूषण की तरह महत्त्व दिया है तथा आरक्षित क्षेत्रों में ध्वनि प्रदूषण करनेवालों को दंड का भी प्रावधान रखा गया है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि ध्वनि का भी उभयचारी रूप होता है—स्वास्थ्यवर्द्धक एवं रोगकारक। अतः आज आवश्यकता है, इस अदृश्य प्रदूषण के प्रति जन जागरूकता की।

(सा.अ.)

हजारी चबूतरा, ब्रह्मपुरी
जोधपुर-३४२००१ (राज.)
दूरभाष : ९४१४४७८५६४

गजलें

● भूमिका जैन

: एक :

मुहब्बत का मुहब्बत से, हकीकी राब्ता हूँ मैं,
अगर इमरोज हो तुम तो, तुम्हारी अमृता हूँ मैं।

दिखावे और बनावट से मेरा क्या वास्ता, मुझसे,
तकल्लुफ छोड़कर मिलना, बड़ी बेसाख्ता हूँ मैं।

न कसमें हूँ, न वादे हूँ, मुझे विश्वास कहते हैं,
किसी भी राबते को चाहिए, वो अर्हता हूँ मैं।

मेरी तसवीर भी देखो, तो सजदे ही नजर करना,
किसी चौरे की तुलसी हूँ, किसी की ब्याहता हूँ मैं।

दशानन तक न फिर आगे की हिम्मत कर सका था जब,
कहा था जानकी ने 'दूर रह! एक पतिव्रता हूँ मैं'।

किसी आँगन की चिड़िया से, मैं तुलसी हो गई जब से,
खुदी को पा लिया तब से, खुदी से लापता हूँ मैं।

मुझे दर्शन समझकर देखने की, भूल मत करना,
कहीं की संस्कृति हूँ तो, कहीं की सभ्यता हूँ मैं।

उसे फिर पूजना तो दूर, देखा तक नहीं करती,
जो श्रीमुख से कहे अपने, कि रब हूँ देवता हूँ मैं।

मैं यूँ तो सर्वगुणसंपन्न हूँ बस दोष इतना है,
अगर मैं फैल जाऊँ तो समझ लो रायता हूँ मैं।

: दो :

गौर से देखो बातचीत में, दोनों के अपने मतलब हैं,
लफ्जों के अपने मतलब हैं, लहजों के अपने मतलब हैं।

एक म्आनी है तो क्या है, इस्तेमाल तो अलग अलग हैं,
जुल्फों के अपने मतलब हैं, बालों के अपने मतलब हैं।

दोनों अंग सहारे के हैं, लेकिन देते वक्त अलग हैं,
कंधों के अपने मतलब हैं, हाथों के अपने मतलब हैं।

बोसे तो बोसे होते हैं, पर बोसों के मुआम्ले में,
गालों के अपने मतलब हैं, होंठों के अपने मतलब हैं।

लाख अनमने मन से लेकिन, जड़ से जुड़े हुए रहने के,
पत्तों के अपने मतलब हैं, शाखों के अपने मतलब हैं।



सुपरिचित लेखिका। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी आगरा पर आकस्मिक उद्घोषिका के रूप में कार्यरत।



ना-ना, ना-ना एक न समझो, झुकी हुई इन दो चीजों में,
आँखों के अपने मतलब हैं, नजरों के अपने मतलब हैं।

इश्क बहुत आसां है यूँ तो, मगर यहाँ भी लंबी-लंबी,
खामोशी के अपने मतलब, बातों के अपने मतलब हैं।

: तीन :

सच है तुझसे सब सच है, अफवाहों पर मिट्टी डाल,
जैसे जीना है जीता जा, चिंताओं पर मिट्टी डाल।

प्रेम अगर करना है तो भी बिल्कुल पत्थर बनकर कर,
जो मन को कमजोर करें उन जज्बातों पर मिट्टी डाल।

अपने मन का बन गुलाम, जो मन कह दे वो करता चल,
ठेकेदारों, बाबाओं पर, आकाओं पर मिट्टी डाल।

खुश रहने का जीवनमंत्र एक मात्र संतुष्टि है,
दंदफंद और दुनियादारी, सब बातों पर मिट्टी डाल।

कर्म किए जा फल की इच्छा भी रख पर भगवान न बन,
किस्मत सब कुछ देगी ऐसी आशाओं पर मिट्टी डाल।

एक लक्ष्य हो एक दिशा हो और एक ही हो संकल्प,
पैदा अंतर्द्वंद करें उन दो राहों पर मिट्टी डाल।

जितना ज्यादा बोझा होगा उतना ही चलना मुश्किल,
बेमतलब की इच्छाओं पर लिप्साओं पर मिट्टी डाल।

अगले पल की खबर नहीं है जोड़ गाँठ सौ वर्षों की ?
आज अभी इस पल को जी बस, योजनाओं पर मिट्टी डाल।

रिश्ते हों तो ऐसे जिनमें आसमान भर हो विश्वास,
जो जी का जंजाल बनें, उन संबंधों पर मिट्टी डाल।

केवल अपनी आँखों देखी के ऊपर रखना विश्वास,
सच से खाली, बिके हुए इन अखबारों पर मिट्टी डाल।

सा
अ

मकान नं.-३ पोस्ट ऑफिस वाली गाली
न्यू नेहाई, रामबाग, आगरा-६
दूरभाष : ८२७९९४२६४८

मोरा नैहर छूटो जाए

• रविशंकर सिंह

मेरा सगा भाई, जिसे अपनी गोद में उठाकर कभी मैं स्वयं को दुनिया की सबसे भाग्यशाली लड़की समझती थी, जिसे मैंने हलराया-दुलराया, अपनी बाँहों के हिंडोले पर झुलाया और उँगली पकड़कर जीवन की डगर पर सँभलकर चलना सिखाया, उसे कोलियरी की बुरी संगति से बचाकर सही रास्ता दिखाया, समझा-बुझाकर उसे ग्रैजुएशन करवाया, उसी भाई ने मेरे साथ जो सलूक किया, वैसा तो कोई दुश्मन भी नहीं कर सकता है।

मुझे अपनी सगी माँ के व्यवहार पर भी आश्चर्य होता है, जिसने मुझे अपनी कोख में पाला, जिसके दूध की धारा मेरी धमनियों में रक्त बनकर बहती है, उस माँ ने भी मुझसे मुँह फेर लिया।

अब मुझे पिताजी की कमी अखरती है। पिताजी बुलंद इरादों और खुले खयालोंवाले व्यक्ति थे। उन्होंने मेरे ऊपर कभी कोई पाबंदी नहीं लगाई। मेरी पढ़ाई-लिखाई पिता की बदौलत ही संभव हो सकी। पिताजी कहते थे, 'खूब मन लगाकर पढ़ो! शिक्षा के सिवा मुक्ति नहीं है।'

पिताजी के गुजरने के बाद अपने छोटे भाई की हरकतों ने मुझे शिद्दत से यह एहसास कराया कि मायके में पिता की क्या अहमियत होती है। पिताजी उस मजबूत खूँटे की तरह थे, जिसके जोर पर मायके में मेरी तूती बोलती थी। पिताजी से अपनी माँगों को पूरी करवाने के लिए छोटा भाई मेरी चिरौरी किया करता था, क्योंकि उसकी बदमाशियों के कारण पिताजी उसे फूटी आँख भी नहीं देखना चाहते थे।

पिताजी के गुजरने के बाद महीना भी नहीं लगा था। इधर भाई की शेखी दिनोदिन बढ़ती ही जा रही थी। नई मोटरसाइकिल, नया स्मार्टफोन, दोस्तों के संग-साथ महँगे होटलों में गुलछरें उड़ाने और घूमने-फिरने में वह पानी की तरह पैसा बहा रहा था। जब मैंने पिताजी के बैंक खातों की पड़ताल की तो पाया कि उनके एकाउंट से ढेर सारे रुपए निकाले जा चुके हैं। भाई से उन रुपयों के बाबत पूछने पर उसने मुझे टका सा जवाब दिया, 'दीदी, तुम अपनी पॉवर अपने घर-परिवार तक ही महदूद रखो तो अच्छा है। तुम्हें मेरे घर में दखल देने की कोई जरूरत नहीं है।'

उसकी बात से दुखी होकर मैंने माँ से कहा, 'सुन रही हो न माँ!



सुपरिचित रचनाकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। 'अंगचंपा' पत्रिका में संपादन सहयोग। महावीर प्रसाद द्विवेदी सम्मान तथा कमलेश्वर कथा लेखन सम्मान से सम्मानित।

तुम्हारे जीते-जी इसने तेरा घर, मेरा घर क्या लगा रखा है? क्या अब यह घर मेरा नहीं रह गया है?'

माँ का उत्तर सुनकर मैं आसमान से गिरी तो खजूर पर जाकर अटकी। माँ ने दो टूक शब्दों में कह दिया, 'तुम छोटे से मुँह ही क्यों लगाती हो बेटी! आखिर सब कुछ इसी का तो है। अपने बाप की संपत्ति को वह लाख बनाए, चाहे खाक बनाए, इसकी मर्जी!'

'ऐसा तुम बोल रही हो माँ! क्या पिता की संपत्ति पर केवल बेटे का हक होता है। बेटी का कुछ नहीं?'

'यही चलन है बेटी! मेरी तो यही सलाह है कि तुम इसकी परवाह करना छोड़कर अपना घर-संसार सँभालो।'

'माँ! मेरे पति ने पिताजी के इलाज में कोई कोताही नहीं बरती। आखिर क्यों?' क्योंकि हम लोगों ने इस घर को कभी पराया नहीं समझा था। और आज जब पिताजी की पेंशन, ग्रैच्युटी के पैसे और अनुकंपा पर नौकरी मिलने की बात आई है, तो तुम मुझे पराएपन का एहसास करवा रही हो।'

'तो ऐसा कहो न! तुम्हारी नजर पिताजी की पेंशन और ग्रैच्युटी के पैसे पर टिकी हुई है। तुम चिंता मत करो, पैसा मिलते ही मैं तुम्हारी पाई-पाई चुका दूँगा।' भाई ने जवाब दिया।

इस घटना के बाद हमारे रिश्ते में इतनी खटास आ गई कि मेरे भाई और बहन की शादी तय हुई तो मुझे पूछा भी नहीं गया। खुद की इतनी उपेक्षा और ऐसी बेइज्जती मुझसे सहन नहीं हो रही थी।

एक दिन सुबह उठकर मैंने अपनी माँ को फोन किया, 'माँ, जब तुम लोगों ने मुझे पराया बना ही दिया है तो पापा की संपत्ति में मेरा जो हिस्सा निकलता है, वह मुझे दे दो।'

मेरी बात सुनकर माँ मौन हो गई। थोड़ी देर बाद उधर से भाई ने जवाब आया, 'तुम जो सपने देख रही हो दीदी, वह तो इस जन्म में कतई संभव नहीं है। और हाँ! तुम्हारा जो कुछ भी बाकी-बकाया है, वह समय आने पर चुका दिया जाएगा।'

भाई का जवाब सुनकर मैं तिलमिला गई। मैंने गाँव जाकर अपने घर में पंचायत बुलाई। पंचायत में मेरे मामा, जो फौज से रिटायर होकर आए थे, गोतिया-दियाद के दो काका, जिन्होंने शराब पी रखी थी, मेरी माँ, छोटा भाई और दो ग्रामीण उपस्थित थे, जिनका खानदानी क्रिमिनल रिकॉर्ड रहा है।

काका ने कहा, 'क्या ऐसा करके तुम समाज को बिगाड़ नहीं रही हो? माना कि ऐसा कानून बन गया है, लेकिन समाज भी कोई चीज है कि नहीं?'

मैंने कहा, 'एक बेटा अपने माता-पिता की सेवा करे या नहीं करे, लेकिन वह पिता की जायदाद का अधिकारी बन जाता है। बेटा माँ की कोख से पैदा होता है और बेटियाँ?'

मैंने मामाजी की ओर इशारा करते हुए कहा, 'मेरे ये मामाजी, जिन्होंने नौकरी पाने के बाद माँ की सुध नहीं ली, लेकिन आज अपनी नौकरी से रिटायर होने के बाद वे पैतृक जमीन-जायदाद हथियाने के लिए गाँव आ गए हैं। मेरे दोनों काका जो शराब पीकर इस पंचायत में बैठे हैं, इससे समाज खराब नहीं होता है?'

मेरी बात सुनकर एक व्यक्ति ने तैश में आकर कहा, 'खैर मनाओ कि तुम लड़की हो! यहाँ बेसी कानून बघारनेवाले को बर्दाश्त नहीं किया जाता है, समझी?'

मामाजी ने मेरे भाई को ललकारते हुए कहा, 'इस बदजुबान लड़की को इतना मारो कि इसके होश ठिकाने आ जाएँ।'

मेरा भाई तमतमाता हुआ उठा और उसने मेरे चेहरे पर मुक्के से ऐसा वार किया कि मेरी एक आँख सूज गई। मैंने सरकारी अस्पताल में जाकर इलाज करवाया और उनसे इंज्यूरी रिपोर्ट माँगी, लेकिन डॉक्टर ने मुझे केवल प्रिस्क्रिप्शन पकड़ते हुए कहा, 'जाइए, इसी से काम हो जाएगा।'

मारपीट की घटना के वक्त बाहर खड़ी औरतें तमाशा देख रही थीं। उन औरतों का कहना था, 'इस तरह की घटना तो यहाँ के लिए आम बात है। लगभग हर घर में औरतों के साथ ऐसा सलूक होता है।'

ग्रामीण औरतों की बातें सुनकर मैं दंग रह गई। पुरुषों की ज्यादातियों को कितना सहती हैं ये औरतें! इसे ही इन लोगों ने अपनी नियति मान लिया है। हम एक सभ्य, धार्मिक और देवियों को पूजनेवाले समाज में

रहते हैं। क्या यह सब ऊपरी दिखावा मात्र है?

मैं थाने में अपने भाई के खिलाफ एफ.आई.आर. दर्ज कराने के लिए गई। वहाँ एक सिपाही ने मुझे दिनभर थाने में बिटाए रखा। उन्होंने मेरे भाई से फोन पर पूछा, 'तुम्हारी बहन तुम्हारे खिलाफ रिपोर्ट लिखाने आई है। लिखें कि नहीं लिखें?'

मेरे भाई से बात करने के बाद थानेदार ने कहा, 'देखिए, आपके भाई को अभी-अभी सरकारी नौकरी मिली है। उसके खिलाफ एफ.आई.आर. दर्ज हो जाने से उसकी नौकरी खतरे में आ जाएगी।'

'यह बात तो उसे अपनी बड़ी बहन पर हाथ उठाते समय सोचनी चाहिए थी।' मैंने कहा।

सिपाही ने कहा, 'आपको पैतृक जमीन में हिस्सा चाहिए, वह आपको मिल जाएगा, लेकिन कोर्ट-कचहरी के चक्कर में मत जाइए। आपका भाई कल आ रहा है, वह आपके हिस्से की जमीन दे देगा।'

मैं समझ गई कि केस को रफा-दफा करने के लिए फोन पर मेरे भाई से लेन-देन की बात हो चुकी है। मैंने कहा, 'आप मुझे एफ.आई.आर. की एक कॉपी रिसीव करके दीजिए।'

सिपाही ने कहा, 'अभी साहब दौरे पर गए हैं। आप शाम में छह बजे के बाद आइए। वैसे आपको फोन करके बुला लिया जाएगा।'

घर आकर मैं सोचने लगी, एक अकेली औरत को शाम के छह बजे थाने में बुलाया जाना क्या उचित है? मैंने एस.पी. को इस बाबत फोन किया और उन्हें मेल भी भेज दिया। उनके कहने पर देर रात को थाने से दो सिपाही मेरे घर आए। तब तक भाई माँ को लेकर अपनी नौकरी पर और मामा अपने गाँव भाग चुके थे।

मैंने एस.डी.एम. से मिलकर उन्हें अपनी समस्याएँ बताईं। एस.डी.एम. महिला ही थी। मेरे प्रति सहानुभूति जताने के बजाय उन्होंने उल्टे मुझे ही डाँटते हुए कहा, 'एस.पी. के यहाँ से तुम्हारे मेल की एक कॉपी मुझे भी मिली है। मैं तुम्हारी समस्या भली-भाँति जानती हूँ। तुम सामाजिक मर्जी से अपना हक हिस्सा ले लो और मामले को रफा-दफा करो। क्या तुम्हारी माँ पैतृक जमीन में तुम्हें हिस्सा देने के लिए तैयार है?'

मैंने 'ना' में सिर हिलाते हुए कहा, 'नहीं!'

'तब तो हिस्सा लेने की बात भूल ही जाओ, अथवा वे लोग राजी-खुशी से तुम्हें जितनी जमीन दे रहे हैं, उसी पर संतोष करो। सुनते हैं कि तुम्हारा भाई सरकारी नौकरी करता है। तुम उसके खिलाफ एफ.आई.आर. कराओगी तो उसकी नौकरी नहीं चली जाएगी?'

'यह बात उसे पहले सोचनी चाहिए थी। एक औरत पर हाथ उठाना क्या उचित है? भविष्य में वह मेरे ऊपर आक्रमण कर दे तो...!' मैंने कहा।



‘तो अधिक-से-अधिक क्या होगा? वह तुम्हें जान से मार देगा।’ और जब मर ही जाओगी तो किससे और क्या बदला लोगी? यदि तुम्हें जमीन में कानूनी हिस्सा चाहिए तो सिविल कोर्ट जाओ और पच्चीस साल तक कचहरी के चक्कर लगाती रहो। वरना यह ऐसा जिला है, जहाँ दिन दहाड़े लोगों को ठिकाने लगाते देर नहीं लगती है।’ एस.डी.एम. की बातों में धमकी थी। मैं समझ गई कि मुझसे पहले उन तक मेरे खिलाफ पैरवी पहुँच चुकी है।

धमकी तो मुझे गाँव के सरपंच ने भी दी, ‘आप पढ़ी-लिखी हैं, इसलिए सी.ओ. के यहाँ अप्लाई करने के लिए मैंने आपकी वंशावली बनाकर दे दी, लेकिन अब मामला गंभीर हो गया है। गाँव के सारे लोग एक हो गए हैं। हम जानते हैं कि आप कानूनन सही हैं, लेकिन आपकी देखा-देखी औरों का भी हौसला बढ़ जाएगा। इसी डर के मारे वे लोग किसी हद तक जा सकते हैं। मेरी तो यह सलाह है कि आपको जितनी जमीन मिल रही है, वह लेकर समझौता कर लीजिए।’

सरपंच के साथ दो मुस्टंडे युवक थे और दो बंदूकधारी सड़क पर बोलेरो में बैठे थे। परिस्थिति की नजाकत को समझते हुए मैंने कहा, ‘देखिए, मैं पिछले कई दिनों की घटना से बहुत डिप्रेशन में हूँ। मुझे सोचने के लिए वक्त चाहिए।’

धमकियों के बीच मैं अकेली औरत। मैं अपने दोनों बच्चों को लेकर मायके गई थी, लेकिन मारपीट की नौबत आने के बाद मैंने अपने दोनों बच्चों को सुरक्षित उसके पिता के पास भेज दिया।

मैंने एस.डी.एम. से मिलकर उन्हें अपनी समस्याएँ बताईं। एस.डी.एम. महिला ही थी। मेरे प्रति सहानुभूति जताने के बजाय उन्होंने उल्टे मुझे ही डाँटते हुए कहा, ‘एस.पी. के यहाँ से तुम्हारे मेल की एक कॉपी मुझे भी मिली है। मैं तुम्हारी समस्या भली-भाँति जानती हूँ। तुम सामाजिक मर्जी से अपना हक हिस्सा ले लो और मामले को रफा-दफा करो। क्या तुम्हारी माँ पैतृक जमीन में तुम्हें हिस्सा देने के लिए तैयार है?’

इतनी दौड़-धूप करने का लाभ यह मिला कि गाँव की जो महिलाएँ अब तक मूकदर्शक बनी हुई थीं, उनमें से कुछ एक मेरे पक्ष में बोलने लगीं। मेरे एक चचेरे भाई ने मेरे भाई को फोन करके कहा, ‘तुमने गलत किया है। तुम चुपचाप आकर अपनी बहन की जमीन का हिस्सा निकालकर दे दो, वरना यह तुम्हारे खिलाफ थाना-कचहरी जाएगी, तो फिर तुम मुश्किल में पड़ जाओगे।’

मेरे छोटे भाई ने उधर से कहा, ‘उससे कहिए कि अभी माँ की तबीयत खराब चल रही है। माँ की तबीयत ठीक होते ही मैं गाँव आ रहा हूँ। दो-चार दिनों में आकर मैं उसका हिस्सा माप-जोख करवाकर दे दूँगा।’ फोन का स्पीकर ऑन था।

विगत चार-पाँच वर्षों से भाई की बहानेबाजी और माँ का इनकार सुनती आ रही हूँ। मैं सोचती हूँ, अपने अधिकार की लड़ाई कितनी त्रासद है।

पिछली रात मैं एक पुराने गीत की कड़ी को याद कर रोती रही, ‘बाबुल मोरा नैहर छूटो जाय।’

रोते-रोते न जाने कब मैं नींद के आगोश में समा गई। रात में मैंने सपने में देखा, पिताजी मेरा हाथ पकड़कर घर चलने के लिए कह रहे हैं। बेवश और परेशान पिता रोते हुए कह रहे थे, ‘तू ऐसे हार नहीं सकती बेटी।’

सा
अ

सालडाँगा, बरदही रोड, पोस्ट रानीगंज
जिला पश्चिम बर्धमान, प. बंगाल-७१३३४७
दूरभाष : ७९०८५६९५४०

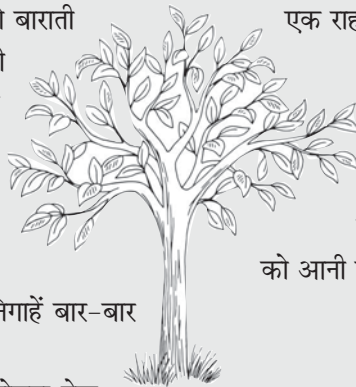
लघुकथा

सरकारी पेड़

● दिवाकर पांडेय

न हर पर नित्य क्रियाओं से निवृत्त होकर दो बाराती जनवासे की तरफ लौट रहे थे। वे दातून की तलाश में इधर-उधर पेड़ों पर नजर दौड़ा रहे थे। नीम और शीशम के पेड़ काफी बड़े-बड़े थे, इसलिए उनकी टहनियों तक पहुँचना मुश्किल था। बेर की कुछ झाड़ियाँ भी थीं, जिसकी दातून को किया नहीं जा सकता था। हाल-फिलहाल में लगाए गए पौधों की कतार पर उनकी निगाहें बार-बार जाकर ठहर जा रही थीं।

“अरे! पूरा पौधा ही तोड़ लिया?” उन्हें पौधे तोड़ता देख



एक राहगीर ने टोका।

“तुम्हारे पेट में दर्द क्यों हो रहा है, ताऊ? सरकारी है, कौन सा तुम्हारे घर का है।” उन दोनों ने एक स्वर में जवाब दिया और मुसकराते हुए आगे बढ़ गए। उनकी बातें सुनकर वह राहगीर अपने आप में खिसियाकर रह गया। जबकि खिसियाहट और शर्म उन बाराती लड़कों को आनी चाहिए थी।

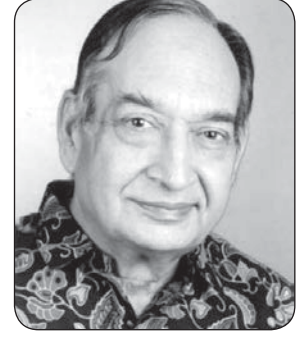
सा
अ

ग्राम-जलालपुर, पोस्ट-कुरासहा
जिला-बहराइच-२७१८२१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ७५२६०५५३७३



जोड़-तोड़ की यात्रा

• गोपाल चतुर्वेदी



अ पनी-अपनी प्रभु-प्रदत्त प्रतिभा है। कुछ कलाकार होते हैं, हुसैन ऐसे चित्रकार या भारत रत्न स्वर कोकिला लताजी ऐसे। ऐसों की प्रेरणा का स्रोत भले परिवार हो, पर कला की महारत उनकी स्वयं की होती है। न कोई सोच सकता है, न कह सकता है कि संगीत की साधना किसी और या अन्य की रही हो और उसके बल पर लताजी प्रसिद्ध हो गईं। कला का क्षेत्र एक ऐसा अनूठा क्षेत्र है, जिसके फलस्वरूप आदमी अपनी शैली से संस्था बन जाता है, जैसे लताजी के हर भाव की अदायगी की कुशलता या हुसैन के घोड़ों के चित्र। कोई माने न माने, भारत अजूबों का देश है। यहाँ तंत्र-मंत्र, संत, महंत से इतर अहिंसा के प्रवर्तक युग-पुरुष गांधी ऐसे महात्मा भी होते हैं और प्रजातंत्र की परंपरा में सामंती अवशेष के परिवारवादी भी।

इनकी इकलौती उपलब्धि एक वास्तविक और जाने-माने जनसेवक के घर में जन्म की दुघटना है। एक बार गौरवशाली पिता के घर पैदा हो गए तो पढ़ाई-डिग्री का ढोंग भले कर लें, उनको रास सिर्फ एक नौकरी आती है, वह है जनसेवा की। दूसरी ओर प्रचार-तंत्र सिर्फ इस तथ्य का ढिंढोरा मात्र पीटते हैं कि वे इतने कुशल थे, किसी भी क्षेत्र में सफल रहते। यों वह अपनी सीमाओं से परिचित हैं। वह बखूबी जानते हैं कि उनकी नौकरी भी बाबूजी की कृपा और सिफारिश से लगी थी। उस देशसेवक परिवार का सदस्य होना भी अपने आप में सफलता की एक-दो सीढ़ी चढ़ने जैसा है। कोई राजदूत बना, कोई राज्यपाल तो कोई यू.एन. के डेलीगेशन का सदस्य। सामाजिक सम्मान का तो कहना ही क्या? उस 'सरनेम' को सुनते ही लोगों के कान खड़े हो जाते, यह जरूर कोई महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है। ऐसा आदर-सम्मान, किसी दूसरे परिवार को मिलने की कल्पना तक कठिन है। फिर भी प्रकृति का नियम है, मानवीय विकास का भी एक चक्र होता है। एकाध पीढ़ी के विकास के बाद उसकी गति धीमी पड़ जाती है। इतना ही नहीं, कभी-कभी रुक भी जाती है। सच भी है। आखिर कामयाबी के शिखर पर कोई हमेशा कैसा बना रहे?

हमें कभी-कभी लगता है कि वर्तमान में यह अतीत का प्रसिद्ध परिवार उसी दौर से गुजर रहा है। तभी तो न खानदानी युवराज की चल रही है, न पूर्व प्रधानमंत्री की तरह दिखनेवाली उनकी बहन की।

भले भीड़ उमड़ती है, उनका नाम सुनकर, पर यह वोटों की न होकर नित नए-नए मनोरंजन के शौकीनों की है। आज युवराज 'वर्तमान प्रधानमंत्री' की क्या कहकर और कैसे आलोचना करेगा? राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर क्या-क्या नए और विस्मयकारी आरोप लगाएगा? ऐसी बातें सुनने को उत्सुक जनता हर वाक्य पर ताली बजा-बजाकर उसका उत्साहवर्धन करती है कि 'लगे रहो मुन्नाभाई निंदा में लगे रहो।' उनका आशय है कि 'वोट में हों, न हों, पर ऐसी हर रोचक चोट में हम तुम्हारे साथ हैं।' आलोचना में सच, हो, न हो, पर महत्ता मनोरंजन की है, वह खूब है। तालियों की गड़गड़ाहट, नेता के लिए प्रेरक है और चमचों के लिए उत्तेजक।

इनमें कुछ चमचे खानदानी हैं, उनकी पीढ़ी-दर-पीढ़ी चमचागीरी के माध्यम से ही सफल रही हैं। कुछ नए जो हैं, वे 'पानदानी' हैं। पान का फैशन चल बसा। वह क्या करते? पीक की आदत पड़ी है। वह प्रशंसा की पीक करने लगे। उनका अनुभव है कि इसमें फायदा-ही-फायदा है। उस पीक से कमीज-कुरते पर दाग लगते, कभी दूसरे पर छींटे पड़ें तो मार-पीट अलग। प्रशंसा की पीक प्रभावशाली है। पात्र पर जितने छींटे पड़े, वह उतना खुश है। क्या पता, कभी कोई पद दे दें, किसी कमेटी में रख दें। बस उन्हें एक ही राग-दरबारी अलापना है, "जनता आपके साथ है, वरना इतने प्रशंसकों की भीड़ क्यों आती?" यह राग-दरबारी अनंतकाल से बड़ों की कमजोरी रही है और आज भी है, क्या पता कल भी हो? बड़े गुण-ग्राहक हैं। उनके कानों की खासियत है, वह जनता की शिकायतें सुनें, न सुनें, पर उनके चेहरे की स्थायी मुद्रा से लगता है कि वह दूसरों के दुःख-दर्द से आक्रांत हैं। इसी अभिनय-कुशलता ने उन्हें नेता बनाया है। दूसरों का दुःख-दर्द सुन-सोच के पीड़ित मुख-मुद्रा उनके वास्तविक जनसेवक पुरखों की रहती थी। युवराज ने हूबहू उनकी नकल की है। यही उसकी महानता है, जो उसे जनसेवक बनाती है, वरना नेतागीरी की इस धूल-धक्कड़, तनाव, अनिश्चय, झूठ, फरेब, भ्रष्टाचार की जिंदगी में उसे कैसे रुचि हो?

पूरे प्रचार तंत्र ने उसे जननेता बनाने का अब तक असफल प्रयास किया है। यहाँ तक कि एक पिछड़े वर्ग के व्यक्ति के साथ रात्रि भोज का आयोजन भी हो चुका है। कहते हैं कि झोंपड़ी में शहर के पाँच सितारा होटल से दस-बारह व्यक्तियों का भोजन मँगाया गया। जेनरेटर से नेता

के हिस्से का बिस्तर ही क्यों, पूरी झोंपड़-पट्टी आलोकित और वातानुकूलित हुई कि युवराज को न खटमल डँसें, न मच्छर काटें। इन सब सावधानियों के बावजूद युवराज सो न पाया और पूरे अगले दिन उलझन तथा उदासी से घिरा रहा, सिर्फ उन पलों के अलावा, जब कैमरा के सामने उसे मुसकराना पड़ता। उसके पुरखों ने दिन-रात जन सेवा की योजनाएँ बनाई और उनके बावजूद न गाँवों में बिजली है, न पेयजल का नल। मन-ही-मन उसे मायूसी हुई। वह पूरा-का-पूरा जीवन जन-कल्याण में झोंक दे, तब भी क्या उनके भौतिक स्तर में कुछ सुधार ला पाएगा? उसका संवेदनशील मन कुछ विचलित हो चला। इस सेवा के धंधे में क्या धरा है? उसे विश्वास हो गया कि उसके पिताजी ठीक ही कहते थे कि रुपया चले तो चवन्नी ही विकास यात्रा में लक्ष्य

तक पहुँच पाती है? उसे संदेह हुआ कि कहीं यह चवन्नी पच्चीस पैसे की न होकर आठ-दस पैसे की तो नहीं है? देश की अधिसंख्य आबादी की दुर्दशा तो इसी तथ्य की साक्षी है? यह बदहाली सिर्फ गाँवों तक सीमित न रहकर, शहरों तक व्याप्त है। शहरों में कौन खुशहाली का बसंत है, वहाँ भी पीड़ा का पतझर है। रेल का प्लेटफॉर्म हो या अस्पतालों का पर्ची बनाने का परिसर। दोनों को देखकर भ्रम होता है कि जैसे पूरा मुल्क सफर पर है। बस अंतर इतना है कि कुछ का ज्ञात सफर आस-पास का है, कब अनंत का बने, यह किसी को नहीं पता है? जो सब जानते हैं, वह केवल इतना है कि छोटे-बड़े, अधेड़, बूढ़े सब सफर पर हैं, इसका अंत एक प्रश्नचिह्न है। कब समाधान और क्यों हो, ज्ञानी से ज्ञानी भविष्य-वक्ता तक इससे अवगत नहीं हैं।

पारिवारिक सामंती प्रजातंत्र के चिरयुवा युवराज को उसके सलाहकारों ने बताया है कि देश इस वक्त टूट के दौर से गुजर रहा है। कहीं अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक की टूट है, कहीं संविधान की, तो कहीं नियम-कानून की तो कहीं जाँच एजेंसियों की। उन्होंने दूरबीन लगाकर हफ्तों में इस टूट का दृश्य देखा है। टूट की इस व्यथा-कथा की वास्तविक पर, तब कहीं जाकर, उन्हें भरोसा हुआ है। जब तक चारपाई-विमर्श था, ऐसा न हुआ। वह तो पिछले आम चुनाव की हार के बाद से अब हर विरोधी दल को बस टूट नजर आ रही है। कुछ मुख्यमंत्री इतने चिंतित हैं कि एक-दूसरे से मंत्रणा में व्यस्त हैं? कैसे छिटके विरोधियों को एक करें? सबकी आला कुरसी की महत्वाकांक्षा है। जैसे वास्कोडिगामा ने दुर्घटनावश भारत की खोज की थी, वैसे ही विरोधी दलों ने यह अहम खोज की है कि आला कुरसी की हसरत एकता के आड़े आती है। इसीलिए त्याग का मुखौटा लगाकर एक मुख्यमंत्री ने

पारिवारिक सामंती प्रजातंत्र के चिरयुवा युवराज को उसके सलाहकारों ने बताया है कि देश इस वक्त टूट के दौर से गुजर रहा है। कहीं अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक की टूट है, कहीं संविधान की, तो कहीं नियम-कानून की तो कहीं जाँच एजेंसियों की। उन्होंने दूरबीन लगाकर हफ्तों में इस टूट का दृश्य देखा है। टूट की इस व्यथा-कथा की वास्तविक पर, तब कहीं जाकर, उन्हें भरोसा हुआ है। जब तक चारपाई-विमर्श था, ऐसा न हुआ। वह तो पिछले आम चुनाव की हार के बाद से अब हर विरोधी दल को बस टूट नजर आ रही है। कुछ मुख्यमंत्री इतने चिंतित हैं कि एक-दूसरे से मंत्रणा में व्यस्त हैं?

तो यहाँ तक सार्वजनिक घोषणा की है कि वह सिर्फ सत्ता दल को हराने के इच्छुक हैं, विपक्षी एकता में उनकी रुचि है, आला पद में नहीं। यह किसे आभास नहीं है कि गजदंती आदर्श केवल दर्शनीय हैं, सुनने-सुनाने के लिए हैं, अमल हेतु नहीं। उनके कट्टर समर्थक भी इस मत के हैं कि वह विरोधाभासों के कुतुबमीनार हैं, कुछ तो भी बोलना उनकी आदत है। स्वभाव है। कंबख्त जुबान कब क्या बक दे, इस पर न उनका वश, न नियंत्रण।

युवराज को विपक्षी एकता की इतनी चिंता नहीं है, जितनी मुल्क में संक्रामक रोग की तरह फैल रही टूट की। एक बार इस टूट ने जड़ें जमा लीं तो देश के भविष्य का क्या होगा? कितने विभाजन होंगे? कितने पाकिस्तान बनेंगे, जैसे एक बँटवारा ही काफी नहीं है? वह देश की

अस्मिता, एकता अखंडता को लेकर अंतर्द्वंद्व से ग्रसित हैं। उसके एक युवा सलाहकार सूचित करते हैं कि उसी की पार्टी में इधर तोड़-फोड़ का वातावरण है। कुछ पुराने निष्ठावान नेता पलायन में लगे हैं, कुछ अंदर-ही-अंदर साजिश-षड्यंत्र में। सलाहकार को ताज्जुब है। युवराज के चेहरे पर न आश्चर्य का भाव है, न किसी शॉक का! उससे वह मुसकराकर कहता है, “जानेवाले को कौन रोक पाया है? हमने उनके लिए इतना किया, मंत्री बनाया, मुख्यमंत्री का पद दिया, कभी इस सूबे का प्रभारी बनाया, कभी किसी और का। फिर भी वह संतुष्ट नहीं है, उनके मुँह में सत्ता का खून लग गया है। इसके आगे सब उसूल व्यर्थ हैं। अब उन्हें सत्ता दल से आस है कि वह उन्हें पद देगा। दल छोड़कर वह कद तो गँवा चुके हैं, जनता की नजरों में। देखें, ऐसे भगौड़े बौने क्या उपलब्धि हासिल कर पाएँगे, अपने चुने दल में?” दरअसल, युवराज की दुनिया दिवास्वप्न की हैं। उन्हें भ्रम है कि सत्ता दल का बड़का नेता न उनसे आँख मिला पाता है, न उनके प्रश्नों का उत्तर देने में समर्थ है। सत्ता दल का पूरा कारोबार ढोंग, झूठ और नफरत का है। जनता ने उसे सिर चढ़ाया हुआ है, क्योंकि वह डींगे हाँकने का विशेषज्ञ है। युवराज जो कहते हैं, वह करते हैं, इसीलिए जनता के समक्ष वह असत्य के इस असुर की कलाई खोलने में लगे हैं। दीगर है कि अब तक वह असफल हैं। जनता उन्हें गंभीरता से नहीं लेती है। कौन कहे, अपना मिशन पोल खोल को अधूरा छोड़कर वह कब विदेश सिधारें?

जब अचानक उन्होंने दक्षिण भारत में एकता-यात्रा निकाली तो एक पल को जनता को लगा कि कहीं यह अपने दल को जोड़ने के लक्ष्य में तो नहीं लगे हैं? यह सच तो बाद में उजागर हुआ कि यह टूट की नफरत के गरल को दूर करने अपनी अमृतवाणी के मरहम का

उपयोग करने का प्रयत्न है।

ऐसे यात्रा की भारत में काफी लंबी और पुरानी परंपरा है। गांधीजी ने अंग्रेजों के नमक-कर के विरुद्ध साबरमती आश्रम से नवसादी गाँव के तटवर्ती इलाके तक तीन सौ पचासी किलोमीटर की यात्रा निकाली। यात्रा के दौरान अनुयायियों की संख्या हजारों में तब्दील हो गई। यह डांडी अहिंसक आंदोलन पूरे देश में फैल चुका था और अंग्रेजों के विरुद्ध असहयोग का एक कारगर अस्त्र सिद्ध हुआ। नमक-कर तो चालू रहा, पर सैकड़ों गिरफ्तारियों के पश्चात्, अंग्रेज सरकार लंदन में इस पर गोलमेज कॉन्फ्रेंस के दौरान पुनर्विचार को सहमत हो गई। गांधी की गिरफ्तारी के पश्चात् इस आंदोलन की कमान श्रीमती सरोजनी नायडू ने संभाली। आजादी के बाद वह उत्तर प्रदेश की गवर्नर भी रहीं। इसके अलावा उत्तर से लेकर दक्षिण तक धार्मिक यात्राएँ भी देश की एकता में सहायक सिद्ध होती हैं। इसके कारण वह जयोतिर्मय धार्मिक सिद्धपीठ है जो भारत के चारों सुदूर कोनों में स्थित हैं, जैसे नासिक, रामेश्वरम्, उज्जैन और अमरनाथ आदि। युवराज की यात्रा की सीमा है। यह सिर्फ दक्षिण भारत तक सीमित हैं, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश, हिमाचल वगैरह में फिलहाल उनका यात्रा का कोई कार्यक्रम नहीं है। यों युवराज के सलाहकारों की मान्यता है कि इस दुर्गम पैदल यात्रा का असर गांधीजी के नमक सत्याग्रह से कम होने की गुंजाइश कम है। वह उनकी पदयात्रा के क्षेत्र में तो हो ही रही है, वहाँ भी होगा, जहाँ वह जा पाए हैं।

उनका दृढ़ विचार है कि समय के साथ इसका व्यापक प्रभाव पूरे देश पर पड़ेगा। यह भी संभव है कि युवराज चुनाव के पूर्व पूरे भारत की यात्रा का प्रारंभ करें? यह संभावित है कि अगले चुनाव के पूर्व नफरत का जहर मिटाने के लिए यह अनिवार्य भी है। यों देखने में आया है कि कुछ ऐसे महापुरुष भी हैं, जो महानता के मुगालते में रहते अपना पूरा जीवन होम कर देते हैं। जरूरी नहीं कि यह रोग सिर्फ नेताओं का एकाधिकार हो। इसमें हर क्षेत्र के व्यक्ति शामिल हैं। इनमें डॉक्टर, प्रशासक, सरकारी सेवक से लेकर कुछ लेखक तक भी हैं। इतना ही नहीं यह सब 'मुगालता-महासभा' के सम्मानित सदस्य हैं। जैसे कोरोना ने नाम बदल-बदलकर पूरे देश को धर-दबोचा, उसी प्रकार इस रोग ने भी महानगर से लेकर छोटे शहर तक किसी को भी नहीं बखशा है। 'रौंदू' शकल के तथाकथित 'मुसकान मैन' से लेकर नुककड़ के महाकवि, उबाऊ कहानीकार वगैरह-वगैरह एक किस्म के स्वघोषित साहित्यकार, सब इसकी शोभा बढ़ाने को कटिबद्ध हैं। कुछ स्थानीय अखबार भी जैसे 'दैनिक धनुष-बाण' से लेकर 'महावीर महाभीम' तक छपाईखाने का रोजमर्रा का शृंगार हैं। कुछ महानुभावों को तो इस बात का गर्व है कि उन्हें खाँसी भी आती है तो उन के खबर बनने से फर्क क्या पड़ता है। वह सुविधानुसार भूलते हैं कि इन अखबारों के अस्तित्व तक से बहुसंख्यक पढ़े-लिखे परिचित तक नहीं हैं तो वह खबर बनते हैं? खैर, उन्हें भी शहर के बाहर कौन जानता है? यों कहने को वह दिल्ली, मुंबई तक अपनी कीर्ति-गाथा का झंडा गाड़ आए हैं। इतना ही क्यों, पूरा हिंदी क्षेत्र

उनके सम्मान में नत है। मुगालते के मर्ज के ढेरों शिकार हैं। महानगर से लेकर छोटे-छोटे कस्बों के शहर तक।

भारत एकता यात्रा के कुछ प्रखर और मुखर आलोचक भी हैं। उनका आरोप है कि सैकड़ों वर्ष पुरानी देश की एकता में कौन सी ऐसी टूट-फूट नजर आ रही है कि इसे जोड़ने के लिए यात्रा आयोजित की जाए? यह क्या कोई काँच का जार है जो किसी के गिराने से टुकड़े-टुकड़े हो गया है? कहीं यह नेता के समर्थक कलम घिस्सुओं का प्रचारित बौद्धिक फितूर तो नहीं है? गांधी की डाँडी-यात्रा अंग्रेजों के लगाए नमक-कर के विरुद्ध थी। अस्तिकों की धार्मिक यात्रा की प्रेरणा, उनकी आस्था का परिणाम है। इन यात्राओं का उद्देश्य, आकाश में उभरे इंद्रधनुष सा है, जो सबको नजर आता है। एकता यात्रा क्या जोड़ने निकली है? सामाजिक ताना-बाना तो वैसा-का-वैसा है। न अल्पसंख्यकों में तनाव दिखता है न बहुसंख्यकों में कोई आक्रामक प्रवृत्ति। आतंक की दुघटनाएँ जस-की-तस हैं। उनके बदस्तूर गुनाहगार पुलिस द्वारा, बिना किसी पूर्वग्रह गिरफ्तार होकर जेल जाते और सजा पाते हैं। यदि निर्दोष हुए तो बरी भी हो जाते हैं। मसजिदें, मंदिर और चर्च, गुरुद्वारे तक सब, अतीत के समान, सुरक्षित हैं। न उनका ढाँचा टूटा है न सामाजिक सौहार्द का। सबमें अतीत की भाँति दुआ-सलाम है। सुख-दुःख में भाईचारा है। बस कुछ सिरफिरे नेता हैं, जो पूर्व की भाँति अपनी बकवास के लिए जाने जाते हैं। वह काल्पनिक टूट लाने को कटिबद्ध हैं।

फिर इस एकता-यात्रा का लक्ष्य क्या है? कहीं यह दलित के घर भोजन या चारपाई-विमर्श की तरह नेता को जनमानस में स्थापित करने का नया प्रयास तो नहीं है? बहाना नया है, पर कोशिश पुरानी और घिसी-पिटी। कैसे इस अनिच्छुक अंधेड़ को देश का लाड़ला और इकलौता युवा हृदय सम्राट बनाया जाए? कैसे इसका नाम और व्यक्तित्व चुनाव में वोटों का चुंबक हो? आलोचकों का खयाल है कि यह सब नाटक मनोरंजक तो है, पर बिना किसी कार्यक्रम की पटकथा के न रोचक है, न कामयाब। पहले के असफल प्रयासों के बाद कहीं यह एक बार फिर युवराज को अखिल भारतीय स्तर पर स्थापित करने की कोशिश तो नहीं है? शायद इसीलिए पहले अफवाहों और प्रचार से देश की परंपरा द्वार स्थापित सौहार्द और सद्भाव को तोड़ने में लोग जुटे हैं। एकता-यात्रा जैसी बेतुकी और अकारण चलाई गई मुहिम को कहने भर को कोई सफलता तो मिले? वर्तमान यात्रा का मूल मंत्र है, 'पहले कर्मों से तोड़ो, फिर यात्रा के जरिए जोड़ो'। तभी तो अगले चुनाव का कहीं यह नारा न हो, 'हमारा नेता, जन-जन का चहेता?' कौन कहे, यदि नेता की जनप्रिय छवि बनी तो वोटर जुड़ेंगे, फिर उन रूटे नेताओं की घरवापसी भी लाजिमी है, जो अपना दल बना रहे हैं या दूसरे दलों में चले गए हैं? ऐसे कौन कहे, इस यात्रा उद्देश्य क्या है? नेता को पुनर्स्थापित करना या फिर यों ही यात्रा के लिए यात्रा करना?

भा
अ

१/५, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

खजाने का रहस्य

● भरतचंद्र शर्मा

को

रोना काल के दीर्घ अवांछित अवकाश में मोहनजी के बच्चों को 'चंद्रकांत संतति' पढ़ने को हाथ लग गई। बच्चों को पुराने किले, सुरंगें और महल देखने, भ्रमण करने की प्रबल इच्छा हो गई।

आज रविवार का दिन है, खाना खाने की टेबल पर बेटे संजू एवं बेटी माला दोनों ने अपनी माँग रख दी—पापा, घर में पड़े-पड़े एकदम बोर हो गए हैं, कहीं ऐतिहासिक स्थान के भ्रमण पर लेकर चलो।

माला—हाँ पापा, ऐसी दो-तीन जगहों पर ले चलो जहाँ पुराने किले, महल, झीलें, बाग-बगीचे, कुएँ, बावड़ी, सुरंगें हों।

मोहनजी की पत्नी ने भी बच्चों का समर्थन किया। बच्चे पढ़े हुए इतिहास को देखना चाहते हैं, यह तो अच्छी बात है। दूर से इनकी बोरियत भी दूर होगी, ज्ञान भी बढ़ेगा।

मोहनजी ने भी सहमति दे दी—ठीक है, तुम तैयारी शुरू करो, दो-तीन पुराने शहर छँट लेता हूँ, चले चलेंगे।

अगले रविवार को मोहनजी अपने परिवार को लेकर एक ऐतिहासिक शहर की चौखट पर पहुँच गए। स्टेशन के पास ही एक होटल में ठहर गए। नए शहर की बसावट कुछ इस तरह की, जो चारों दिशाओं में बेतरतीब फैल रहा था।

भ्रमण स्थल पुराना किला यहाँ से बीस-पच्चीस किलोमीटर दूर एकदम निर्जन स्थान पर था।

दूसरे दिन मोहनजी सुबह-सवेरे एक ऑटो रिक्शा से अपने जिज्ञासु बच्चों के साथ खँडहर भग्नावशेष किले पर पहुँच गए। किला एक ऊँची पहाड़ी पर स्थित था जिसके चारों तरफ गहरी खाइयाँ थीं। किले के रास्ते पर जहाँ से पैदल यात्रा की शुरुआत होती थी एक गाइड पीछे लग गया। मोहनजी ने कहा, भय्या, हमको गाइड की जरूरत नहीं है, शिलालेख पढ़कर हम इतिहास समझ लेंगे।

गाइड—सर, पत्थरों पर तारीखें और राजाओं के नाम के सिवाय



सुपरिचित रचनाकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। 'साहित्य गुंजन सम्मान', 'श्रेष्ठ कृति सम्मान', 'विद्युजा सृजन सम्मान', 'साहित्य समर्था', 'शब्दनिष्ठ' सहित विभिन्न सम्मानों से सम्मानित। दूरदर्शन तथा आकाशवाणी पर रचनाएँ प्रसारित।

कुछ नहीं होता है। किले के गोपनीय रहस्य, रोमांच तो हम बताएँगे जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी हम किंवदंतियों में बुजुर्गों से सुनते आए हैं, तब तो आप यात्रा का आनंद लेकर जाएँगे, वरना आप खँडहरों की दीवारों पर चॉक-पट्टी या कोयले से नाम लिखकर यात्रा की खाना-पूर्ति कर सकते हैं।

तब तक कुछ अन्य पर्यटक भी आ गए थे, सभी ने मिलकर उस गाइड को तय कर लिया। गाइड भी प्रसन्न होकर अपनी लय में आ गया। इन मुर्दा खँडहरों में इतिहास की प्राण-प्रतिष्ठा करने से ही हमारी रोजी-रोटी चलती है।

किले की चहलकदमी के साथ ही गाइड की मधुर आवाज में रोचक रनिंग कमेंट्री शुरू हो गई, टोली के बच्चे एक-दूसरे से परस्पर जुड़ गए। खँडहर के भग्न प्रवेशद्वार पर बड़े कील लगे दरवाजे का आधा पल्लू लटका हुआ था।

गाइड इशारा करते हुए बता रहा था, किस संवत् में आक्रमणकारी फौज के सिपाहियों को मदांध हाथियों से यह दरवाजा तुड़वाने में कितनी मशक्कत लगी, तब कहीं जाकर चार दिन बाद यह दरवाजा टूटा था।

गाइड ने किले के भग्न बुर्जों की तरफ इशारा किया, बताया—किस तरह दुश्मन के एय्यार ने यहाँ से कमांड लगाकर गुप्त रूप से किले में प्रवेश किया था।

गाइड जब खंडित रंग महल के अंदर लेकर गया, तब जैसे



उसकी वाणी में श्रंगार रस की मिसरी घुल गई—साहब, यही वह महल है, जहाँ राज नर्तकी के घुँघरुओं की आवाज के सम्मोहन में डूबे मेहमान और मेजबान राजाओं के बीच तलवारें खिंच गईं और किस तरह यह रंगमहल रक्तमहल में बदल गया। अश्वशाला दिखाते हुए धुरंधर अश्वारोहियों के जाँबाज किस्से सुनाए।

न्यायप्रिय राजाओं के सभाकक्ष दिखाए, फाँसी की सजावाले अपराधी को कौन से रास्ते से ऊपरवाली पहाड़ी पर सूली पर टाँग दिया जाता था। कुछ टूटे-फूटे गुफाओं के गोलाकार द्वार दिखाए, जो सुरंगों के गुप्त रास्ते थे, जहाँ से राजा और योगी गुप्त यात्राएँ किया करते थे।

किला देखते-देखते जब हम नीचे उतर रहे थे, तब सहोदर पहाड़ी की तलहटी में किसी खँडहर हवेली के अवशेष दिखने लगे।

सहज जिज्ञासा हुई, वहाँ क्या है? उधर भी ले चलो।

गाइड ने हाथ जोड़ दिए, वहाँ मैं क्या, आपको कोई नहीं ले जाएगा, कोई भूले भटके चला भी गया तो वह जिंदा वापस नहीं आएगा। मोहनजी ने पूछा, एसी क्या बात है?

गाइड ने एक दीर्घ निश्वास लेकर रूँधे गले से बोलना प्रारंभ किया—राजवंश का वह रहस्यात्मक अध्याय पर्यटकों के आगे खुलने लगा। आजादी के समय के राजा के पाँच पीढ़ी पूर्व की यह घटना या दुर्घटना जो भी आप समझें, उसकी साक्षी है वह भग्न हवेली। उस हवेली में राजवंश के कामदार साहब रहा करते थे। राजाओं के कोठार, धन-धान्य का नियंत्रण एवं रखवाली करनेवाले रक्षक आज की भाषा में तत्कालीन वित्तमंत्री कह सकते हैं। जिस तरह राजवंश पीढ़ी-दर-पीढ़ी ज्येष्ठ पुत्र को हस्तांतरित होता था, उसी तरह राज्य के कोठार का जिम्मा भी कामदार परिवार की पीढ़ी में हस्तांतरित होता था। यह घटना कामदार साहब की उस पीढ़ी की है, जब यहाँ के राजा की युद्ध में लगातार पराजय के बाद राज्य की माली हालत बिगड़ने लगी थी, राजा के पास सैन्य शक्ति खड़ी करने के लिए घोर धनाभाव था।

एक दिन राजा साहब जब अपने दरबारियों से मंत्रणा कर रहे थे, तब कहा—मातृभूमि पर संकट आ पड़ा है, धन की व्यवस्था नहीं हुई तो सैन्य शक्ति की व्यवस्था नहीं होने से पराजय का खतरा मँडरा रहा है।

कामदार साहब ने पूछा—दातार होकम, कितने धन की आवश्यकता पड़ेगी?

राजा साहब ने फौज की आवश्यकतानुसार सुवर्ण की मोहरों की अनुमानित संख्या बताई।

कामदार—दातार होकम, यह किसी दानदाता का धन नहीं है, इसी राज्य के गुप्त खजाने से लिया गया धन है। आपके पुरखों ने हमारे पुरखों को यह गुप्त खजाना एक नक्शे के साथ धरोहर के रूप में सौंपा था, जिसका उपयोग केवल और केवल राज्य पर आए संकट के समय तात्कालिक आवश्यकता से विशेष परिस्थिति में ही करना है। राज परिवार भी इसकी गोपनीयता से अनभिज्ञ रहेगा, न कभी खजाने के गुप्त रास्तों का नक्शा माँगेगा, न कभी कोई चाबी माँगेगा।

सभा समाप्त हो गई, सभी सभासद चिंतित थे। राज्य पर गुलामी का खतरा मँडरा रहा है।

दूसरे दिन शाम को कामदार साहब ने राजा से एकांत में मिलने का समय माँगा। निर्धारित समय पर कामदार साहब ने वांछित सुवर्ण मुद्राओं की गठरी राजा का देते हुए दिखाई तो आश्चर्य से राजा की आँखें फटी रह गईं। कामदारजी यह व्यवस्था कहाँ से हुई, यह दानदाता कौन है? यह हम पर उसका कर्ज है, मातृभूमि पर यह उपकार हम कभी नहीं भूलेंगे। उस धन्नासेठ से हमें मिलवाओ।

कामदार साहब—दातार होकम सबसे पहले तो आप मातृभूमि की रक्षा के पवित्र कार्य में लगे, यह सब बाद की बातें हैं, अभी युद्ध की तैयारी हम सबकी प्राथमिकता एवं धर्म है।

कृतज्ञ नरेश अपने सैन्य संचालन हेतु कूच कर गए। सैन्य शक्ति खड़ी हो गई, लगभग दो वर्ष बाद राजा युद्ध में विजयी होकर लौटे। राज्य कार्य नियमित हुए, तब राजा और उनके दरबारी दानदाता के बारे में उत्सुक हो गए। कामदार साहब मौन रहे। एक पुर्जे पर कुछ लिखकर एकांत में गोपनीय तरीके से मिलने का समय माँगा। एकांत स्थल पर जब राजा एवं कामदार जब मिले, तब कामदार साहब ने प्रार्थना की—दातार होकम मैं आपको बाध्य तो नहीं कर सकता हूँ पर यह वचन चाहता हूँ कि आप मेरी बताई जानकारी किसी से साझा नहीं करेंगे तथा मैं बताऊँ उससे अधिक जानने के लिए मुझे बाध्य नहीं करेंगे।

राजा ने कहा—मैं तुम्हें वचन देता हूँ और तुम भी मेरे वचन की कीमत समझते हो, पर एक राजा पर शर्तें लादने का कारण जानना चाहता हूँ।

कामदार—दातार होकम जिस तरह आपका वंश वचन और प्रतिज्ञा के लिए जाना जाता है, उसी तरह हमारा कामदार वंश भी एक वचन से प्रतिबद्ध है, जो मेरे पुरखों ने आपके पुरखों को दिया है, यह कहीं लिखा नहीं है, पर पीढ़ी-दर-पीढ़ी हम इसका पालन करते आ रहे हैं।

राजा की उत्सुकता बढ़ रही थी—कामदारजी, निश्चित होकर कहो, हम वचनबद्ध थे और रहेंगे।

कामदार—दातार होकम, यह किसी दानदाता का धन नहीं है, इसी राज्य के गुप्त खजाने से लिया गया धन है। आपके पुरखों ने हमारे पुरखों को यह गुप्त खजाना एक नक्शे के साथ धरोहर के रूप में सौंपा था, जिसका उपयोग केवल और केवल राज्य पर आए संकट के समय

तात्कालिक आवश्यकता से विशेष परिस्थिति में ही करना है। राज परिवार भी इसकी गोपनीयता से अनभिज्ञ रहेगा, न कभी खजाने के गुप्त रास्तों का नक्शा माँगेगा, न कभी कोई चाबी माँगेगा।

राजा की आँखें विस्मय से फैलने लगीं।

वचनबद्ध राजा आगे और कुछ पूछे बगैर उठ खड़े हुए, पर व्यग्रता और बेचैनी इतनी बढ़ गई, इस बात को पचा नहीं पाए कि कैसा राज्य और राजा है, जो अपने गुप्त खजाने से अनभिज्ञ है, यह कैसा वचन पुरखों ने लिया।

राजा साहब के कुछ षड्यंत्रकारी मंत्रियों को इस बात की भनक लग गई, कामदार साहब गुप्त खजाने का रहस्य जानते हैं। यदा-कदा अपरोक्ष रूप से अपनी बात रखकर राजा साहब को उकसाने का प्रयास करते रहते।

‘दातार होकम, दानदाता का कुछ पता चला हो तो उसका राजकीय सम्मान होना चाहिए, आखिर इतनी बड़ी धनराशि राज्य को समर्पित कर दी।’

राजा साहब कुछ नहीं कहते, मन मसोसकर रह जाते। आखिर राजा साहब को एक युक्ति सूझी।

एकांत वार्ता में उन्होंने कामदार साहब से कहा— सुनो, कामदारजी, हमारी एक इच्छा है, जो आप पूरी कर सकते हैं, जिसमें आपका वचन भी भंग नहीं होगा।

कामदार साहब थोड़े असहज हुए, पर बाहर से सामान्य दिखने का प्रयास करते हुए पूछा, वह कैसे?

आप हमारी आँखों पर पट्टी बाँधकर हमें गुप्त खजाने तक ले जाकर उस अकूत धन-संपदा का दर्शन करवाइए, जो हमारे पुरखे राज्य की रक्षा हेतु छोड़कर गए हैं।

कामदार साहब को कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था।

राजा साहब ने उनका संशय दूर किया—आप निश्चित रहें, हम वहाँ जाते हुए, लौटते हुए तुम्हारी बाँधी पट्टी एक क्षण के लिए भी नहीं खोलेंगे। केवल खजाना दिखाते वक्त तुम कुछ समय के लिए पट्टी खोलोगे। इस प्रकार हमारे पुरखों के वचन भी सुरक्षित रहेंगे और हमारी इच्छा भी पूरी हो जाएगी। हम चाहते तो राज्यादेश भी तुम्हें दे सकते थे पर हम तुम्हें वचन दे रहे हैं। समय और यात्रा के नियम आदि सब तुम्हें तय करने हैं।

कामदार साहब ने बहुत सोच-विचार कर अपनी योजना बनाकर राजा साहब को दिन और समय बता दिया। मन-ही-मन राजा साहब भी कुछ सोच रहे थे। वचन भी भंग नहीं करना है और खजाने का नियंत्रण भी चाहिए।

अपनी योजना के अनुरूप कामदार साहब का प्रयास था, साँप भी मर जाए और लाठी भी नहीं टूटे। राजा को खजाना तो दिखा दें, पर रास्ते गुप्त ही रहने चाहिए। कामदार साहब को यह तो विश्वास था, राजा उनकी अनुमति के बगैर पट्टी को हाथ भी नहीं लगाएगा।

एक दिन प्रातःकाल कामदार साहब राजा की आँखों पर पट्टी बाँधकर घोड़े पर सवारी कर किसी अज्ञात दिशा की ओर एड़ लगा रहे थे। मध्याह्न तक वह राजा को लेकर खजाने तक पहुँच गए। खजाने की अकूत सोने की मोहरें देखकर राजा साहब की आँखें फटी रह गई, उन्होंने कल्पना नहीं की थी, उससे कहीं ज्यादा द्रव्य था।

नियमानुसार फिर पट्टी बाँधकर राजा को लेकर राजधानी लौटते-लौटते रात्रि के आठ बज गए। कामदार तो घर चले गए, पर राजा साहब यात्रा की भूल-भूलैया से खजाने के रास्ते की कल्पना करने लगे।

क्या याद रखें, जाने की तथा वापसी यात्रा का भी कोई साम्य नहीं था, उन्हें लगा, वापसी यात्रा में किसी और रास्ते से आए हैं।

कभी घोड़े पर, कभी पैदल, कभी नाव में, कभी सुरंग के भीतर, कहीं दलदल, कहीं रेत पर चलाकर ले गया था उनका कामदार।

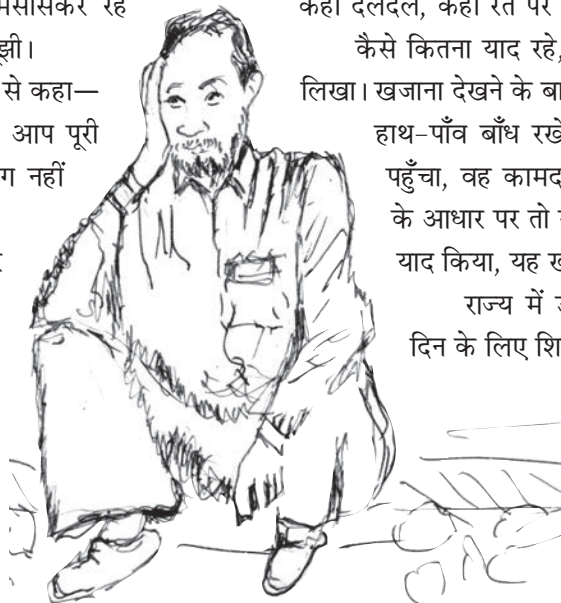
कैसे कितना याद रहे, पर कुछ अनुमान उन्होंने एक कागज पर लिखा। खजाना देखने के बाद राजा को चैन नहीं था, पर वचन ने उसके हाथ-पाँव बाँध रखे थे। खूब विचार कर वह इस निर्णय पर पहुँचा, वह कामदार से कुछ नहीं पूछेगा, पर अपने अनुमान के आधार पर तो खजाने तक पहुँचने का प्रयास किया। उसने याद किया, यह खजाना जमीन के भीतर किसी तहखाने में है।

राज्य में उसने घोषणा करवा दी, राजा साहब सात दिन के लिए शिकार पर जा रहे हैं, वे किसी से नहीं मिलेंगे।

वस्तुतः वह कागज पर नोट उस दिन की स्मृति के आधार पर कुछ दूर घोड़े पर चलकर वह नदी, वह दलदल, वह रेतीले रास्ते खोजने लगा, पर कामदार ने न जाने कैसी भूल-भूलैया रची थी, अंततः राजा असफल ही रहा।

इधर राजा को हताशा हो रही थी उधर कामदार विरोधी दरबारी, जिनको कुछ भनक लगी थी, वह षड्यंत्र कर कोढ़ में खाज का काम कर रहे थे। इसका परिणाम यह हुआ कि एक दिन एकांत में राजा ने कामदार साहब का कान उलटे हाथ से पकड़ने का प्रयास किया।

कामदार साहब हमें आपकी निष्ठा पर विश्वास एवं गर्व है। हम वचन से बँधे रहेंगे, पर मेरे मन में एक संशय है। आपकी भावी पीढ़ियाँ भी ईमानदारी पर कायम रहेंगी, यह कैसे विश्वास किया जा सकता है, यदि उनमें बदनीयती आ गई तो यह वचन धरे रह जाएँगे, वे खजाने का दुरुपयोग कर सकते हैं। आप इस पर विचार कर इस समस्या का कोई समाधान बताइए।



कामदार साहब समझ गए कि राजा अपरोक्ष रूप से खजाने का रहस्य और रास्ता जानने का दबाव बना रहा है। उनका उत्तर था— दातार, मैंने पहले से ही बताया है कि मैं वचन से बँधा हूँ, आपको अधिक कुछ नहीं बता पाऊँगा।

राजवंश कहीं रासरंग में डूबकर, भटककर धन का दुरुपयोग न करे, इसलिए पुरखों ने यह व्यवस्था की थी। कामदार वंश भी कुछ वचनों से बँधा है, पर वह कभी धन का दुरुपयोग नहीं करेगा, मैं आश्वस्त करता हूँ।

पर समय के साथ राजा का व्यवहार रूखा होता चला गया। वह सीधे तो कुछ नहीं कहता पर अपरोक्ष दबाव बनाने लगा। राजा का यक्षप्रश्न कामदार का पीछा कर रहा था।

षड्यंत्रकारी दरबारी राजा के कान भरने लगे—कामदार की नीयत में खोट है, वरना उसकी यह हिम्मत नहीं होती कि दातार होकम का मान रखते हुए नक्शा और चाबी सौंप देता।

उस दिन तो हद हो गई, जब राजा ने भरी सभा में किसी बात को लेकर कामदार का अपमान कर दिया। कामदार साहब अपमानित होकर बीच बैठक में ही हवेली लौट आए। अपने एक दरबारी मित्र के साथ कामदार साहब ने मन का संताप कहा। ऐसे राज्य में रहने का क्या अर्थ, जहाँ राजा का अविश्वास हो, वह भी धन-लोलुप दृष्टि के कारण।

कामदार साहब के मित्र ने सलाह दी, चाहे जो भी परिणाम हो, खजाने की चाबी और रास्ते का नक्शा राजा को सौंप देना चाहिए। आप इस तनाव में कैसे जीवन गुजारेंगे।

राज्य में चर्चा का विषय हो गया, कामदार साहब कहीं चले गए हैं, लापता हो गए हैं।

राजा के गुप्तचर सैनिकों को पंद्रह दिन बाद जंगल में कामदार साहब की लाश मिली। राजा के हाथ उनका शव लगा, जिसकी जेब में एक पुर्जे पर लिखा था—क्षमा करें दातार होकम, मैं वचन से बँधा हूँ।

गाइड ने हवेली की दास्ताँ सुना दी।

एक पल के लिए भावुक और रुँआँसे हुए पर्यटक जब सामान्य हुए तो मोहनजी ने पूछा—क्या हमें उस हवेली में ले जा सकते हो ?

गाइड—न बाबा न, वहाँ कामदार साहब का भूत रहता है, वहाँ कोई नहीं जाता है। कहते हैं, पहले भी एक-दो आदमी आपकी तरह जिद करके गए थे, जिंदा नहीं लौटे।

मोहनजी—मैं भूत-प्रेत, अंधविश्वास पर विश्वास नहीं करता हूँ।

गाइड—अरे साहब, आपके नहीं मानने से क्या होता है, क्यों भाइयो, आपने नागमणि के किस्से नहीं सुने हैं। धन का लोभ जो न कराए वो कम है।

एक पर्यटक ने अपना अनुभव साझा किया।

शाम ढल रही थी, मोहनजी के बच्चे भी डर रहे थे—

‘चलो पापा, यहाँ डर लग रहा है।’

पुराने किले के सन्नाटे में अँधेरे से पहले गाइड और पर्यटक उतर

जाना चाहते थे।

न जाने कब मोहनजी जिज्ञासावश हवेली की तरफ चले गए। हवेली एकदम सुनसान तथा झाड़-झंखाड़ से अँटी पड़ी थी, चारों तरफ चमगादड़ एवं झींगुरों की आवाजें भय के वातावरण का संचार कर रही थीं। एक बार तो मोहनजी का आत्मविश्वास डोलने लगा, फिर उन्हें अपने इष्टदेव याद आए तो उनका नाम जाप करते हुए आगे बढ़े।

आगे अँधेरे में उन्हें कोई धूनी उसके अंगारे और उठता धुआँ दिखाई दिया। पास पहुँचे तो देखा, कोई दिव्य श्वेत वस्त्रधारी महात्मा उनको एकटक देख रहे हैं, उनकी दाढ़ी एकदम श्वेत घनी एवं लंबी है। दाढ़ी से बहुत उम्रदराज लग रहे हैं, पर मुखमंडल पर एक कांति है, लगता है एकदम युवा हैं।

मोहनजी की घिग्गी बँधने लगी। महात्मा ने एकदम शांत संयत स्वर में कहा, ‘तुम एकदम सही जगह आए हो, कामदार साहब की हवेली यही हैं, बोलो क्या जानना चाहते हो?’

मोहनजी ने साहस बटोरकर कहा, ‘कुछ भी हो, कामदार साहब को आत्महत्या नहीं करनी चाहिए थी। यह काम कायरों का है।’

दिव्य महात्मा ने संयत स्वर में जब कहा—मोहन। आओ, क्या जानना चाहते हो ?

आश्चर्य में पड़े मोहनजी में भय व्याप्त होने लगा।

‘डरो मत मोहन।’

मोहनजी—राजा का यह संशय गलत नहीं था, कामदार के वंशज भी दुरुपयोग नहीं करेंगे।

महात्मा—कामदार के कुछ पूर्वजों ने ऐसा प्रयास किया था, पर खजाने के रक्षक नाग ने उन्हें डस लिया, पर इससे संबंधित किसी भी रहस्य के उद्घाटन से राजा के प्राण संकट में पड़ जाते, यह वचन था, राजा की प्राणरक्षा कामदार की प्राथमिकता थी।

राज्य के धन का दुरुपयोग करने या सोचनेवालों की दुर्गति तय है। उस दिन भी कामदार जंगल में गुप्त स्थान पर रखी खजाने की चाबी एवं नक्शा लेने गए थे, जो राजा को सौंपकर तनाव से मुक्त होना चाहते थे। वहीं खजाने के रक्षक नाग ने उन्हें डस लिया।

तभी मोहनजी ने देखा, दिव्य महात्मा कहीं अदृश्य हो गए और एक काला नाग फन काढ़कर फुफकारने लगा।

यकायक मोहनजी ‘साँप-साँप’ चिल्लाकर हड़बड़ाकर उठ गए। पत्नी ने पूछा, क्या हुआ, कोई बुरा सपना देखा क्या ? मैं कहती हूँ, भूतों के विषय में ज्यादा मत सोचो।

मोहनजी चारों तरफ देख रहे हैं, वह तो हॉटल के कमरे में बिस्तर पर हैं।

सा
अ

१-ए-३९ हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी
बाँसवाड़ा (राजस्थान)
दूरभाष : ९४१३३९८०३७

बीटल्स की अधूरी साधना का साक्षी : चौरासी कुटीर आश्रम

• स्मिता मिश्र

शि वालक पर्वतीय शृंखला से घिरी देवभूमि ऋषिकेश मुझे हमेशा से आकर्षित करती रहती है। धर्म, अध्यात्म, योग के लिए केंद्रित ऋषिकेश को गंगा नदी अतुल्य बना देती है। ऋषिकेश ऐसा स्थल है, जो समान भाव से युवा और बुजुर्ग पीढ़ी को लुभाता है। देशी पर्यटकों से ज्यादा विदेशी पर्यटकों की उपस्थिति यहाँ बनी रहती है। योग की राजधानी बन चुके ऋषिकेश में जहाँ स्वस्थ जीवन-शैली अर्जित करने के लिए लोग आते हैं, वहीं विश्वभर से योग शिक्षा प्राप्ति के लिए विद्यार्थी भी यहाँ बने रहते हैं। अपन तो घुमक्कड़ भी हैं और आध्यात्मिक जिज्ञासु भी। इसलिए ऋषिकेश आना-जाना बना रहता है। दिल्ली से पाँच घंटे की दूरी पर स्थित होने के कारण जब मन दिल्ली से घबराता है तो कार से निकल चलते हैं। अब तो राजमार्ग भी सुपर हाई-वे हो गए हैं तो गाड़ी भी मस्ती से चलती है और अपन भी।

इस बार पत्रकार रविशंकर सिंहजी के अनुरोध पर ऋषिकेश में आयोजित नारी संसद में बतौर वक्ता जाने का अवसर प्राप्त हुआ। ऋषिकेश स्थित परमार्थ आश्रम कार्यक्रम स्थल भी था और साथ ही वहाँ आवासीय व्यवस्था भी थी। ऋषिकेश अनेकानेक बार जाना होता रहता है, इसलिए ऋषिकेश के प्रसिद्ध स्थल काफी देखे हुए हैं। मेरी कोशिश होती है कि हर बार कुछ नया देखूँ। ऐसे ही पता चला कि साठ-सत्तर के दशक का विश्व प्रसिद्ध रॉक बैंड 'बीटल्स' का ऋषिकेश के महेश योगी आश्रम से संबंध है। बीटल्स सुनते ही मुझे अपने बचपन के दिन याद आ गए, जब बीटल्स की दीवानगी पूरी दुनिया के सिर चढ़कर बोल रही थी। चाहे समझ न आए, पर अपने बड़े भाइयों को अपना जेबखर्च बचाकर सोनी के महँगे कैसेट खरीदकर 'इट्स बीन ऐ हार्ड डेज नाइट' पर झूमते देख अपन भी झूमने लगते थे। दरअसल द बीटल्स ने १९५० के दशक में रॉक एंड रोल की शैली में शुरुआत की थी, फिर बाद में कई सारी शैलियों के साथ प्रयोग किए। १९६२ में 'लव लव मी डू' उनका पहला हिट होने के बाद ब्रिटेन में अत्यंत प्रसिद्धि प्राप्त हुई। संगीत में उनकी कलात्मकता



सुपरिचित लेखिका एवं मीडिया विशेषज्ञ। छोटे-बड़े रास्ते, भारतीय मीडिया : अंतरंग पहचान, मीडिया और साहित्य, भारतीय गाँव, बदलते संदर्भ, गीत फरोश-संवेदना और शिल्प आदि कृतियाँ। भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार एवं अन्य सम्मान। संप्रति दिल्ली के श्री गुरु तेगबहादुर खालसा कॉलेज में मीडिया एवं साहित्य का अध्यापन।

के चलते बीटल्स की तुलना पिकासो से की जाने लगी। केवल मनोरंजन के ही नहीं बल्कि समकालीन सामाजिक और सांस्कृतिक क्रांतियों के भी स्वर बीटल्स के गीत-संगीत में उभरने लग रहे थे। लेकिन सफलता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचने के बाद भी वे अशांत थे। जीने का मकसद ढूँढ़ने लगे थे। यह मकसद उन्हें महर्षि महेश योगी के आध्यात्मिक ध्यान क्रिया की ओर ले आया।

जब से बीटल्स आश्रम की जानकारी मिली थी, तब से उसे देखने की इच्छा जोर मार रही थी, लेकिन व्यस्तता के कारण बीटल्स आश्रम जाना हर बार रह जाता था। चूँकि इस बार परमार्थ आश्रम में ही ठहरी थी, इसलिए बीटल्स आश्रम जाने का मौका नहीं खोना चाहती थी। पर हर बार समस्या यह होती है कि गूगल पर जब भी बीटल्स आश्रम की लोकेशन खोजने जाओ तो चौरासी कुटीर के आसपास ले जाकर छोड़ देता है। हर बार अन्य व्यस्तताओं में होती थी, तो बहुत मशक्कत भी नहीं की खोजने की, पर इस बार ठान लिया था कि चौरासी कुटीर और बीटल्स का संबंध ढूँढ़ना तो है। परमार्थ आश्रम से लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर यह लोकेशन दिखाई दी।

इस बार फिर गूगल ने चौरासी कुटीर के साइनबोर्ड के पास ले जाकर छोड़ दिया। इधर-उधर बीटल्स का बोर्ड ढूँढ़ने की कोशिश की, लेकिन नहीं मिला। इस बार तो मैंने ठान ही लिया था कि कोलंबस तो बनना ही है बीटल्स आश्रम का। मेरी कार चौरासी कुटीर के साइनबोर्ड

से टर्न लेकर एक पुराने से गेट के सामने रुक गई। वहाँ एक छोटी सी टिकट खिड़की थी। मैंने पूछा कि बीटल्स आश्रम कहाँ हैं? उसने अलसाई नजरों से ऐसे देखा कि कौन तंग करने आ गया, फिर धीरे से ऊबे स्वर में कहा—यहीं पर है। मैंने पूछा कि फिर लिखा क्यों नहीं है? अब थोड़ा झुंझलाकर बोला कि यह सरकारी संपत्ति है, बीटल्स आया और गया। अब मैंने ज्यादा कुछ नहीं पूछा और चुपचाप १५० रुपए का टिकट लेकर अंदर चल दी। हालाँकि स्टूडेंट और सीनियर सिटीजन के लिए टिकट राशि आधी थी। मैंने और कुछ सवाल पूछना सही नहीं समझा, लेकिन वह स्वयं बोल पड़ा—ध्यान रखिएगा कि दो घंटे लग जाएँगे अंदर घूमते हुए, चार बजे यह बंद हो जाएगा। मैंने हैरानी से पूछा कि इतना बड़ा है! उसने कहा कि यह जगह राजाजी टाइगर रिजर्व का हिस्सा है। अब मैंने आश्रम के भीतर जानेवाली खड़ी ढाल जैसी सड़क पर पैदल यात्रा शुरू की।

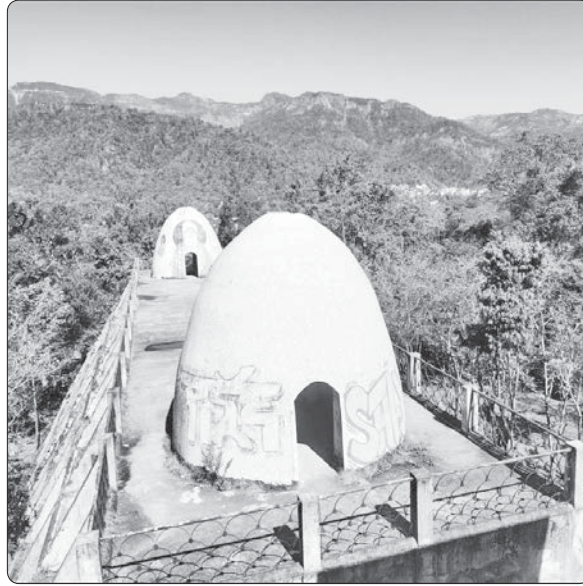
आसपास सन्नाटा पसरा हुआ था। इक्का-दुक्का जोड़े ही पर्यटक के रूप में नजर आए। आश्रम के भीतर जाते हुए ऐसा लग रहा था मानो किसी रहस्य लोक में प्रवेश कर रही हूँ, जहाँ कुहासा सा छाया हुआ था। ठीक वैसे ही जैसे सर्दियों में कोहरा सा छा जाता है। ऐसा कोहरा जिसके पीछे से धुंधले साए होते हैं। चौरासी कुटिया, बीटल्स आश्रम और महेश योगी क्या संबंध है इन शब्दों का आपस में? अब जिज्ञासा जोर मारने लगी थी तो चलते-चलते गूगल किया तो गूगल ने अपने समाधान दिए। गूगल ज्ञान ने बताया कि इस पृथ्वी पर मौजूद चौरासी लाख योनियों में से चौरासी अंक लिये गए हैं। भारतीय विश्वास के अनुसार मानव जीवन में लौटने से पहले प्राणी को चौरासी लाख योनियों में जन्म लेना होता है। उसी के आधार पर चौरासी कुटीर नाम रखा गया था। किंतु चौरासी कुटीर के बारे में गूगल पर उपलब्ध सामग्री गलत सिद्ध हुई, जब यहाँ का सूचना-पट देखा। पढ़ने पर पता चला कि चौरासी कुटीर नाम योग के चौरासी शास्त्रीय आसनों का प्रतिनिधित्व करता है, न कि चौरासी लाख योनियों का। योग में शास्त्रीय आसनों की संख्या चौरासी है। सामूहिक रूप से चौरासी आसान मानव जीवन के प्रत्येक पहलू का प्रतिनिधित्व करते हैं। चौरासी कुटीर लोकप्रिय रूप से बीटल्स आश्रम के रूप में जाना जाता है, क्योंकि यह वह स्थान है, जहाँ बीटल्स रुके थे, जब वे महर्षि से पारलौकिक ध्यान सीखने के लिए ऋषिकेश आए थे। इस स्थान को बीटल्स आश्रम के नाम से अधिक और चौरासी कुटीर के नाम से कम ही जाना जाता है।

गेट से घुसते ही छोटी-छोटी पैगोडा जैसी कुटिया दिखने लगीं, जोकि ध्यान कुटीर रही होंगी। परिसर में घुसते ही सामने के हॉल में फोटो

गैलरी और उसके बगल में कैफे नजर आया। कैफे के बगल में तीन विशाल हॉल में फोटो प्रदर्शनी है। एक हॉल ट्रांसडेंटल मेडिटेशन और महर्षि महेश योगी को समर्पित है। दूसरा हॉल आश्रम में बीटल्स और अन्य प्रसिद्ध आगंतुकों की सूचना देता है और तीसरा हॉल राजाजी टाइगर रिजर्व के जंगलों के निवासियों और इसके जंगली जानवरों से परिचित कराता है।

बीटल्स फरवरी १९६८ में ऋषिकेश आए। विश्वविख्यात का भारत आना पूरे विश्व के लिए अत्यंत जिज्ञासा का कारण बन गया। बीटल्स के लिए उनका ऋषिकेश प्रवास न केवल आध्यात्मिक जागृति के लिए उपयोगी था बल्कि उनके संगीत के लिए भी सर्वाधिक सृजनात्मक अवधि में से एक था। पॉलमेकारटनी और रिंगोस्टार की अपेक्षा जॉर्ज हैरिसन और जान लेनन ध्यान के प्रति पूरे समर्पित थे। उन्होंने इस प्रवास के दौरान ४८ गाने लिखे, जिसमें से कई गाने १९६८ में रिलीज उनकी चार्ट बस्टर संगीत एल्बम 'व्हाइट एल्बम' में शामिल किए गए। उनका यह प्रवास बेशक कड़वाहट के साथ खत्म हुआ, लेकिन इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि इस प्रवास का उनके संगीत पर जबरदस्त प्रभाव पड़ा था। उन्होंने यहाँ अपने कई गीतों की रचना की। ऐसा माना जाता है कि आश्रम में उनका प्रवास सबसे अधिक उत्पादक काल में से एक था। जॉर्ज हैरिसन ने सितार बजाना भी सीखा। बीटल्स के प्रवास के कारण पश्चिमी विश्व में महेश योगी, भारत की संस्कृति, रहन-सहन, खान-पान, पहनावे की ओर असाधारण आकर्षण पैदा हुआ।

पश्चिम में जब हिप्पी संस्कृति का बोलबाला था तो दुनियाभर में लाखों लोग महर्षि महेश योगी के दीवाने हो रहे थे। महर्षि महेश योगी ही थे, जिन्हें योग और ध्यान को दुनिया के कई देशों में पहुँचाने का श्रेय दिया जाता है। आखिर कौन है यह महेश योगी, जिनकी ख्याति से बीटल्स जैसा विश्वविख्यात पॉप बैंड गायक ऋषिकेश स्थित उनके आश्रम में आ गए? दरअसल इलाहाबाद विश्वविद्यालय से भौतिकी में स्नातक की उपाधि अर्जित करनेवाले महेश प्रसाद वर्मा से महर्षि महेश योगी बनने तक की यात्रा में अनेक पड़ाव रहे। तेरह वर्ष तक ज्योतिर्मठ के शंकराचार्य स्वामी ब्रह्मानंद सरस्वती के सान्निध्य में शिक्षा ग्रहण करनेवाले महर्षि महेश योगी ने शंकराचार्य की मौजूदगी में रामेश्वरम् में दस हजार बाल ब्रह्मचारियों को आध्यात्मिक योग और साधना की दीक्षा दी। हिमालय क्षेत्र में दो वर्ष का मौन व्रत करने के बाद सन् १९५५ में उन्होंने भावातीत ध्यान की शिक्षा देनी आरंभ की। बीटल्स गमन के बाद आश्रम के संस्थापक महर्षि महेश योगी ने अपनी गतिविधियों को मुख्य रूप से यूरोप की ओर बढ़ाया। वे

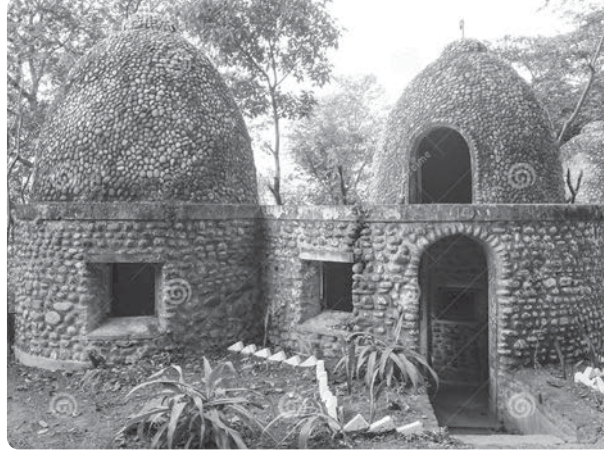


स्वयं नीदरलैंड में जाकर बस गए और शिक्षा देने लगे; वहाँ महर्षि महेश योगी ने 'राम' नाम की एक मुद्रा भी चलाई थी, जिसे नीदरलैंड्स ने साल २००३ में कानूनी मान्यता दी थी।

ऋषिकेश आश्रम भले ही चालू रहा हो, लेकिन १९७० के बाद आश्रम खाली होता चला गया गया। अंततः १९९० के दशक में इसे छोड़ दिया गया और इमारतों ने धीरे-धीरे खँडहर बनने की अपनी यात्रा शुरू कर दी। २००३ में स्थानीय वन विभाग ने इसे अपने कब्जे में लिया। फिर १२ साल के बाद पर्यटकों के लिए खोल दिया गया। आज यह आश्रम उन दिनों की भूतहा निशानी भर रह गया है।

आश्रम पर्यटकों के लिए खोल तो दिया गया, किंतु इसकी हालत देखकर लग रहा है कि पर्यटन की दृष्टि से इसके रख-रखाव के नाम पर टिकट खिड़की, कैफे आदि बनाने के अतिरिक्त कोई ध्यान नहीं दिया गया है। इमारतें ढह रही हैं और साफ-सफाई की भी कमी है।

यहाँ प्रवेश द्वार से ऊपर की ओर चढ़ते हुए बाईं ओर रुद्राक्ष के वृक्ष दिखने लग जाते हैं। अनेकानेक दुर्लभ वनस्पतियों से भरा उद्यान उचित देखरेख के अभाव में भी अपनी उपस्थिति बनाए हुए है। बाईं ओर पोस्ट ऑफिस, प्रिंटिंग प्रेस और रसोई की इमारतें भव्य अतीत का



स्मरण दिला देती हैं। मेरी बाईं ओर किचन था, जिसके बारे में बोर्ड ने कहा कि आश्रम के ५०० निवासियों को खाना खिलाया। यूरोपीय मॉडल के किचन में तीन वक्त का शाकाहारी भोजन दिया जाता था। साठ के दशक में निर्मित प्रिंटिंग प्रेस महेश योगी के पारगमन ध्यान से संबद्ध साहित्य को प्रकाशित करने का कार्य करती थी। विश्वविख्यात पुस्तक 'द साइंस ऑफ बीइंग एंड द आर्ट ऑफ लिविंग' तथा गीता पर महेश योगी की टीका इसी मुद्रणालय से छपी थी।

यहाँ घुसते ही टूटी दीवारों पर बने हुए ग्राफिटी आर्ट सहसा ही ध्यान खींच लेते हैं। कंटेम्पररी चित्र कला शैली में साधु, ध्यान योग, बीटल्स गायकों की छवियाँ बरबस ही पर्यटकों को कैमरा उठाने पर विवश कर देती हैं। थोड़ा चलने के बाद मैं उस स्थान पर पहुँची, जहाँ लिखा हुआ था—चौरासी कुटीर। कच्चे पत्थरों से ढकी छोटी-छोटी पैगोडा जैसी कुटियाँ दिखने लगीं। यही वे कुटिया हैं, जो साधकों के ध्यानयोग के लिए प्रयुक्त की जाती रही हैं। जैसे-जैसे मैं करीब आई, मुझे दो मंजिला कुटिया भी दिखाई दे रही थी, जिसमें दो मंजिलों को जोड़नेवाली एक छोटी सी बुनियादी सीढ़ियाँ थीं। मैं कल्पना कर सकती थी कि साधक यहाँ आँखें बंद करके बैठे हैं और केवल जंगल की आवाजें या नीचे गंगा की आवाज सुन रहे हैं। एक छोटा शिव मंदिर भी था, जिसमें दो शिवलिंग और एक नदी थी।

इसके थोड़ा आगे चलने पर जर्जर किंतु भव्य भवन दिखाई देने लगे। १९७६ में आनंद भवन और सिद्धि भवन नाम से निर्मित खूबसूरत सीढ़ीदार इमारतें 'पारगमन ध्यान योग' के एडवांस कोर्स साधकों के आवास के लिए निर्मित की गई थीं। यानी यहाँ से दीक्षा लेने के बाद साधक अध्यापक बन जाते थे। खँडहर होने के बावजूद इन इमारतों की वास्तुकला निश्चित रूप से इंजीनियर की कुशलता का परिचय दे रही हैं। एक ऐसा मायाजाल सा इन इमारतों में फैला हुआ था, जो इन इमारतों को रहस्यमयी छवि प्रदान कर रहा था। इनकी खूबसूरती को निहारते हुए भय की सिहरन भी दौड़ जाती है। उलझी-सुलझी घनी लताओं के बीच इमारतों में पसरे हुए सन्नाटे के बीच ऐसा लगता था कि शायद कोई है, जो उन लताओं के झुरमुट से देख रहा है। किसी साधक की अधूरी साधना का प्रतिबिंब सा दिमाग में कौंध जाता।

गंगा की कलकल अब स्पष्ट सुनाई देने लगी थी। आगे महेश योगी की स्वयं की कुटीर दिखाई दी। दूर से बहुत सादी सी दिखनेवाली कुटीर पास जाने पर अपनी विशिष्टता दिखाने लगी। इसकी प्रत्येक दीवार पर योगीजी की उपस्थिति मानो दिखाई पड़ी। साथ ही तहखाने की सीढ़ियाँ भी दिखाई दीं। तहखाने को लेकर मन में अनेक प्रकार के विचार उठे। मन किया कि नीचे जाकर

देखूँ, पर नीचे छाया बियाबान अँधेरा देख मन ने असहमति जताई। बड़े कदम वापिस खींचकर अपन अब बाहर की ओर निकल चले। महर्षि महेश योगी ने चौरासी कुटीर आश्रम के लिए १९६० में तत्कालीन यूपी वन विभाग से गंगा के नजदीक १५ एकड़ जमीन पट्टे पर देने का अनुरोध किया था। १९६१ में जमीन ४० साल के लिए पट्टे पर दे दी गई थी। अमरीकी उत्तराधिकारिणी डोरिस ड्यूक से दस लाख डॉलर के अनुदान से महर्षि आश्रम १९६३ में निर्मित हुआ था। १५ एकड़ के जंगल में निर्मित आश्रम में छह बैंगले, सब्जियों के अनेक बाग, महर्षि का बैंगला, पोस्ट ऑफिस, लैक्चरथिएटर और स्वीमिंग पूल के खँडहर आज भी इसकी भव्यता के साक्षी हैं।

दो घंटे से ऊपर हो चले थे घूमते हुए। मन तो था कि ऐसे ठहरे हुए समय में ठहरकर उस समय को अनुभव करूँ, पर दिल्ली वापिस निकलना था। इसलिए खुद से वापिस आने का झूठा दिलासा देकर वहाँ से निकल ही ली। तेज बारिश का मौसम, गंगा का भारी बहाव, घुमावदार सड़क पर छोटे-छोटे झरनों का पानी बहता हुआ, ताजगी भरी हवा—सब कुछ गुनगुना सा रहा है—लव लव मी डू!

सा
अ

आर-३८, वाणी विहार
उत्तम नगर, नई दिल्ली-११००५९

नेताजी का तुलादान

• श्रीकृष्ण सरल

‘तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा’, नेताजी सुभाषचंद्र बोस का यह कथन आजाद-हिंद-फौज के अगणित वीरों के लिए बलिदान का मंत्र बन गया था। भारत की आजादी के लिए सुभाषचंद्र बोस की सेवाएँ कभी भुलाई नहीं जा सकतीं। २३ जनवरी, १९४६ को बर्मा की राजधानी रंगून में वहाँ की भारतीय माताओं और बहनों ने नेताजी को उनकी अड़तालीसवीं वर्ष-ग्रंथि के उपलक्ष्य में सोने से तौला था। वह सोना नेताजी ने युद्ध-कोष में दे दिया था।



दिन के प्रकाश-सा फैल गया, प्रिय समाचार यह घर-घर में गलियों, सड़कों, चौराहों की चर्चाओं के स्वर-निर्झर में, है नेताजी का तुलादान, सोने से तौले जाएँगे सोना गलकर लोहा होगा, हथियार सिपाही जाएँगे।

दीवानों के भुजदंडों में, फिर एक नया बल आएगा भारत के नभ से अंग्रेजी शासन सूरज ढल जाएगा, प्रिय समाचार यह फैला क्या, जैसे पागलपन फैल गया दिल फैल-फैलकर बड़े हुए, पथ पर जन-जीवन फैल गया।

थी तुलादान की एक राह जिस पर निर्धन-धनवान चले नर-नारी, बालक-वृद्ध चले, बल खाते हुए जवान चले, माताओं के आशीष चले, बहनों के मंगल-गान चले साधना चली कुल-वधुओं की, कुल-वधुओं के भगवान चले।

सपने होकर साकार चले, संकल्प वक्ष निज तान चले उत्साह उमड़ता हुआ चला, हौसले चले अरमान चले, उठ-उठ फूलों के हार चले, सज-सज कुंकुम के थाल चले जिनको जो कुछ भी लगा हाथ, अपनी झोली में डाल चले।

लख तुलासीन नेताजी को, स्वर्णाभूषण अब मचल पड़े वे लगे कूदने पलड़े पर, कुछ जड़े हुए कुछ बिना जड़े, पहले उनमें सम्मोहन था, निज बल अब लगे आजमाने आजादी जैसे शमा बनी, आभूषण जैसे परवाने।

पलड़े को नीचा कर देने, चूड़ियाँ चलीं खन-खन करतीं जेबें-पाजेबें चलीं सभी, पायलें चलीं झन-झन करतीं, अलबेले बाजूबंद चले, झूलते हुए गलहार चले चल दिए थिरकते कर्णफूल, बिंदियों के बंदनवार चले।

ये सब-के-सब चल दिए, किंतु दोनों पलड़े सम नहीं हुए मंजिल का छोर नहीं पाया, हौसले किंतु कम नहीं हुए, इतने में कोई बहन बिलखती-रोती आकर खड़ी हुई तरु के कट जाने से जैसे हो लता विपन्ना पड़ी हुई।

बोली—मैं आज अनाथ हुई, वे आर्यपुत्र मुख मोड़ गए वे लड़ते-लड़ते खेत रहे, यह एक निशानी छोड़ गए, मैं मंगल-सूत्र चढ़ाती हूँ, यह मातृभूमि हित अर्पण है यह मेरा अपना हृदय और उनके भावों का दर्पण है।

हे जन-त्राता! इस दुखिया की यह तुच्छ भेंट स्वीकार करो बंधन-युत भारत माता की उजड़ी आशा में रंग भरो, आँसुओ! थमो, उनकी स्मृति के अंतिम दर्शन कर लेने दो हतभागिनी बेटी को धरती माँ की पीड़ा हर लेने दो।

सौभाग्य-चिह्न जाओ, तुमको है सेवा का सौभाग्य मिला जाओ हर एक सुहागिन का सौभाग्य-कमल हो खिला-खिला, नेताजी की वाणी ही क्या, हर वाणी ही अवरुद्ध हुई हर आँख हुई धुलकर पावन, हर एक भावना शुद्ध हुई।



श्रीकृष्ण सरल उस समर्पित और संघर्षशील साहित्यकार का नाम है, जिसने लेखन में कई विश्व कीर्तिमान स्थापित किए। सर्वाधिक क्रांति-लेखन और सर्वाधिक महाकाव्य (बारह) लिखने का श्रेय सरलजी को ही जाता है। उन्होंने एक सौ सत्रह ग्रंथों का प्रणयन किया। नेताजी सुभाष पर तथ्यों के संकलन के लिए वे स्वयं खर्च वहन कर उन बारह देशों का भ्रमण करने गए, जहाँ-जहाँ नेताजी और उनकी फौज ने आजादी की लड़ाइयाँ लड़ी थीं। श्रीकृष्ण सरल स्वयं स्वतंत्रता संग्राम सेनानी रहे तथा प्राध्यापक के पद से निवृत्त होकर आजीवन साहित्य-साधना में रत रहे।

साहस बटोर नेताजी ने, निज अधरों के संपुट खोले
विगलित करुणा से आहत हो, वे रूँधे हुए स्वर में बोले
यह केवल दान नहीं बहना! तुमने हमको वरदान दिया
आनेवाली हर पीढ़ी को, तुमने शाश्वत अभिमान दिया।

तुम रोती हो मत रोओ अब, तुमने भाई तो पाया है
यह समझो मंगल-सूत्र देश के लिए विजय ले आया है,
यह नई भेंट पाकर पलड़ा कुछ हिला-डुला, पर झुका नहीं
चुक गए सभी के आभूषण, उत्साह किसी का चुका नहीं।

इतने में एक वृद्धा माँ को, कोई थामे-थामे लाई
करुणा-ममता ही देह धरे, नेताजी के सम्मुख आई,
बोली - बेटा तो चला गया, हँसकर फाँसी पर झूल गया
केवल आँखें ही रोती हैं, भीतर-भीतर मन फूल गया।

नटखट था वह, कहता था माँ! मैं अपना ब्याह रचाऊँगा
तेरी सेवा हित शहजादी आजादी दुलहिन लाऊँगा,
वह ऐसा गया न लौट सका, मेरे अरमान तड़पते हैं
आजादी दुलहिन लाऊँगा, यह सुनने कान तड़पते हैं।

माँ का मंदिर पा जाय कलश, इसलिए नींव में समा गया
सोने की चौखट में अपनी तसवीर मुझे यह थमा गया,
यह कहकर कंपित हाथों से, वह चित्र धरा पर पटक दिया
जो मोह अभी तक घेरे था, मानो यों उसको झटक दिया।

बेटे का चित्र लगा उर से, वह चौखट रख दी पलड़े पर
नीचे-ऊपर ऊपर-नीचे, दोनों पलड़े झूले थर-थर,
गति चंचलता की दूर हुई, स्थिरता पाई समता ने
नेताजी को था तौल लिया, तप ने करुणा ने ममता ने।

सा
अ

प्रस्तुति : धर्मेश सरल शर्मा
दूरभाष : ९५३८०६०८९४

पाठकों से निवेदन

- ❖ जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- ❖ सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- ❖ सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- ❖ बैंक साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ❖ ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 600120110001052 IFSC-BKID 0006001 में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- ❖ आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- ❖ सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. 011-23257555, 8448612269 अथवा sahytaamritindia@gmail.com पर ई-मेल करें।

बुरा मत मानिए

● राहुल राजेश

मेरा देश

सीना चौड़ा हो जाता है
अभिमान से
सिर तन जाता है शान से
नथुने फूल जाते हैं गुमान से

जब देखता हूँ इसे
लहराते हुए खुले आसमान में

करता हूँ मैं इसे प्यार
अपने दिलो-जान से

आजादी का परचम है
मेरा स्वाभिमान, मेरा मान है ये

गांधी, नेहरू, सुभाष, पटेल की थाती है
इन्हीं तीन रंगों में रँगी लोकतंत्र की बाती है

थके हुए तीन रंगों का नाम नहीं है मेरा देश
ढह गए खंभों का नाम नहीं है मेरा देश

आजादी के होंठ सबसे सुख हैं यहाँ
सबसे हसीन है यहाँ की आबो-हवा

माना, अभी पूरी पकी नहीं है मिट्टी
पर कोई कच्चा घड़ा नहीं है मेरा देश

जरा गौर से देखो, दुनिया के आईने में
सबसे हँसता हुआ बच्चा है मेरा देश!

आधुनिक

थोड़ा अटपटा पहनें, आधुनिक दिखेंगे
थोड़ा अलग बोलें, आधुनिक कहलाएँगे
हिंदी कम, अंग्रेजी अधिक बघारें,
आधुनिकों की जमात में जल्दी जम जाएँगे
स्वीकारें कम, नकारें अधिक,
आधुनिकों की अग्रिम पाँत में गिने जाएँगे

परंपराओं में क्या रखा है ?
वह आदमी ही क्या जिसने
रातों की रंगीन महफिलों में विदेशी
हिस्की का स्वाद नहीं चखा है !

कभी परंपरा पर प्यार आ गया
तो बहुत हुआ तो माथे पर भभूत या
गले में रुद्राक्ष की माला डाल लिया !
पर कवियन की वार्ता हो कि लिटफेस्ट
देश को जी भर नहीं कोसा तो क्या किया ?

वो आजादी ही क्या जो अराजक न हो
वो अभिव्यक्ति ही क्या जो निरंकुश न हो
जो आपके नहीं हैं, वे सब बिके हुए हैं !

वाकई क्या गजब की परिभाषाएँ गढ़ी हैं
मानो संविधान की आयतें सिर्फ आपने पढ़ी हैं !

बुरा मत मानिए जनाब !
बहुत उथली आपकी जड़ें हैं
आधुनिक होने के उपक्रम में
आपने जो प्रतिमान गढ़े हैं,
वे बिल्कुल सड़े हैं !

माना, आपके मंसूबे बड़े हैं
पर सच तो यह है कि
आप किसी मुगालते में पड़े हैं !

इस देश में वे सब एक साथ खड़े हैं
जो इसी देश, इसी मिट्टी में पले-बढ़े हैं !

आजादी

जिसके खिलाफ लिखी
उसी पूँजीपति की पत्रिका में
छपी कविता



सुपरिचित लेखक। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। कुछ रचनाएँ अंग्रेजी, उर्दू, मराठी, उड़िया आदि भाषाओं में अनूदित। संप्रति भारतीय रिजर्व बैंक में प्रबंधक।

जिसके खिलाफ बोला
उसी के हाथों
मिला पुरस्कार

जिसके खिलाफ किया
धरना-प्रदर्शन
उसी सरकार में
की नौकरी

जिसके खिलाफ
खड़ा हुआ
उसी ने दी
बैठने की जगह

जिसके खिलाफ
उगला जहर जीभर
उसी ने बढ़ाया जल
करने को गला तर

जिसके खिलाफ
हुआ लामबंद
उसी देश, उसी धर्म ने दी
यह सब करने की आजादी !

सा
अ

जे-२/४०६, रिजर्व बैंक अधिकारी आवास
गोकुलधाम, गोरेगाँव (पूर्व), मुंबई-४०००६३
दूरभाष : ९४२९६०८१५९

भगवत

● मानेश्वर मनुज

भगवत झा मर गए। श्राद्ध कर्म चल रहा था। बड़े बेटे कारी झा थे। छोटे बेटे का नाम बीकन था। सुंदर नाम बेटों को रखने से भगवत झा डर गए थे। बोले थे, 'सुंदर नाम रखने से क्या लाभ जब जिंदा ही नहीं रहेगा'। अधिकतर बच्चे और युवा या तो महामारी से न तो किसी-न-किसी बीमारी से मारे जाते थे। लोग इसी तरह के नाम रखते—झिंगुर, चुल्हाई, हरिजन, घूरन, फेकन, फीरन, मुसहर, कारी और बीकन। उसी तरह जो मृत्यु से नहीं डरते थे, वे बेटों के नाम साहेब, बाबू साहेब, बच्चा बाबू, राजकुमार रखते थे। गाँव में सबसे गरीब और पाँव से नगड़ा आदमी का नाम कीर्तिबल था। एक चरवाहे का नाम अशफ़ी था। एक अत्यंत गरीब खेतिहर मजदूर का नाम मोहित था।

भगवत झा का श्राद्ध कर्म चल रहा था। कारी और बीकन श्राद्ध कर रहे थे। बड़े शांत चित्त से दोनों श्राद्ध कर रहे थे। फाल्गुन का महीना था। मौसम अच्छा था। दोनों भाई खुशी-खुशी श्राद्ध कर्म कर रहे थे। मिहनत भी करनी पड़ रही थी। किसान भी तो अपने खेतों में काम करते। प्रसन्न चित्त रहते। मिहनत भी होती, थक भी जाते। प्रसन्नता भी उतनी ही होती। एक तो समय पर बारिश होने की प्रसन्नता, दूसरी खेतों में समय से बीज डालने की प्रसन्नता और अंत में फसल काटने का महापर्व। धान की रोपनी के वक्त का अजीब सा दृश्य। कृषक सुंदरियाँ एक साथ गीत गातीं और एक साथ कतार में धान रोपती रहतीं।

कारी और बीकन भी बड़े खुश थे। पिताजी बहुत दिनों से बीमार रहते थे। आँखें बँट गई थीं। देख नहीं पाते थे। चल-फिर नहीं सकते थे। शौच क्रिया भी दूसरों की सहायता से ही करते थे। ऐसी हालत में चले जाना ही अच्छा था। बड़े कष्ट में थे। संसार के सारे सुखों से वंचित थे। एक तरह से जीना ही व्यर्थ था। पिताजी की मृत्यु के बाद दोनों भाई ऐसे एहसास कर रहे थे, जैसे एक बहुत बड़ी बली टला। कोई प्रलयकारी तूफान आया और उन्हें लेकर चला गया।

किसान जिस तरह कुछ देर काम करते और कुछ देर सुस्ता लेते, किसी ऊँची जगह पर बैठ तंबाकू तलहत्थी पर रख तैयार करते, सबके



सुपरिचित रचनाकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। तकनीकी सुपरवाइजर भारतीय वायुसेना से सेवानिवृत्त होकर अब स्वतंत्र लेखन में रत।

साथ बाँट-बाँटकर खाते और फिर काम करने लग जाते। वे दोनों भी दो-तीन पिंड देते और उठकर हाथ-पाँव धोकर बगल में बैठ जाते थे। लोगों के लिए पान, सुपारी और जर्दा की व्यवस्था थी। कुछ ठंडा, कोको-कोला, थम्स-अप की भरी बड़ी-बड़ी बोतलें भी रखी रहती थीं। कर्म करनेवाले बीच-बीच में आहार के रूप में कुछ फल खाते थे और लस्सी पीते थे। सुबह से ही एक विदूषक टाइप का आदमी जब कभी मौका मिलता, कुछ-न-कुछ कहने लगता था। बड़ी गंभीरता से बातें उठाते थे, बातों को आगे बढ़ाते थे, लोगों को लगता था कि बेवजह ये यहाँ आकर सबका दिमाग चाट रहे हैं, किंतु अंत में ऐसी फुलझिड़ियाँ झड़ती थीं कि सभी हँस-हँसकर लोट-पोट हो जाते थे। दोनों भाई जो थोड़ा-बहुत थके थे—वे भी हँस देते। काम फिर शुरू हो गया। आसन्न पर बैठ गए। महापंडित मंत्र पढ़ाने लगे और वे पढ़ते गए। पिंडदान करते गए। कारी मंत्र पढ़ते-पढ़ते सोच रहे थे कि विदूषकजी ने कौन सी ऐसी बात कह दी थी कि सारे लोग दीवाली के फटाके तथा फुलझिड़ियों की तरह एकाएक खिल उठे और संपूर्ण वातावरण में ठहाके गूँज उठे। सभी हँस रहे थे तो वह भी हँस दिए, किंतु बातें शुरू से अंत तक ठीक से समझ नहीं पाए थे।

दूसरी बार भी वे दो-तीन पिंडदान की क्रिया समाप्त करके उठे। इस बार स्वयं कारी ने उनसे हँसी के गुलछर्रे छोड़ने कहा। फिर वे बड़ी गंभीरता से कहानी सुनाने लगे। ऐसा लगता था कि इस बार वे ऐसे ही कुछ अजूब-फजूब बक रहे हैं, किंतु जब अंत पर पहुँचे तो अरे वाह! फिर वही हँसी। इस तरह दो-तीन बार वे और भी उठते, कहानियाँ

सुनकर, कुछ देर हँसते और फिर काम पर बैठ जाते। दर्शक पिंडदान के साक्षी के रूप में बैठे थे। एक से एक लोग आते थे—दरी पर बैठते थे। पान-सुपारी परोसा जाता था। कुछ देर गप्प-शप्प करते और चल देते थे। कारी जो कर्ता के रूप में वहाँ के मुख्य आदमी और होस्ट थे—विदूषकजी को बोलकर रखा था कि जब वे कर्म करके कुछ देर के लिए उठते हैं, तभी वे कहानियाँ कहें और विदूषकजी एक बार में दो-तीन कहानियाँ कहते थे। चोर की कहानी, जो वह पहली बार समझ नहीं सके थे, उसे भी फिर से कहने का आग्रह कर दूसरी बार मूलभूत रूप से हँस पड़े थे।

मैं भी एक अतिथि के रूप में वहाँ बैठा था। तालाब किनारे आम के पेड़ के नीचे ठंडी हवा में बैठने का बड़ा मजा आ रहा था। वहाँ अधिकतर वयोवृद्ध और पंडित लोग थे। कोई हाईस्कूल से सेवानिवृत्त शिक्षक, तो कोई महाविद्यालय के सेवानिवृत्त प्राध्यापक। कुछ शिक्षित संपन्न किसान भी थे। मैं संस्कृत माध्यम से शिक्षा ग्रहण कर रहा था और मध्य विद्यालय की पढ़ाई कर रहा था। एक महाशय मुझसे परिचय-पात करते एक सवाल कर बैठा था। जिनका श्राद्ध कर्म चल रहा था, उनका नाम भगवत झा था। उन्होंने मुझसे पूछा, 'भगवत् शब्द की व्याख्या कीजिए। इस शब्द की उत्पत्ति कैसे हुई और इसका सही अर्थ क्या होता है?' मैं अवाक् रह गया। ऐसा सवाल तो आज तक किसी ने नहीं किया था। मैं कोई भी जवाब नहीं दे सका था। उन्होंने फिर से मुझसे पूछा किस कक्षा में पढ़ते हैं? मैं शरमाता हुआ बोला, 'प्रथमा में'।

फिर उन्होंने मुझे लजाया, 'प्रथमा में जाकर इतना भी नहीं जानते? शब्द-रूप-धातु रूप पढ़ते हैं क्या?' मैंने कहा, 'हाँ।'

कोई शब्द-रूप पढ़ने को उन्होंने मुझे कहा। मैं वहाँ लटक गया। फिर धातु रूप कहने को कहा। मैं वहाँ भी लटक गया। मैं इतना लज्जित हो गया था कि दिल करता था, वहाँ से भाग जाऊँ, किंतु किस बहाने भागूँ? वे महाशय वहाँ से उठ ही नहीं रहे थे कि बाद में मैं भी उठ जाऊँ। उनके सामने उठकर चल देना मैदान छोड़कर भागना था। चाहे हार ही क्यों न रहे हों। युद्ध का मैदान छोड़कर भागना नहीं चाहिए, ऐसा मैंने सीखा था।

विदूषकजी की किसी भी कहानी से मुझे कोई मजा नहीं आ रहा था। मेरे कान का मार्ग अवरुद्ध हो गया था और मैं उन्हीं शब्दों के अर्थ ढूँढ़ने में लगा था। श्रीमद्भगवद्गीता के इर्द-गिर्द मैं घूम रहा था। श्री का क्या अर्थ हुआ? मद्, भगवत् और गीता में से किसी भी शब्द का तो स्पष्ट अर्थ नहीं जानता। व्युत्पत्ति कैसे हुई? बड़ा गंभीर विषय था। मैं मन-ही-मन सोच रहा था कि लोग कहते हैं कि मुझे आम खाने से

मतलब है, गुठली गिनने से नहीं। श्रीमद्भगवद्गीता एक महाकाव्य है, जिसमें धृतराष्ट्र संजय से युद्ध के विषय पूछते हैं, संजय सबकुछ बताते हैं और अंत में गीता अर्जुन को दिया गया उपदेश है। गीत से गीता हो सकती है, भला गीता उपदेश कैसे हो सकती? मैं बुरी तरह से इस उलझन में फँसा था। सब कोई तालाब किनारे, वृक्ष के नीचे, पूजा-पाठ, पिंडदान, लोगों का जमावड़ा, पान-सुपारी और थम्सअप, कोकाकोला का आनंद और उसके बीच गोनू झा के भी बाप विदूषक की कहानियाँ और मैं बालक अध्ययन कर रहा था मन-ही-मन। व्यंग्य कहानियों से दूर हटकर मेरा मन शब्दों के जंगल में भ्रमण करने लगा था। मैं शर्म से मर रहा था कि मैं कुछ भी नहीं जानता।

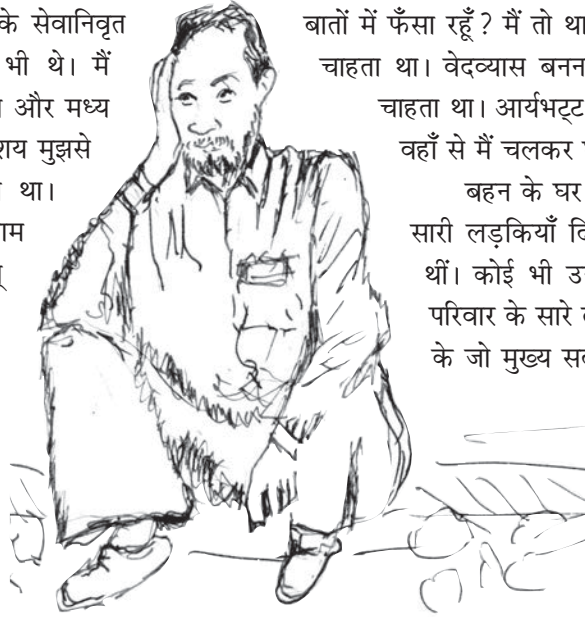
प्रत्यय और उपसर्ग तो जानता था, किंतु उससे बात नहीं बनती थी। मैंने खुद से कहा—क्या मैं व्याकरण का विद्यार्थी हूँ कि इन सभी बातों में फँसा रहूँ? मैं तो था साहित्य का विद्यार्थी। कालिदास बनना चाहता था। वेदव्यास बनना चाहता था। महावैयाकरण नहीं बनना चाहता था। आर्यभट्ट और वराहमिहिर नहीं बनना चाहता था। वहाँ से मैं चलकर घर आ गया।

बहन के घर पर था। अड़ोस-पड़ोस की तथा घर की सारी लड़कियाँ दिनभर मजाक करके मुझे परेशान करती थीं। कोई भी उन लोगों से बचानेवाला नहीं था। घर-परिवार के सारे लोग काम-काज में लगे रहते थे और घर के जो मुख्य सदस्य थे, वे घर से दूर तालाब के किनारे पेड़ के नीचे पिंडदान का काम कर रहे थे।

मेरे साथ वहाँ भार लेकर एक भरिया भी गया था। उसे वहाँ बड़ा मजा आ रहा था। लड़कियाँ मेरे पीछे पड़ी रहती थीं। भरिया फेकना भी वहीं रहता था। जब वे कुछ-कुछ कहती थीं तो

फेकना उसमें हस्तक्षेप करना चाहता था। मैं अपनी तरफ से कोई भी प्रतिक्रिया नहीं दिखाता था, क्योंकि मैं संस्कृत पाठशाला का विद्यार्थी था। गुरुकुल का शिष्टाचार निभाता था। लड़कियों तथा औरतों से कम बातें करना और सदा दूरी बनाकर रखना, पुस्तकों के साथ सदा रहना और सदा अध्ययन के बारे में ही सोचते रहना। अल्प आहार लेना और सदाचार में रहना।

फेकना मुझे इन लोगों से जिताना चाहता था, या मेरे नाम पर खुद ही जीतना चाहता था। मुझे सिखाया गया था कि विद्या दो तरह की होती है—एक शास्त्र विद्या और दूसरी शास्त्र विद्या, जिनमें शास्त्र विद्या श्रेष्ठ होती है। मुझे क्या मालूम था कि स्कूल-कॉलेजों में भी बहुत कुछ गलत पाठ पढ़ाया जाता है। विद्या प्रहार करने के लिए ही होती। प्रहार का लक्ष्य होता है जीतना। शास्त्र का भी लक्ष्य होता है जीतना। जीतने के बिना जीवन कभी सफल नहीं हो सकता और जीतने के लिए सुरक्षा नहीं प्रहार करना होता है, और वह होता है शास्त्र से ही। इसलिए शास्त्र



शस्त्र से पीछे रह जाता है।

मैं लड़कियों से न तो बचाव करता था और न ही उन पर प्रहार। वे धक्कम-धक्का से मुझे जमीन पर लेटा भी देती थीं। हाथ-पाँव, बाल, गाल और नाक भी पकड़ लेती थीं। फेकना मेरी तरफ से बचाव और अपनी तरह से प्रहार भी करना चाहता था। वह पढ़ा-लिखा नहीं था, किंतु व्यावहारिकता में बड़ा होशियार था। बातों में तो किसी से भी नहीं हारता था।

गद्य-पद्य संग्रह में बड़े मनोयोग से पढ़ता था और पढ़ाई से आनंद प्राप्त करता था। आठवीं कक्षा तक जाते-जाते लड़के-लड़कियों की उम्र कुछ तेरह-चौदह हो ही जाती। वसंत में आम के पेड़ों में मंजरी के साथ सरसों के खेत फूलों से भी भर जाते। मुझे क्या पता था कि प्रकृति की बगिया में मैं भी एक फूल बन गया था, और लड़कियाँ फूलों का रस लेने के लिए मेरे ही इर्द-गिर्द घूमती रहती थीं। ये सारी बातें फेकना जानता था और वह अपने अनुभव का उपयोग करके कारगर होना चाहता था। वे दिन तालाब में नहाने और कुएँ का पानी पीने के थे। वे तालाब तक मेरा पीछा नहीं छोड़ती थीं। मैं जब कभी बहन के यहाँ जाता, रास्ते में ही कोई-न-कोई मिल जाती और बोलती, चलिए मैं आ रही हूँ, और जब तक मैं वहाँ रहता, वे हर समय मेरा पीछा करती रहतीं।

फेकना बोल रहा था कि जैसे मेरे साथ वहाँ गया था, वैसे ही साथ ही आएगा। इसलिए मुझे भी वहाँ से जल्दी ही आना पड़ गया। रास्ते में उसने अपने जीवन की कई कहानियाँ सुनाईं। उसके घर के पीछे ही माल-मवेशियों के लिए एक घास और खर-पतवार का मैदान था। मैदान के आगे लहलहाती धान या गेहूँ की फसल, और उसके उस ओर एक आम का घना बगीचा। घर-परिवार में स्त्री-पुरुषों को उमंग और उत्साह के क्षणों में, कभी-न-कभी, विकसित लड़कियाँ भी देख ही लेतीं। पारिवारिक नौकर चाहे किसी भी उम्र के होते, जिस तरह उसे मालिक-मालिकन आदेश देते, उसी तरह बढ़ती उम्र की लड़कियाँ भी आदेश देतीं। फेकना किसी एक ही परिवार में बहुत दिनों से नौकर का काम करता आ रहा था। उसे बढ़ती उम्र की लड़कियों के साथ रहने का मौका मिलता था। इस तरह की बातें करते वह मेरे साथ ही गाँव तक आया और पूरा रास्ता यह साबित करते आया कि मैं कितना नालायक और नासमझ हूँ।

गाँव में हम तीन-चार लोग एक साथ घर के बाहरी बरामदे पर सोते थे। चोर और डाकुओं की समस्या चारों ओर रहती थी। लोग रात के समय डरे-डरे रहते थे। देर रात तक बातचीत करते रहते थे। कोशिश करते थे कि कोई-न-कोई रात भर जगा रहें। गाढ़ी निद्रा में न सोए। कुछ नींद दिन में ही ले लें। मर्दों के साथ अंदर के घर और आँगन में

आदमी ने कहा कि पहले मैं उठकर बैठता हूँ। तुम सो जाओ। तुम जबतक सोई रहोगी मैं तुम्हारा झुमका देख-देख बोलता रहूँगा—‘घन्न कहूँ तेरे झुमका को, घन्न कहूँ तेरे झुमका को।’ उसी तरह औरत ने कहा कि जब तुम सो जाओगे तो तुम्हारी जाँघों की ओर देखकर मैं बोलती रहूँगी—‘घन्न कहूँ तेरी बाड़ी को, घन्न कहूँ तेरी बाड़ी को।’

औरतें भी डरी-डरी सी रहती थीं। डाकू जब घर में घुसते तो सबसे अधिक स्त्रियों पर ही टूटते। वे सिर्फ जेवर, गहने या रुपए ही लूटने नहीं आते। उनकी हिम्मत इतनी बढ़ जाती कि नई लड़कियाँ और प्रौढ़ा औरतों के अंग पर भी टूट पड़ते।

रातभर सभी अपने दरवाजे पर या तो अंत्याक्षरी खेलते या कोई चुटकुला कहते, तो कोई कहानियाँ सुनाते। मैं वहाँ भी सबसे पीछा था। न अंत्याक्षरी जानता था, न चुटकुले और न कोई कहानी।

लोगबाग कोई शीत-वसंत की कहानी कहते थे, कोई सप्ता-विपदा की कहानी तो कोई सुहाग की कहानी। एक-एक कहानी वे एक-एक घंटे तक कहते रह जाते थे। कहानी सुनकर सभी गंभीर हो जाते थे। मेरे पास कोई भी कहानी नहीं थी। पाठ्य-पुस्तक की कविता-कहानियों से

तो ऐसे ही परेशान रहता था। कितनी भी तैयारी करता था, सबसे अधिक मार्क्स कभी भी नहीं ले पाता था। कोई चाहे दूसरों को परीक्षा से पूर्व ही प्रश्न-पत्र दे देता था या जान-बूझकर मार्क्स बढ़ा देता था। मैं न मुख्य आरक्षण पर्यवेक्ष था, न भीड़-भाड़ के समय में हिंदी टीचर को रेल टिकट का जुगाड़ लगा देता था। टीचर दूसरे के बेटे को मनमाने नंबर दे देते थे।

सबके आग्रह पर कि मैं भी कोई कहानी कहूँ, मैं मन-ही-मन सोचने लगा कि कौन सी कहानी कहूँ? फेकना जो रास्ते में अपनी आप बीती बता रहा था, वही कह दूँ या वह जो एक लड़की शादी से पहले ही कह रही थी। सोचते-सोचते दिमाग वहीं भगवत झा की श्राद्धस्थली पर चला गया। छोटी सी एक कहानी, जो मैंने सुनी थी, कहना शुरू की।

एक दंपती यात्रा पर निकले थे। कहीं दूर-दराज पैदल ही। उस समय रेलगाड़ी और बस की व्यवस्था नहीं थी। अमीर लोग घोड़े-हाथी से सवारी करते थे। वकील-मुख्तार पालकी से कचहरी जाते थे। बैलगाड़ियों का जमाना था। बड़े किसान के पास ही बैल होते थे और गाड़ियाँ भी। वे बड़े ठाठ से बैलगाड़ियों से चलते थे। महंत लोग टायरगाड़ी से चलते थे। टायरगाड़ी से चलने से आराम मिलता था। एक दंपती अत्यंत गरीब थे। घर-द्वार टूटा-फटा था। उनके पास कुछ पहनने के कपड़े थे और कुछ जेवर। उस समय अकसर स्त्रियाँ गले में चाँदी की हँसुली पहनती थीं—वह भी कम-से-कम आधा किलो की। उनके पास भी एक हँसुली थी। उनके घर में किवाड़ भी नहीं थे। उस समय साधारणतया घरों में बाँस के फाटक हुआ करते थे।

गरमी का महीना था। दिन बड़ा होता था और रात छोटी होती थी। उन्हें जाना बहुत दूर था। गाँव दूर-दूर होते थे। रात बीच रुकने की समस्या थी। बीच-बीच में आम के बगीचे, नदियाँ और तालाब थे। बीच में बड़ी-बड़ी परतियाँ और बड़े-बड़े खेत थे। उन दोनों को जाते एक

चोर ने देख लिया। उसने अंदाजा लगाया कि इन्हें तो कहीं दूर ही जाना है। निश्चित रूप से इन्हें रात में कहीं ठहरना ही पड़ेगा।

सड़कें तो चौड़ी होती थीं, किंतु धूल बहुत ही उड़ रही थी और वे टेढ़ी-मेढ़ी जाती थीं। खेत के पगडंडियों से चलना आसान होता था। दूरी भी कम तय करनी होती थी। ऐसे चलते-चलते, दो गाँवों के बीच में ही अँधेरा हो गया। रास्ता दिखाई नहीं दे रहा था। दोनों ने विचार किया कि किसी मेंड़ के किनारे ही साफ-सुथरा देखकर रात बिता लेते हैं। किसी तरह रात कट जाएगी तो फिर चल पड़ेंगे। इस तरह दोनों एक जगह चादर डालकर सो गए। दोनों ने थोड़ी देर आराम किया। सोए-सोए दोनों ही बातें करने लगे। उधर चोर बगल की मेंड़ के किनारे छुपा था। जैसे ही दोनों सोते आहिस्ता से चोर उनकी गठरी-पोटरी, जेवर साहित ले भागता।

दोनों ने निश्चय किया कि एक कुछ देर सो जायेंगे और दूसरा बैठकर रखवाली करेगा। फिर दोनों ने शंका जताई। बैठकर भी तो नींद आ सकती है। चोर मौके का फायदा उठाकर सारा सामान लेकर चला जाएगा। चोर तो साधारण आदमी से ज्यादा चालाक होता है। दिन में सोता है और रात में जगता है। जंगल-झाड़ियों में या खेतों की मेंड़ों के बगल में छुपा रहता है और ध्यान लगाया रहता है कि कहाँ क्या हो रहा है? कहाँ क्या लोग बोल रहे हैं और कब तक जगे रहते और कब गहरी निद्रा में सो जाते? जैसे ही सोते, चोर काम तमाम कर देता है।

आदमी ने कहा कि पहले मैं उठकर बैठता हूँ। तुम सो जाओ। तुम जबतक सोई रहोगी मैं तुम्हारा झुमका देख-देख बोलता रहूँगा—‘घन्न कहुँ तेरे झुमका को, घन्न कहुँ तेरे झुमका को।’ उसी तरह औरत ने कहा कि जब तुम सो जाओगे तो तुम्हारी जाँघों की ओर देखकर मैं बोलती रहूँगी—‘घन्न कहुँ तेरी बाड़ी को, घन्न कहुँ तेरी बाड़ी को।’

इस तरह दोनों ने जो कुछ भी लाए थे पोटरी से निकालकर खा लिया। पहले आदमी ड्यूटी पर आया और औरत सो गई। उसी तरह घन्न कहुँ तेरे झुमका को बोलता रहा। फिर औरत की बारी आई और ‘घन्न कहुँ तेरी बाड़ी को’ वह कहती रही। इस तरह दोनों के दो-दो राउंड हो गए। तीसरा राउंड जब चल रहा था तो चोर ने पूरब की ओर देखा। सूर्य ने लाली दे दी थी। चोर को बड़ा गुस्सा आया और वह बीच सड़क पर नंगा खड़ा हो गया और कहने लगा, ‘मुँह मारूँ तुम दोनों के’।

यह कहते-कहते मैं भी बारामदे पर खड़ा हो गया और जैसे चोर ने कूद-कूदकर कहा था उसी तरह मैं भी कूद-कूदकर कहने लगा—‘मुँह मारूँ तुम दोनों के, मुँह मारूँ तुम दोनों के’ और वह भाग गया।

ऐसे कहते ही सभी भभाक हँस पड़े और ऐसे हँसे कि दो-तीन घंटों तक हँसते ही रहे। औरतें भी अंदर से सुन रही थीं। वे भी ठहाके

लगाने लगीं और देर रात तक हँसती रहीं। रात में उठ-उठकर हँसती थीं। बारामदे में मैं तो चैन से सो गया, किंतु वे मेरी ओर देख-देखकर हँस रहे थे। सुबह उठा तो मुझे देखकर फिर सभी हँसने लगे। मुझे ऐसा लग रहा था, जैसे मैंने कोई गलती कर दी, इसलिए सभी मुझ पर हँस रहे हैं।

मैं स्कूल चला गया। सोच रहा था कि जब लौटकर आऊँगा, सभी भूल जाएँगे और हँसना बंद कर देंगे। भोगेंद्र ने कहा कि मैं तो कुछ भी नहीं समझा। यह खड़े होकर दो-तीन बार उछलकर बारामदे से नीचे कूद गए, यही देखकर हँसने लगा। मालिक ने उसे समझाया, उसी में तो राज छुपा हुआ था। उसने उसे संक्षिप्त में समझाया तो वह फिर शुरू की तरह हँसने लगा।

मैं शरमा-शरमा कर कहता रहा कि यह कोई मेरी कहानी थोड़े ही थी? यह तो भगवत झा की श्राद्धस्थली पर सुनी कहानी थी।

मैं जितना ही सफाई देने लगता था, वे सभी उतने ही जोर-जोर से हँसने लगते थे। मुँह मारूँ तुम दोनों पे, कहकर मैंने तो अश्लील शब्द को चुरा लिया था। यदि वह भी शब्द लगाकर वाक्य पूरा करता तो वे और भी हँसते। महीने भर जब तक बारिश शुरू नहीं हुई, तब तक हँसते रहे। बारिश शुरू होने के बाद खेतों में पानी लग गया और धान की रोपनी शुरू हो गई। चोर-डाकुओं का आवागमन भी बंद हो गया। दिनभर खेतों में काम करने के बाद थककर सभी जल्दी सो जाते थे, और सुबह जल्दी उठकर खेत जाने की तैयारियाँ करने लगते थे।

मैंने एक बार मालिक से एकांत में कहा, ‘वह तो भगवत झा के श्राद्धस्थली पर सुनी गई एक कहानी थी। कोई मेरी कहानी थोड़े ही थी?’ तो उनसे कहा, इसीलिए वह कहानी पवित्र कहानी बन गई थी। आपने उस कहानी को कहकर महीनों भर लोगों को हँसाया, कोई छोटी बात है क्या? साथ ही सारा सूखा का समय उसी कहानी के बल कट गया। चोर-डाकुओं का भय मन से जाता रहा। उस मौसम में आपने हम लोगों का बड़ा उपकार किया था।

मैं सोचता रहा कि कहानियों से भी किसी का भला होता है, कारी झा वहाँ इसीलिए पिंडदान करते-करते कहानियाँ सुनने के लिए उठ जाते थे—जैसे कुछ विशेष श्राद्ध कर्म में नहीं, कहानियाँ में हो।

(सा अ)

आदर्श नगर कॉलोनी
गौशाला रोड, मधुबनी-८४७२११
दूरभाष : ७४६४०७७१०६

चाय बागान की छाँव में

• चित्रंजन भारती

वर्तमान समय में विश्व में ही नहीं, भारत में भी चाय सर्वसुलभ, सर्वप्रिय पेय है। गाँव के नुक्कड़ से लेकर महानगरों के पाँच सितारा होटलों तक में यह सहज ही प्राप्य है। अभी हाल यह है कि शायद ही कोई घर ऐसा हो, जहाँ चाय नहीं पी जाती हो। यह चाय दूध-शक्कर मिश्रित अथवा काढ़े के रूप में भी हो सकती है। यह काली, सफेद या फिर हरी चाय भी हो सकती है। और इन सभी में जो चाय पत्ती पड़ती है, वह एक खास प्रजाति के पौधों से ही मिलती है, जिसके बारे में हमारी जानकारी बस यही है कि यह असम की चाय है। वैसे बंगाल के दार्जिलिंग की चाय सबसे अच्छी मानी जाती है, जो ब्रांडेड भी है। यह चाय महँगी है और विशिष्ट वर्ग में विशेष लोकप्रिय है। मगर भारतीय सामान्य जन आमतौर पर तेज, कड़क चाय पसंद करते हैं, जो औसत मूल्यों पर उपलब्ध है।

पूर्वोत्तर की यात्रा के दौरान यहाँ की जो चीज सर्वाधिक आकर्षित करती है, वह चाय के पार्कनुमा हरे-भरे बागान हैं। इन चाय-बागानों की हरियाली व्यक्ति को सहज ही मंत्रमुग्ध करती है। असम की तो यह विशिष्ट पहचान ही है। नकदी फसल के रूप में मशहूर, जिसे हरा सोना भी कहा जाता है, जिससे विदेशी मुद्रा की भी जबर्दस्त आय होती है, इसी चाय-पत्तियों के माध्यम से ही मिलती है। इतना होने के बावजूद चाय उद्योग की आय का बृहत् हिस्सा समृद्ध वर्ग के ही हिस्से जाता है। पहले यह संप्रभु वर्ग अंग्रेज थे और अब उनकी जगह देसी मालिकों ने ले ली है।

कोई चालीस वर्ष पूर्व जब असम की यात्रा पर आया था, तो चाय बागानों की मीलों दूर तक फैली हरियाली की छटा देख मंत्र-मुग्ध रह गया था। मगर इस बार की यात्रा में दिखा कि इन चाय बागानों के चाय पत्तियों पर धूल-मिट्टी की मोटी, धूसर-पीली परत चढ़ी है, जिससे उनकी स्वाभाविक हरीतिमा छुप चुकी थी। ऐसा इस कारण कि कम अथवा अनियमित बारिश से चाय पत्तियों को प्राकृतिक रूप से वह पोषण नहीं मिलता, जो उन्हें पूर्व में मिलता रहा है। विकास की अंधी दौड़ की भूख यहाँ पूर्वोत्तर में भी विकसित हुई है। विकास की दौड़ की मद में पहाड़ टूट रहे हैं, खानें खोदी जा रही हैं और जंगल काटे जा रहे हैं। इससे चाय-पत्तियों के लिए अनुकूल नम वातावरण में कमी आ रही है, क्योंकि पूर्व की भाँति बारिश नहीं हो रही और हो भी रही है, तो अनियमित हो रही है। जिन नदी-नालों में साल भर पानी प्रवहमान रहता था, अब उनमें सूखापन झलकने लगा है। अब पहाड़ों के



सुपरिचित कथाकार। अब तक 'किस मोड़ तक' (कहानी-संग्रह); 'और आम जनता के लिए' (लघुकथा-संग्रह) प्रकाशित। कई रचनाएँ पुरस्कृत एवं प्रशंसित। साहित्यश्री एवं आचार्य की उपाधि से सम्मानित। संप्रति हिंदुस्तान पेपर कॉ.लि. की इकाई कछाड़ पेपर मिल में कार्यरत।

मध्य से निकलते छोटे-बड़े मनभावन झरने विलुप्त हो रहे हैं।

यह तो स्पष्ट है कि चीन से चाय का सफर शुरू होता है। १६०० ई. के आसपास डच व्यापारी चीन से यूरोप में चाय ले गए थे और वहीं से इसकी लोकप्रियता में वृद्धि शुरू हो चुकी थी। १८१५ ई. में कुछ अंग्रेज व्यापारियों और सैलानियों ने अपने असम भ्रमण के दौरान देखा कि असम-अरुणाचल प्रदेश के सीमावर्ती इलाकों में सिंगफो जनजाति के लोग एक झाड़ी की कुछ पत्तियों को पानी में उबालकर पीते हैं। इसपर खोजबीन आरंभ हुई, तो उन्हें इन पत्तियों में चाय के गुण स्पष्ट दिखे। कलकत्ता में इसकी जोर-शोर से चर्चा चली। तब १८३४ ई. में बंगाल के गवर्नर जनरल विलियम बैंटिक ने चाय का उत्पादन शुरू करने की संभावनाओं का पता लगाने के लिए एक समिति का गठन कर दिया।

असम स्थित कछाड़ जिला के अंग्रेज कमिश्नर टॉमस फिसर ने १८३५ ई. में इसके पक्ष में अपनी रिपोर्ट समिति के समक्ष प्रस्तुत की, और इस प्रकार यहाँ चाय की खेती प्रारंभ हुई। पुनः कछाड़ जिला के कमिश्नर बर्नर ने १८५५ ई. में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इससे सहमत होते हुए कलकत्ता के अनेक व्यावसायिक प्रतिष्ठानों को यहाँ चाय बागान और उद्योग लगाने के लिए आमंत्रित किया। इनमें एक उल्लेखनीय उद्योगपति द्वारकानाथ टैगोर भी थे, जो नोबेल पुरस्कार विजेता रवींद्रनाथ टैगोर के दादा थे। इन उद्योगपतियों को चाय बागान और उद्योग लगाने के लिए सैकड़ों-हजारों एकड़ जमीन पट्टे पर दी गई। ध्यान दें कि उस वक्त कलकत्ता ही ब्रिटिश उपनिवेश भारत की राजधानी थी और अधिकांश व्यावसायिक प्रतिष्ठान अंग्रेजों के ही थे।

ईस्ट इंडिया कंपनी ने १९३२ ई. में बर्मा के साथ हुई यांडबू संधि के उपरांत असम पर अंग्रेजों का दावा स्वीकार कर लिया था। और इसी के साथ साम-दाम-दंड-भेद के द्वारा असम ही नहीं, पूर्वोत्तर के पूरे भू-भाग पर आधिपत्य जमा लिया था। यहाँ के कबीले और राजे-रजवाड़े उनके

हाथ की कठपुतली मात्र बनकर रह गए थे, जो हमेशा पड़ोसी देसी राजाओं अथवा रिश्तेदारों से अपनी सुरक्षा के लिए गुहार करते रहते थे। इन सभी को एक-एक कर ठिकाने लगाते अंग्रेज पूरे पूर्वोत्तर पर एकाधिकार जमाकर बैठ गए थे।

चाय बागान के लिए पहला बागान लगाने का श्रेय असमी व्यक्ति तुलाराम दीवान को दिया जाता है, जिसने अपनी सूझबूझ से असम के शिवसागर जिले में दो बागान लगाए थे। हालाँकि अंग्रेजों ने यथासंभव प्रयास यह किया कि उसे यह श्रेय न मिले। बाद में तुलाराम दीवान बागी हो गए, तो अंग्रेजों ने उन्हें १८५८ ई. में फाँसी पर चढ़ा दिया।

पश्चिम बंगाल के सिलीगुड़ी-दार्जिलिंग इलाके में भी चाय-बागान का सूत्रपात हुआ, जो सिक्किम राज्य में भी फैल गया। चूँकि कूचविहार का राजा पहले ही ब्रिटिश राज्य का शरणागत हो चुका था, इधर विशेष कठिनाई भी नहीं हुई। १८५६ ई. में वहाँ से प्रथमतः व्यापारिक उत्पादन आरंभ हुआ, जिसने विशिष्ट वर्गों में शीघ्र ही अपनी लोकप्रियता हस्तगत कर ली।

चाय बागानों को विकसित करने का काम दक्षिण असम की सूरमा (वर्तमान बांग्लादेश का सिलहट जिला) और बराक घाटी (असम का कछाड़ जिला) में भी किया जा रहा था, क्योंकि अंग्रेजों द्वारा कराए गए सर्वेक्षण के अनुसार यहाँ की जमीन और आबो-हवा को चाय की खेती के लिए उपयुक्त पाया गया था।

मगर समय बीतने के साथ यह देखा गया कि स्थानीय मजदूरों द्वारा पर्याप्त काम नहीं हो रहा है। इसका पहला कारण तो यही था कि बर्मा द्वारा किए गए आक्रमणों ने पूर्वोत्तर को तहस-नहस किया गया, बल्कि मानव संसाधन का भी घोर अभाव हो गया। ऐसे में पूर्वोत्तरवासी और अधिक खतरा उठाने से कतराते थे। टॉमस फिसर ने अपनी रिपोर्ट में कहा था कि चाय उद्योग के लिए मजदूरों की कमी नहीं होने दी जाएगी। इसलिए बिहार, बंगाल, झारखंड, उड़ीसा, यहाँ तक कि आंध्र प्रदेश तक के आदिवासी बहुल इलाकों से लोगों को जहाजों में भर-भरकर लाया और यहाँ छोड़ दिया गया, जहाँ से उनकी वापसी असंभव थी। यहाँ के जंगली-पहाड़ी वातावरण में आदिवासी समुदाय के लोग ज्यादा सहज रहते। इसी क्रम में सिलहट जिले से भी पूर्वोत्तर में लोगों को लाया गया था।

ये सभी अपने मूल निवास क्षेत्र के जंगल-जमीन आदि से बेदखल किए जा चुके लोग थे। आदिवासियों को इस प्रकार टुकड़ों-टुकड़ों में विस्थापित करने के पीछे अंग्रेजों की एक मंशा यही भी थी कि इससे उनके विद्रोह को खत्म किया जा सकेगा। मजदूरों के अभाव की पूर्ति करने के लिए पूर्वी और उत्तर भारत से एजेंटों के माध्यम से मजदूरों की खेप आने लगीं। ध्यातव्य है कि १८५७ ई. का प्रथम स्वातंत्र्य समर बर्बरतापूर्वक खत्म कराया जा चुका था। और अब भारत ही नहीं, पूरा दक्षिण हिंद उपमहाद्वीप ब्रिटिश साम्राज्य का उपनिवेश बन चुका था। अंग्रेजों के आतंक और अत्याचार से जिसे जिधर मौका मिलता, उधर ही भाग छूटता। गिरमिटिया (एग्रीमेंट) मजदूर बनकर पूर्वी भारत के लोग जहाजों में भरकर फिजी, मॉरीशस आदि पहुँचे। वहीं उनका एक श्रमिक वर्ग असम में भी आया और यहाँ चाय-बागान की नव संस्कृति में घुल-मिलकर यहाँ का होकर

रह गया। खैर, आगे चलकर जब इस क्षेत्र में रोजगार की संभावना बढ़ी, तो इनके पीछे निम्न तबके या जातियों के लोग आए। कुछ समय बाद ऊँचे तबके और जातियों के लोगों का भी आगमन होने लगा। इस प्रकार से देखा जाए, तो एक भिन्न बागानी संस्कृति ने जन्म ले लिया था।

एक तरफ चाय बागान तैयार किए जा रहे थे। दूसरी तरफ उनके समीपवर्ती जगहों में उनकी रिहाइश के लिए कॉलोनियाँ बनाई जा रही थीं। इन कॉलोनियों में रहनेवाले लोगों की जीवन-शैली अलग रूप में विकसित हो रही थी। और वे इसमें रचते-बसते जा रहे थे। इन कॉलोनियों को एक प्रकार का 'ओपन जेल' ही कहा जा सकता था, जहाँ किसी बाहरी लोगों से संपर्क न के बराबर था। वैसे भी उन निर्जन जंगलों में जाता भी कौन! दिखावे के लिए उनके मनोरंजन के लिए सार्वजनिक स्थान और मंच भी बनाए गए, जिसे स्थानीय भाषा में 'नाच-घर' कहा जाता था। यहाँ बागान प्रबंधन के खर्च पर नृत्य, नाटक आदि का मंचन होता, सिनेमा वगैरह भी दिखाए जाते थे। इन बागानों की एक खासियत यह भी थी कि यहाँ साप्ताहिक वेतन देने की परंपरा थी, जो सप्ताहांत में मिलता था। बागान के आसपास ही साप्ताहिक हाट लगता, जहाँ दैनिक उपयोग की वस्तुएँ मिल जाती थीं। एक प्रकार से इनको शेष दुनिया से काटकर रखा गया था या स्वतः ही कट गए थे।

इन लोगों के बीच एक बागानी संस्कृति विकसित हो चुकी थी। एक नई बागानी भाषा का निर्माण हुआ, जिसमें हिंदी, भोजपुरी, बांग्ला, असमी, उड़िया एवं अन्य आदिवासी भाषाओं का मिश्रण था। बागानी लोकगीत और नृत्य शैली 'झूमर' तक का विकास हुआ। तीज-त्योहार, मेले-ठेले, खान-पान, रहन-सहन में भी बदलाव आए। एक अच्छी बात यह भी हुई कि इनमें परस्पर शादी-विवाह भी होने लगे, जिससे जातीय जड़ता टूटी। हालाँकि उच्च जातियों ने अपनी श्रेष्ठता बनाए रखने और मूल से जुड़े रहने का भरसक प्रयास किया है।

१८२६ ई. में बर्मा के साथ यांडबू संधि के बाद अंग्रेजों ने असम सहित पूर्वोत्तर में अपना विस्तार तेजी से किया। १७५७ ई. के प्लासी और १७५६ ई. के बक्सर युद्ध के बाद बंगाल में अंग्रेज तेजी से आगे बढ़े थे। उस समय के बंगाल में पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा के अलावा वर्तमान का बांग्लादेश था। इसके बाद असम का कूच विहार राज्य, फिर अहोम राज्य उसके प्रभामंडल में आए। उधर बांग्लादेश का सिलहट और गुवाहाटी के बीच मेघालय के खासी, गारो और जयंतिया राज्य थे। अंग्रेज इधर के पहाड़ों के बीच की आबो-हवा भी ब्रिटेन के समान देख वे इसकी ओर आकर्षित हुए। अंग्रेज गुवाहाटी और सिलहट के मध्य एक राजमार्ग बनाना चाहते थे, जिसमें ये बड़ी बाधा थे। अंततः अपने साम-दाम-दंड-भेद के द्वारा उन्हें विजित कर वह राजमार्ग बनाने में कामयाब हुए और शिलंग अपनी राजधानी बना ली। असम की राजधानी १९७२ ई. तक शिलांग ही रही थी। मेघालय के निर्माण के बाद असम की राजधानी दिसपुर (गुवाहाटी) को बनाया गया। अब पूर्वोत्तर भारत में चाय बागान के निर्माण का काम जोर-शोर से चलने लगा था।

ब्रिटिश भारत में चाय बागानों की प्रगति का शुरुआती इतिहास

बांग्लादेश के सिलहट जिले के चाय बागानों के बिना अधूरा है। १८५७ ई. में सिलहट में पहला चाय बागान लगाया गया। यहाँ से चटगाँव और ढाका ज्यादा नजदीक थे और यहाँ के समुद्री तटों पर पूर्ण विकसित समृद्ध बंदरगाह थे। यहाँ से सरलतापूर्वक चाय का निर्यात ब्रिटेन में किया जा सकता था। पूर्वोत्तर भारत से माल ढुलाई इसी रास्ते होती थी।

यहाँ रेलवे लाइन बिछाने का भी सूत्रपात किया गया। रेलवे के द्वारा चटगाँव, ढाका और कलकत्ता से भी सिलहट जुड़ गया था। रेलवे का चटगाँव-कोमिला-अखौरा-कलौरा-बदरपुर अनुभाग १८९८ ई. में खुल चुका था। १९०४ ई. तक दक्षिण असम कछाड़ जिला मुख्यालय शिल्चर भी शेष भारत के लिए मानचित्र पर आ चुका था। पहाड़ों के भीतर सुरंगों बनाकर ऊपरी असम के लामडिंग से भी जोड़ दिया गया, ताकि चाय की ढुलाई सुगमतापूर्वक की जा सके।

१९१२ ई. में बंगाल का पुनर्गठन करते हुए सिलहट जिला को असम प्रांत में जोड़ दिया गया, जबकि यह बांग्लाभाषी बहुल क्षेत्र था। बाद में प्रबल प्रतिरोध के बाद इसे पुनः बंगाल से जोड़ा गया। इसी दौर में बड़ा परिवर्तन यह हुआ कि उत्तर भारत के लोग सिलहट के रास्ते पूर्वोत्तर भारत में आए। पुनः जमीन और रोजगार की खोज में सघन जनसंख्या क्षेत्रवाले सिलहट जिला से विरल जनसंख्या वाले कछाड़ जिले में श्रमिकों के आगमन का दौर चल पड़ा, जो हाल-फिलहाल तक जारी था। असम में बांग्लादेशी



समस्या के अनेक कारणों में यह भी एक महत्वपूर्ण कारण रहा है। जो भी हो, बांग्लादेश का सिलहट जिला भी चाय उद्योग का प्रमुख केंद्र है और इससे बांग्लादेश को भी भारी विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है। इंग्लैंड के लंदन और लिवरपूल में बांग्लादेशी मूल के अनेक समृद्ध उद्योगपति रहते हैं, जिनकी बांग्लादेश स्थित सिलहट में चाय के वृहत् बागान और फैक्ट्रियाँ हैं।

अंग्रेजों द्वारा इस चाय-बागान निर्माण के पीछे एक और वजह भी काम कर रही थी। वह यह कि असम के सघन जंगलों में सैकड़ों साल पुराने भारी-भरकम वृक्षों के जंगल थे। चाय बागानों के निर्माण के लिए जब ये कटे, तो उनकी मजबूत लकड़ियाँ भारी-भरकम समुद्री जहाजों के लिए सहज ही मिलने लगी थीं। ब्रिटिश साम्राज्य मूलतः अपने नौसेना के बल पर ही तो प्रभुत्वशाली बना था। उनके भारी-भरकम विशालकाय सैन्य जहाज समुद्री सीने पर शान के साथ चला करते थे। फिर उनके पीछे होते व्यापारिक जहाज, जिसके बल पर उन्होंने आधा जग जीत लिया था। रेलवे ने तो भारतीय परिसंपत्ति की ढुलाई और दोहन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते इसमें तीव्रता ला दी।

विश्व में इस भारतीय चाय की लोकप्रियता को एक उदाहरण द्वारा देखना पर्याप्त होगा। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जब हिटलर इंग्लैंड पर

प्रचंड प्रहार कर रहा था और उसकी आर्थिक नाकाबंदी भी कर रहा था, उसे यह देखकर अत्यंत तकलीफ होती थी कि उसके सैन्य अफसर इंग्लैंड के उपनिवेश भारत की चाय ही पसंद करते हैं। उसने इस संबंध में उनसे अनुरोध किया कि वे इंग्लैंड के उपनिवेश भारत की चाय के बजाय जर्मनी के उपनिवेशों की चाय पिया करें, ताकि इंग्लैंड को सैनिक ही नहीं, आर्थिक मोर्चों पर भी शिकस्त दी जा सके। १९४७ ई. में भारत आजाद हुआ। लेकिन असम के चाय बागानों पर अभी भी अंग्रेज उद्योगपतियों का कब्जा था। दरअसल वे अपनी विशाल चल-अचल संपत्ति और यहाँ की आबो-हवा का मोह नहीं छोड़ पाए थे। एक तरफ श्रमिकों के कल्याण के लिए जनता और भारत सरकार का उनपर दबाव बढ़ रहा था, दूसरी तरफ भारतीय जागरूकता उन्हें वापस जाने को मजबूर कर रही थी। यह भी कहा जाता है कि १९६२ ई. में जब चीनी आक्रमण हुआ, तब वे असम से अपना सबकुछ औने-पौने दामों में बेच-बाचकर भागने को विवश हुए थे। क्योंकि उन्हें लगा था कि कम्युनिस्ट चीन पूर्वोत्तर पर अब अपना कब्जा जमा ही लेगा।

चाय के पौधे एक से डेढ़ मीटर तक ऊँचे होते हैं। इसे न बहुत अधिक गरम और न ही बहुत अधिक ठंडे मौसम की जरूरत होती है। विशेषज्ञों के मतानुसार चाय पत्तों की वृद्धि के लिए २०-३० डिग्री तापमान सर्वोत्तम है। और बारिश न्यूनतम १२५ से १५० से.मी. तक होनी चाहिए। एक बार चाय के पौधे लग गए, तो वे पचास-साठ वर्ष तक चल सकते हैं। बस उनकी

निराई-गुड़ाई, कटाई-छँटाई नियमित और बेहतर ढंग से होती रहनी चाहिए।

समस्या तब आती है, जब अत्यधिक बारिश से उनकी जड़ों की मिट्टी का क्षरण होने लगता है। वैसे पूर्वोत्तर भारत में भी वर्षा का स्तर अनियमित और कम हुआ है। गरमी का प्रकोप इतना बढ़ा है कि तापमान ३८ डिग्री तक चला जाता है। ऐसे में चाय की पत्तियाँ गरमी से झुलस जाती हैं। उनपर कीड़ों का प्रकोप बढ़ जाता है। वर्षा के अभाव में नई कोपलें नहीं फूट पातीं। ऐसे में बागान प्रबंधन द्वारा चाय के पौधों पर पानी की कृत्रिम फुहार दी जाती है। दवाओं का छिड़काव किया जाता है। मौसम के अनुकूल होने पर चाय की पत्तियों को वर्ष में दो से तीन बार तक तोड़ा जाता है। चाय पत्ती तोड़ने का काम, जाहिर है मुलायम हाथों से ही किया जाता है। इसलिए इस काम के लिए महिला श्रमिक ही काम पर लगाई जाती हैं। हाँलाकि कहीं-कहीं डायनेमो से चलनेवाली कटर मशीन का भी उपयोग किया जाने लगा है। इससे पत्ते तोड़ने का काम शीघ्रतापूर्वक संपन्न होता है।

तोड़े गए चाय पत्ती के ढेर को समीपवर्ती चाय फैक्टरी में जमा किया जाता है। फिर इन्हें मशीनों द्वारा काटा और सुखाया जाता है, जिससे इनकी हरी रंगत काली हो जाती है। इस प्रक्रिया में लगभग ६-८ घंटे लग जाते हैं। तैयार चाय की गुणवत्ता के आधार पर ४-५ श्रेणियाँ बनती हैं,

जिन्हें अलग-अलग इकट्ठा किया जाता है। फिर आवश्यकतानुसार उनकी पैकिंग की जाती है।

भारत में अब असम और बंगाल के अलावा कुछ अन्य राज्यों अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, मणिपुर, त्रिपुरा, नागालैंड, केरल, तमिलनाडु, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड आदि में भी चाय की पैदावार के लिए अनुकूल वातावरण हो, खेती की जाने लगी है। फिर भी कुल उत्पादन का ६० प्रतिशत हिस्सा असम से ही मिलता है। लगभग ४ लाख हेक्टेयर जमीन में फैले लगभग १३०० चाय बागान हैं। हाल-फिलहाल तक भारत चाय उत्पादन के क्षेत्र में विश्व में शीर्ष पर था। किंतु चीन ने जब अपने चाय बागानों का रकबा बढ़ाया, तो वह पुनः शीर्ष पर है। विगत वर्षों में विश्व उत्पादन का २७ प्रतिशत और निर्यात का ११ प्रतिशत भारत करता था। भारत से चाय का निर्यात विश्व के लगभग ८० देशों में किया जाता है। जो भी हो, वर्तमान समय में देश के चाय का लगभग २५ प्रतिशत उत्पादन निर्यात किया जाता है, जबकि ७५ प्रतिशत चाय देश में खप जाती है, क्योंकि पिछले दशकों में देश में चाय की खपत में निरंतर वृद्धि हुई है।

भारत में लगभग ५.६३ लाख हेक्टेयर जमीन में फैले लगभग १६०० चाय के बागान हैं। औसतन प्रति हेक्टेयर चाय का उत्पादन प्रति हेक्टेयर १८०० किलोग्राम है। एक ऐसा भी समय था, जब भारत चाय उत्पादन के क्षेत्र में शीर्ष पर था और वर्ष १९५५ में ३८ प्रतिशत चाय का निर्यात किया था। मगर वर्तमान में विश्व में चाय के उत्पादन में भारत का स्थान चीन के बाद दूसरा है। भारत का लगभग २५ प्रतिशत चाय निर्यात होता है। जबकि शेष ७५ प्रतिशत चाय की खपत भारत में ही होती है। भारत में चाय का भाग विश्व उत्पादन के क्षेत्र में २७ प्रतिशत है। वैसे आँकड़ों को देखने से स्पष्ट

है कि भारत में चाय के उत्पादन में वृद्धि ही हुई है। मगर यह भी तथ्य है कि यहाँ चाय पीने का प्रचलन भी बहुत बढ़ा है।

इस उद्योग की एक खेदजनक स्थिति यह है कि सैकड़ों साल बीत जाने के बावजूद यहाँ के मजदूरों की स्थिति में वह अपेक्षित सुधार नहीं हुआ, जो होना चाहिए था। चाय बागान में काम करनेवाले कामगार, जिन्हें आमतौर पर 'चाय-बागानी' कहा जाता है, उसी निम्नतर स्थिति में, उसी विपन्नावस्था में हैं। गरीबी, अशिक्षा, नशाखोरी, कुपोषण इनमें आम बात है। जबकि चाय उद्योग का लगभग डेढ़ सौ साल का इतिहास कहाँ से कहाँ पहुँच गया है। बी.बी.सी. की एक रिपोर्ट के अनुसार चाय-बागान श्रमिकों की हालत अत्यंत दयनीय है। उनकी रिहाइश और साफ-सफाई निम्नस्तरीय है। चाय-बागान के अधिकांश श्रमिक कुपोषण के शिकार हैं। सरकार के नियमानुसार चाय-बागान के श्रमिकों की रिहाइश और साफ-सफाई श्रमिकों की आय के हिस्से में शामिल है। इसी कारण उन्हें कम मजदूरी दी जाती है। चाय-बागान के प्रबंधन वर्ग को इसपर ध्यान देना चाहिए। उनके शिक्षा, स्वास्थ्य और बेहतर रहन-सहन आदि समाज कल्याण से जुड़े मुद्दों पर ध्यान देते हुए अपनी आय का एक हिस्सा उन पर खर्च करना चाहिए। क्योंकि चाय-बागान के मूलाधार श्रमिक ही हैं, अन्यथा इसके अभाव में और सोशल मीडिया के इस जमाने में वे जनाक्रोश को रोक नहीं पाएँगे।

सा
अ

फ्लैट सं. ४०५, लक्ष्मीनिवास अपार्टमेंट
जगतनारायण रोड, कदमकुआँ, पटना-८००००३
दूरभाष : ७००२६३७८१३

तीसरा आदमी

लघुकथा

● दिवाकर पांडेय

गाँव से मुख्यमार्ग की ओर एक छोटी सी सड़क जाती थी। जिसके दोनों ओर आम, नीम, जामुन, पीपल, पाकड़, शीशम, बड़हर आदि के पेड़ लगे हुए थे। शीशम के पेड़ से एक सूखी हुई लकड़ी टूटकर बीच सड़क पर गिरी। लकड़ी ज्यादा मोटी और बड़ी तो नहीं थी, लेकिन उसका आकार इतना तो था, जिससे रास्ता अवरुद्ध हो सके। उसे पैदल तो आसानी से पार किया जा सकता था। लेकिन साइकिल या मोटरसाइकिल से दाएँ-बाएँ होकर निकलना पड़ता। मुश्किल तेज गति से आनेवाले के लिए थी या रात में कोई पैदल भी जाता तो उसमें फँसकर गिर सकता था।

शाम का वक्त था और आने-जानेवालों की संख्या बेहद कम... कुछ देर बाद पहला आदमी उस ओर से गुजरा। उसने बगल के खेतवाले को जो थोड़ी दूर पर निराई कर रहा था, उसे आवाज देकर कहा, "भैया! लकड़ी टूटकर गिरी है, जाते समय उठाकर ले जाना।"

कुछ और देर बाद दूसरा आदमी भी गुजरा, उसने लकड़ी को पड़ा देखा तो कहने लगा, "कैसे-कैसे आदमी हैं, बीच रास्ते में इतनी बड़ी लकड़ी पड़ी है, लेकिन कोई हटाएगा नहीं, लोग मोटरसाइकिल से भर्र से आएँगे और कमर टेढ़ा करके इधर-उधर से निकल जाएँगे, लेकिन इतना भी नहीं है कि एक लात इसमें भी मार दें और यह साइड हो जाए। पड़ी रहन दो स्साली को, जब तक दो-चार गिरेंगे नहीं, तब तक अक्ल कहाँ से आएगी।"

इनके बाद एक तीसरा आदमी भी उधर से गुजरा, उसने चुपचाप लकड़ी उठाई और उसे किनारे करते हुए चला गया।

इस देश को सबसे ज्यादा जरूरत इस तीसरे आदमी की ही है।

सा
अ

ग्राम-जलालपुर, पोस्ट-कुरासहा
जिला-बहराइच-२७१८२१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ७५२६०५५३७३

हम ग्वालिन जूठिहारे

● गोविंद गुंजन

२३

योधन के राजभोज को त्यागकर श्रीकृष्ण ने जब विदुर का आतिथ्य स्वीकार किया तब दुर्योधन ने उनसे पूछा, 'हे कृष्ण! यह बताइए कि विदुर हमसे अच्छा कैसे हो गया, जिसके यहाँ आपने रुचिपूर्वक भोजन कर लिया? अरे वह विदुर तो दासीपुत्र है।' तब श्रीकृष्ण ने कहा—

द्विधि भोजन कीजै राजा, विपति परै कैं प्रीति।

तेरे प्रीति न मोहिँ आपदा, यहै बड़ी विपरीति ॥

'भोजन कहाँ और कब करना चाहिए, इसकी भी एक मर्यादा है, या तो कोई विपत्ती आ पड़े तो कहीं भी भोजन किया जा सकता है, या फिर जिससे हमारा प्रेमपूर्ण संबंध हो तो उसके यहाँ भोजन किया जा सकता है। अब मुझपर न तो कोई विपत्ति आ पड़ी है, न तुम्हारे से हमें कोई प्रेम ही है, अतः तुम्हारे यहाँ भोजन करने का तो कोई औचित्य ही कहाँ था?' महाकवि सूरदासजी ने इस प्रसंग पर विस्तार से कहा है—

हम तें विदुर कहाँ हैं नीको ?

जाकें रुचि सौँ भोजन कीन्हों, कहियत सूत दासी को

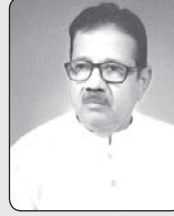
द्विधि भोजन कीजै राजा, विपति परै कैं प्रीति

तेरे प्रीति न मोहिँ आपदा, यहै बड़ी विपरीति। (सूरदास)

दुर्योधन ने कहा, 'आप उस दासीपुत्र के यहाँ गए ही क्यों? पितामह भीष्म, वीर कर्ण, गुरु द्रोण और मेरे महल छोड़कर उस दीन-हीन वृषली पुत्र (शूद्र स्त्री का पुत्र), जो जाति-पाँति से भी भिन्न हैं, उसके यहाँ जाकर आपने भोजन कर लिया, आपने यदुकुल को लज्जित कर दिया। इस पर श्रीकृष्ण ने कहा, 'दुर्योधन, याद रखो, इस संसार में वही निर्धन और कृपण है, जिसने मेरे चरण भुला दिए। तुम्हारे और विदुरजी में यही फर्क है कि तुम एक दुष्ट व्यक्ति हो, और वह एक भागवत भक्त हैं, जो राग-द्वेष से ऊपर उठ चुके हैं, और दुर्योधन, हम तो ग्वालिन जुठिहारे हैं, हमने तो प्रेम स्वरूपा ग्वालिनियों का जूठा खाया है, हमें विदुरजी जैसे महात्मा के यहाँ भोजन करने में भला क्या संकोच होगा?'

क्यों दासी सूत कैं पग धारे ?

भीषम करन द्रौं मंदिर तजि, मम गृह तजे मुरारे।



सुपरिचित रचनाकार। साहित्य की विविध विधाओं में सृजन। वैचारिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से संपन्न ललित-निबंधों के लिए खास पहचान। प्रथम समांतर नवगीत अलंकरण, अखिल भारतीय अंबिकाप्रसाद दिव्य प्रतिष्ठा पुरस्कार, निर्मल पुरस्कार सहित कई पुरस्कारों से सम्मानित।

सुनियत हीन, दीन, वृषली सूत, जाति-पाँति तें न्यारे।

तिनके जाई कियो तुम भोजन, जदु कुल लाजनि मारे।

हरि जू कहौ, सुनौ दुरजोधन, सत्य सुवचन हमारे,

सोई निरधन, सोई कृपण दीन हैं, जिन मम चरण बिसारे।

तुम साकट, वै भगत भागवत, राग द्वेष तैं न्यारे।

सूरदास प्रभु नंद नंदन कहैं, हम ग्वालिन जूठिहारे।

भक्त शिरोमणि महात्मा सूरदासजी ने कृष्ण के मुख से स्वयं को गर्व से 'ग्वालिन जूठिहारे' अर्थात् ग्वालिनों का जूठा खानेवाला कहलाया है। यह प्रेम की महिमा का चरमोत्कर्ष है। राम ने भी शबरी के जूठे बेर खाकर प्रेम की सर्वोपरिता को स्वीकार किया था। विदुर की जाति पर प्रश्नचिह्न लगानेवाले दुर्योधन से कृष्ण कहते हैं कि मैं सबकी जाति-पाँति को जानता हूँ। मैं दोपहर का कलेवा (छाक) ग्वालनों के साथ करता था। सूरदासजी के कृष्ण के लिए, 'सबसे ऊँची प्रेम सगाई थी। प्रेम सगाई अर्थात् प्रेम का संबंध।

जाति पाँति सबकी हौँ जानो, बाहिर छाक मँगाई।

ग्वालिन के सँग भोजन कीन्हों, कुल को लाज लगाई।

सूरदासजी ने लिखा है कि 'सबसे ऊँची प्रेम सगाई/दुर्योधन के मेवा त्यागे/साग विदुर घर खाई।'

कृष्ण को कौन सा भोजन प्रिय है, यह बात भी बताना सूरदास नहीं भूलते। जब विदुरजी की पत्नी सुलभा देवी ने कृष्ण को सकुचाते हुए कहा कि आप तो अंतर्यामी हो, और जानते हो कि मेरे पास आपके योग्य

भोजन नहीं है, अतः मुझे संकोच हो रहा है कि आपको क्या दूँ, तब कृष्ण ने कहा—देवी, मुझे साग-पात अति प्रिय है, और साग-पात से बढ़कर तो मुझे अमृत भी प्रिय नहीं है, अतः तुम मेरे लिए साग-पात ही ला दो—
प्रभु जू, तुम हौ अंतरजामी।

तुम लायक भोजन नहीं गृह में, अरु नाहीं गृह स्वामी,
हरि कहयौ साग पत्र मोहिं अति प्रिय, अम्रित ता सम नाहीं।
बार बार सराहिं सूर प्रभु, साग विदुर घर खाई।

कृष्ण ने देवी विदुरानी सुलभा देवी के हाथों से बने साग को बार-बार स्वाद लेते हुए और उसकी सराहना करते हुए खाया। उन्हें यह साग-पात अमृत से बढ़कर लगा। सूरदास के कृष्ण छप्पन भोग अरोगने वाले ठाकुरजी नहीं हैं। उन्हें दुर्योधन के मेवा नहीं, प्रेम से दिए गए साग-पात ही प्रिय हैं। वह ग्वालिनियों के संग वन विहार करनेवाले, उनके साथ साग भाजी का कलेवा करनेवाले कन्हैया हैं। राजा होकर भी उन्हें छप्पन भोग नहीं, कुटिया में बैठकर भाजी पत्र खाना पसंद है। उनका कौल है—सबसे ऊपर है प्रेम का संबंध। 'सबसे ऊँची प्रेम सगाई।'

विदुरजी के घर की छप्पर टूटी हुई थी। वर्षा का जल टूटी छप्पर से घर में टपकता था। पलंग भी टूटा हुआ था। विदुरानी को बड़ा संकोच कि तीन लोक के ठाकुर पधारें हैं, उन्हें कहाँ बैठाऊँ, उनके योग्य भोजन कहाँ से लाऊँ? उसने कृष्ण के पैर पखारकर चरणोदक पान किया, और अपना संकोच व्यक्त कर दिया। कृष्ण ने हँसकर कहा, 'हम तो प्रेम प्रीत के ग्राहक हैं। साग-भाजी ही छककर खाएँगे। उन्होंने विदुरानी के साग-पात हँस-हँसकर सराहना करते हुए खाए। सूरदास के कृष्ण ऐसे भक्त वत्सल हैं—

टूटी छानि, मेघ जल बरसै, टूटो पलंग बिछड़्यै/
चरण धोई चरणोदक लिन्हों, तिया कहै प्रभु अइयै।
सकुचत फिरत जो बदन छिपाए, भोजन कहा मंगइयै/
तुम तो तीन लोक के ठाकुर, तुम ते कहा दुरइयै।
हम तो प्रेम प्रीति के गाहक, भाजी साक छकइयै/
हँसि हँसि खात, कहत मुख महिमा, प्रेम प्रीति अधिकइयै/
सूरदास प्रभु भक्तनि कै बस/भक्तनि प्रेम बढ़इयै।

सूरदास के ठाकुर तो प्रेम के गौरीशंकर हैं। मोर-मुकुटवाला, धेनु चरानेवाला, ग्वालिनियों के जूठे को खानेवाला। कुबड़े शरीरवाली कंस की दासी कुब्जा के प्रेम को भी स्वीकार करते हैं। जब कुब्जा के प्रति ग्वालिनं क्रोध करती हैं कि उसने उनके कन्हैया को वश में कर लिया है, तब कुब्जा गोपियों को यह करुण संदेश भेजती है कि 'हे बृज नारियो, मेरे ऊपर क्यों क्रोध करती हो? मैं तो राजा कंस की दासी हूँ, मेरी स्थिति तो ऐसी है, जैसे फलों में कड़वी तुमड़ी की दशा हो, जो घूरे पर डाल दी जाती है। पर अब वह कड़वी तुमड़ी कलाकार के हाथ पड़ गई है, जिसने उसे एक वाद्य यंत्र बना दिया है, जिससे अब मधुर राग निकलते हैं। तन से जो टेढ़ी थी, उसने अपने हाथों से छूकर ऐसा सँवार दिया है कि सुपात्र बना दिया।

हम पर काहे झुकती बृज नारी।

साझे भाग नहीं काहू कौ, हरि की कृपा निनारी।
कुबिजा लिख्यौ सँदेस सबनि कौ, अरु कीन्ही मनुहारी।
हौं तो दासी कंसराय की/देखाँ मनहिं विचारी/
फलनि माँझ ज्यों करुई तोमरी/रहत घूरे पर डारी/
अब तो पड़ी हाथ जंत्री के/बाजत राग दुलारी/
तन तै टेढ़ी सब कोउ जानत/परसी भई अधिकारी/
सूरदास स्वामी करुनामय/अपने हाथ सँवारी।

ऐसे हैं सूरदास के कन्हैया, जिसका रूप अनूप है। एक ग्वालन कृष्ण के मनोहर रूप पर मुग्ध है। वह मन में इतनी प्रसन्न है कि प्रसन्नता मन में समा नहीं रही थी। वह फूली-फूली फिर रही है। उसके रोम-रोम पुलकित है, ऐसी गद्गद है कि उससे बोलते भी नहीं बनता। उसे देखकर सखियाँ पूछती हैं, कुछ कहीं पड़ी हुई मूल्यवान वस्तु तो तुम्हें नहीं मिल गई है, जो इतनी प्रसन्न हो। हमें क्यों नहीं बताती, क्या बात है? इस पर ग्वालिन सखियों से कहती है कि भले ही हमारा तन अलग है, पर उसका-हमारा मन एक हो गया है। मैंने वह अनुपम रूप देख लिया है—

फूली फिरती ग्वालिन मन में री।
पूछती सखी परस्पर बातै, पायौ परयौ कछू कहुँ तै री।
पुलकित रोम रोम गद गद, मुख बानी कहत न आवै
ऐसौ कहा आहि सो सखीरी, हमको क्यों न सुनावै।
तन न्यारो, जिय एक हमारो, हम तुम एकै रूप।
सूरदास कहै ग्वालिन सखिन सौं, देख्यो रूप अनूप।

सूरदास के कृष्ण ऐसे अनुपम हैं। जिससे मन मिल जाए, उसके हो जानेवाले। वह दुर्योधन को अच्छी तरह से जानते हैं। वह प्रेम के वशीभूत गोपियों का जूठा भी खा सकते हैं, पर जिसके हृदय में छल, कपट, लोभ, लालच भरा हो, उसके साथ भोजन नहीं कर सकते, भले ही वह कोई राजा हो या कोई सम्राट्। दुर्योधन कैसा था, यह महाभारत में कुंती ने बतलाया है—'क्रूरोऽसौ दुर्मतिः क्षुद्रो राज्यलुब्धोऽनपत्रपः' अर्थात् दुर्योधन क्रूर, दुर्बुद्धि, क्षुद्र, राज्य का लोभी तथा निर्लज्ज था। बचपन में भीम से ईर्ष्या रखनेवाले इस दुर्योधन ने वनभोज का भव्य आयोजन करने के बहाने भीम के भोजन में कालकूट नामका भीषण विष मिला दिया था, उसके मूर्च्छित हो जाने पर गंगा नदी में फिंकवा दिया था। तब नागों की कृपा से भीम के प्राण बचे थे, यह सच कृष्ण से छिपा नहीं था। अतः व दुर्योधन की हर चाल को समझते थे।

सूरदासजी ने इन पदों में हमें बहुत कीमती सूत्र दिया है, प्रेम से कोई विष भी दे दे तो वह स्वीकार है, पर जहाँ प्रेम न हो, मान न हो, उसका अमृत भी विष तुल्य है। रहीम ने भी कहा है—

रहिमन मोहि न सुहाय, अमी पिआवै मान बिनु।
बरु विष देय बुलाय, मान सहित मरिबो भलो।

ॐ

१८, सौमित्र नगर, सुभाष स्कूल के पीछे
खंडवा-४५०००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२५३४२६६५

जीवनसाथी

• नलिनी श्रीवास्तव

सं ध्या की धुँधलिका में सूर्य की डूबती किरणों की लालिमा हरसिंगार के पेड़ पर आँख-मिचौली खेल रही थी, तभी पवन का उड़ता झोंका हरसिंगार के फूल-पत्तियों को झकझोरता चला गया। परंतु फूलों की सुरभित सुगंध ने उस आँगन को सुवासित कर दिया। उस मदमाती सुगंध का नशा ही कुछ और था। तभी तो बसंती एक बार फिर सिहर उठी। कभी-कभी तो वह इतना अधिक व्याकुल हो जाती कि गुमसुम हो एक कोने में घंटों बैठी रह जाती, उसे न अब किसी की चिंता है, न ही कोई रोग-शोक की परवाह, सारी बातें अब उसकी समझ से परे हो गई हैं। कहे भी तो किसे कहे, अपने मन के मर्मांतक दुःख को क्या उस जिंदादिल जीवन साथी को कहे, जिनकी खनकती हँसी में जीवन की खुशियों का फनकार था, सुख का संदेशा समाया रहता था। वह तो न जाने कब से चुपके-चुपके इस निराशा में आशा की कड़ियाँ खोज रहा है। बसंती निरुद्देश्य आकाश की ओर निर्विकार भाव से देखती है।

बसंती ने जीवन के पचास बसंत पार कर लिए हैं; पर एक भी बसंत ऐसा नहीं आया, जिस दिन उसे झटपटाहट न हुई हो, व्याकुलता की परिधि में चक्कर न लगायी हो, चिंता के धूमिल आकाश में उड़ते उसका मन न डगमगाया हो, फिर भी वह कसमसाते अपने दुःख की घड़ियाँ गिनते, गिनते पल-पल लिए जा रही है। आज जीवन के आखिरी पड़ाव पर रखते पैर सहसा काँप उठते हैं। आँखें धुँधली हो चुकी हैं। शरीर थकान से लस्त-पस्त हो अलसाए पड़े ही रहना चाहता है। करने को अब कुछ भी नहीं रहा, फिर भी वह जी रही है, पल-पल आँसुओं से तर-बतर होते चेहरे को स्वयं ही आँचल से पोंछती है; पर दरवाजे पर कान लगे हुए हैं। हर आहट पर चौंक उठती है। आशा की हल्की किरण चेहरे पर छा जाती है, पर किसी को न देख स्वयं को समझाने का निरर्थक प्रयास करने में लगी रहती है।

इसी बसंती ने वर्षों पहले ससुराल की देहरी पर पैर रखते ही सास-ससुर की निश्चल, स्नेहमय छत्रच्छाया में कर्तव्य-बोध का पाठ पढ़ा ही नहीं बल्कि उसे जीवन में भरपूर उतारने की हर समय कोशिश की। उस समय उसके मन में स्नेह, धैर्य और हृदय में दया का सागर ऐसी हिलोरें ले रहा था; तभी तो उसने अपने संसार में प्रेम के बीज को स्नेह की मधुरिमा में आलोकित किया। उसके उसके अंकुरित होने से स्नेह की सुनहरी धूप



सुपरिचित कथाकार। 'एक टुकड़ा सच', 'कैक्टस की चुभन' (कहानी-संग्रह); 'बख्शी जी-मेरे दादाजी' (संस्मरणात्मक निबंध-संग्रह) एवं कहानियाँ तथा लेख प्रकाशित। 'समाजरत्न पतिराम साव सम्मान', 'वसुंधरा कला सृजन सम्मान', 'अ.भा. मुंशी प्रेमचंद सम्मान' एवं अन्य सम्मान।

से उसका संसार पल्लवित-पुष्पित होता चला गया। आज आधुनिकता की भाषा में पुरातन पीढ़ी की धरोहर हो या समूचा साम्राज्य की परिभाषा। आदिकाल से यही कहा जाता है कि बेटे-बेटियाँ बहू-दामाद, नाती, पोते पोतियाँ ही सुख का शंखनाद है।

इस सुख साम्राज्य की एक मात्र सम्राज्ञी बसंती है, पर उसे अपने साम्राज्य में छाई हल्की दुःख की खरोंच भी सहन नहीं होता है। इसीलिए कभी वह बड़े बेटे को समझाने का प्रयास करती है। अपनी कोशिश में नाकाम होने पर भी हिम्मत नहीं हारती। समय परिस्थिति की उलझनों को स्वयं सुलझा देगी; इसी विश्वास से वह कल के सुख की कल्पना से उसमें उत्साह का उन्माद छलक जाता है। तभी तो वह कभी तीसरे बेटे की चोट पर आँसू बहाती है तो बड़े बेटे के उद्दंडता भरे चालाकी की असफलता पर खिलखिला उठती है। सिर्फ बेटों की ही बात नहीं, बेटियाँ भी तो बसंती के अपने ही हैं। कितने सलीके से बेटे की घरोंदा तैयार करने के लिए चुन-चुनकर सामान इकट्ठा किया; सिर्फ गहने, साड़ियों की ही बात नहीं और भी कितने आधुनिक फैशन के सामान तथा जरूरत की चीजों को तैयार करते अकेले ही हाँफ उठती थी, पर उफ नहीं किया, चेहरे पर शिकन तक नहीं आने दो क्योंकि यह तो उसका कर्तव्य ही था। अपने बच्चों की शादी-ब्याह में स्वयं काम नहीं करेगी तो और कौन करेगा?

एक बसंती ही है, जिसे अपनी घर परिवार की सुख-चैन की परवाह है। न किसी से शिकवा न शिकायत, न व्यंग्य की तीखी मार। इसी से उसका पड़ोसियों से सामना होते ही लोगबाग उसकी प्रशंसा करने लगते। बसंती कुछ न कह सिर्फ मुसकराती-हँसती सबकुछ समझती अपनी उलझी लटों को सहेजते तुरंत ही दूने उत्साह से काम में जुट जाती। बसंती को संतोष था, उसकी बेटियाँ जिनकी धरोहर है, उन्हें सौंप दी गई हैं। बहुओं से भी खुश रहना उसका स्वभाव था। त्रुटियाँ निकालना तो उसे

आता ही नहीं था। हर समय कहती—भूल-चूक किससे नहीं होती, पर बसंती अपने बेटे-बेटियों ही नहीं बहुओं और पोते-पोतियों के दोषों को भी अपने स्नेहिल आँचल से ढक देती। फिर आधुनिकता की बलखाती हवाओं के सर्द झोंके में आखिर बहुएँ लिपट ही गईं। उन्हें याद भी नहीं रहा कि इसके परे भी कुछ और है, वे तो अपने स्वार्थ की संकीर्ण धारा में ही उलझती रहीं।

एकरस जीवन की चाल भला किसे आज तक पसंद आई है, फिर बसंती का घर कैसे अछूता रहता। मोहन बाबू के रिटायर्ड होते ही परिस्थिति ने ऐसा करवट बदला कि फिर सुधार हो ही नहीं सका। बिगड़ैल घोड़े की तरह घर की लगाम हिचकोले खाने लगी। बसंती का धैर्य और विश्वास की पूरी धुरी अर्थाभाव के कारण डगमगाने लगी। जो बच्चे-खुचे दो-चार गहने थे, वह भी घर की भूख में समा गए, पर घर के बेटे-बहू इससे बेअसर अलमस्त रहे। किसी को किसी की चिंता ही नहीं। सभी लड़के एक-दूसरे को सुलगती चिनगारी की तरह देखते रहे पर मुँह से कोई कुछ नहीं कहती। बसंती इस माहौल से अपने आप घबरा गई। उसके जीवन की गति में कोई रुकावट अबतक नहीं आई थी, अविराम गति से स्थिति की हर उठापटक को सहती मुसकराती करुणा की जीती-जागती प्रतिमा बने कितने दुस्साहस से अपने कर्तव्य पथ पर अडिग रही। अपने ही बनाए सुख साम्राज्य की गलियों में बसंती भटक गई। उसे डर लगने लगा उसके द्वारा तराशे गए कोई भी सुंदर फूल अपनी ही चिनगारी की लपटों से सुलगाकर कहीं साम्राज्य को तहस-नहस न कर दें।

आशा की किरणें अँधेरी गुफाओं में छिप गईं। अतः उसने साहस कर बड़े बेटे की बलिष्ठ भुजाओं का सहारा माँगा, पर उसका असर उल्टा ही हुआ। गर्जन-तर्जन के साथ बड़े बेटे ने हुंकार का सहारा ले आँखों से ही ओझल हो गया। छोटे तो छोटे ही होते हैं, विशेषकर इन मामलों में उन लोगों ने भी बड़े भाई का ही अनुकरण करना ही ठीक समझा। जिनको जहाँ मन लगा, सब अपनी अपनी डफली ले अलग-अलग सुर अलापने लगे। बसंती निराश हो सबकुछ देखता रही, वह मोहन बाबू से कहती—तुम इन बच्चों को समझाते क्यों नहीं। तब गंभीर स्वर में मोहन बाबू यही कहते—ठीक कर रहे हैं, कोई बच्चे नहीं हैं।

घर में सिर्फ दो ही प्राणी रह गए थे—एक बसंती और दूसरे मोहन बाबू। शुरू-शुरू में सबकुछ शांत रहा, किसी को कोई फर्क नहीं पड़ा, पर बसंती कि स्नेह का दरिया सूखने लगा, वह छटपटाने लगी। सिर्फ रुपए-पैसे की ही बात होती तो शायद बसंती सहन कर लेती, क्योंकि घर के एक तरफ से किराए की साधारण रकम मिल ही जाती थी; पर बच्चों का बेरुखा व्यवहार उसे और भी तड़पा देता। उस पर मदन के संदेशा ने तो उसे पागल ही कर दिया। वह चिल्लाने लगी, मैं कहीं नहीं जाऊँगी, तब मोहन बाबू को विवश हो मदन के पास जाना ही पड़ा।

अचानक चप्पल के चटकने की आवाज को सुन बसंती हड़बड़ा उठती है। मोहन बाबू के कंधे पर लटकते शॉल को हाथ में ले पूछ बैठती

है—मदन से मिल आए। मोहन बाबू ने गंभीर स्वर में कहा—पहले एक गिलास पानी तो पिलाओ, गला सूख गया है और तालू में जीभ चटक गई है। बसंती तुरंत पानी का गिलास लाकर देती है और नीचे बैठ जाती है। मोहन बाबू ने पानी पीकर एक गहरी साँस लेते हुए कहा—मैं कहता था कि मदन सबसे नालायक है, पर तुमने-हमने उसकी गलतियों पर परदा डाला, अब भुगतो उसके कारनामे को।

यह सुन बसंती की आवाज तेज हो गई। मदन कैसा है, उसे मैं अच्छी तरह जानती हूँ, यह तुमसे नहीं पूछ रही हूँ, उसने क्या कहा, यही बताइए।

सुन सकोगी मदन ने क्या कहा ?

हाँ, क्यों नहीं ? आखिर वह हमारा ही तो बेटा है। इस पर मोहन बाबू ने कहा—इसी से तो आज वह कुछ भी कहने की हिमाकत कर रहा है। कहते-कहते मोहन बाबू जोर से हँस पड़े। बसंती उनके कर्कश हँसी को सुन काँप गई, धीरे से यही कह पाई—बातें बतलाते क्यों नहीं ? मदन ने क्या कहा ? लेकिन हँसी के अट्टहास में सुख की झनकार नहीं, किसी भयानक आशंका की कल्पना से बसंती सिहर उठी।

मोहन बाबू ने हँसते हुए एक नजर बसंती की ओर देखा, सहसा कुछ सोचते हुए बहकने लगे—अरे, पागल इसमें उदास होने की क्या बात है ? दुनिया कितनी खूबसूरत हो जाए, चाहे कितना बदल जाए, पर स्वयं की स्वार्थलिप्सा के द्वारा बनाई गई परंपरा न आज टूटी है न कल टूटेगी। हमने अपने जीवन में अपने कर्तव्यबोध

को खूब निभाया। आज हमारे बेटे भी अपनी सारी शक्ति को दाँव में लगाकर अपने बच्चों के सुनहरे भविष्य की लालसा से कर्तव्य की धुरी में कठपुतली बने घूम रहे हैं। फिर मैं क्यों न हँसू ? मैं हँसूँगा और रातभर हँसूँगा, तुम क्यों खोई हो ? तुम भी हँसो, समझी।

सुनती हो, मदन इस घर को पूरा तुड़वाकर नए डिजाइन का बँगला बनवाएगा, ताकि अपने बाल-बच्चों के साथ सुखपूर्वक रह सकेगा। हमें कल ही मकान खाली करना है, जहाँ चाहे जा सकते हैं, कितनी बड़ी स्वतंत्रता है, यह क्या कम बड़ी बात है, जहाँ मर्जी हो, वहीं रह सकते हैं। मकान बन जाने के बाद कितनी उदारता से उसने कहा, आप दोनों के लिए भी एक कमरे की व्यवस्था करने की कोशिश करूँगा, पर आपको यह मकान अभी खाली करना ही होगा।

क्या ! बसंती भावना के आवेश को आवाज में नहीं बाँध सकी, पर आँखें फाड़कर मोहन बाबू को देखती रही। बिना कुछ कहे उसके चेहरे के भाव बार-बार यह प्रश्न कर रहे थे—हम कहाँ जाएँगे ?

सा
अ

‘शिवायन’

३-बी, सड़क नं.-३३, सेक्टर-१,

भिलाई-४९०००९

दूरभाष : ९७५२६०६०३६

नागद्वारी : देवलोक के रास्ते में एक दिन

• अखिलेश सिंह श्रीवास्तव

मेरे अंतर्मन में लोक मान्यताओं के मंथन से उपजी देवलोक, नागलोक अथवा स्वर्ग के द्वार की मान्यता वाली 'नागद्वारी गुफा' के विषय में अनेक विचार कौंधते, पर गृहस्थी चक्र की उलझनों के चलते वह सुषुप्तावस्था में थे। इन्हें पुनः जाग्रत् करने का श्रेय जबलपुर निवासी मेरे अनुज नितिन वर्मा को जाता है। इनके कारण ही प्रकृति की इस अद्भुत लीला का लीला-सहचर बनने के लिए मैं पावस की भीगी ऋतु में सिवनी स्थित गृह-मंदिर में अपने पूर्ण हुए उपन्यास 'रुद्रदेहा' के टंकण को अधूरा छोड़ छिंदवाड़ा बस स्थानक में पचमढ़ी जानेवाली भरी बसों के मध्य अपने लिए एक स्थान सुरक्षित करने की आशा से प्रतीक्षारत हूँ। अवसर है, सावन मास में भारत के हृदय-स्थल मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले की पिपरिया तहसील में स्थित, एकलौते पर्वतीय स्थल, सतपुड़ा की रानी, पचमढ़ी में 'नागद्वारी' यात्रा का।

इस यात्रा में विदर्भ, मालवा, महाराष्ट्र आदि सभी जगहों से लाखों श्रद्धालु आते हैं। आश्चर्य! दूर पर्वतों की गोद में आयोजित इस यात्रा का प्रभाव यहाँ छिंदवाड़ा में भी दिख रहा है। जगह-जगह पर भंडारे, स्वल्पाहार इत्यादि की व्यवस्थाएँ हैं। इन भंडारों की एक विशेषता यह भी दिखी कि इनमें बहुपंथीय लोगों द्वारा सेवाएँ दी जा रही हैं। यही तो हमारे भारत की आत्मा है। आस्था भावना की सखी बन श्रद्धा चक्षुओं से अश्रुओं को बहने के लिए विवश कर रही है। लाल, पीली झंडी लिये लोगों के झुंड-के-झुंड आ रहे हैं।

यों तो ये वर्षा के दिन हैं, पर आज बरखा रानी इन रंग-बिरंगी पगड़ी पहने, ढोल-मंजीरा बजाते शिव भक्तों के कीर्तन में खोई-सी लगती है। वह देखिए, बीच-बीच में हुई बौछारों ने दीवारों पर गेरू से लिखे नारों को अवश्य धो दिया; लेकिन भक्तों के उत्साह को न धो सकी। अहा! यह लीजिए, सावन की बिटिया ने मुझे झूठा पाड़ दिया। तेज गरज के साथ जलकणों ने सवेग पुनः अपनी उपस्थिति को सिद्ध कर दिया। तभी अगली बस की उद्घोषणा सुनाई दी, मैं झट इसमें अपना स्थान सुरक्षित कर बैठ गया। लीजिए, मैं निकल पड़ा अकेला, अनजान सहयात्रियों के साथ उस अद्भुत यात्रा में कदम-से-कदम मिलने के लिए, जो सदियों से मानवीय



कथेतर लेखक, प्रबंध कृषक, विशेष संवाददाता एवं मीडिया सलाहकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आलेख, रिपोर्ताज आदि निरंतर प्रकाशित। संप्रति वोल्गा वेलफेयर ऑर्गेनाइजेशन के अध्यक्ष।

कौतूहल का उत्स रही है।

इस समय विशेष परमिटवाली बसें मेला यात्रा को कवर करती हैं। इनके परमिट जारी करनेवाले सक्षम अधिकारी ने लगता है, केवल परमिट शुल्क पर ही ध्यान दिया है। तनिक बस की वास्तविक स्थिति और वाहन-चालक के चालन-कौशल को भी आधार बनाया होता तो कार्य की व्यावहारिक गुणवत्ता सामने आती। स्वच्छ, सपाट मार्गों पर भी जिस प्रकार हम झूलते, झटके खाते जा रहे हैं, यह कोई यांत्रिक त्रुटि नहीं, अपितु चालक का चालन-दोष है। वैसे भी आज-कल लाइसेंस बनवाने के लिए भी अर्थाश्रित जन-सेवी संबंधित कार्यालय के कार्य सरल कर रहे हैं। पता नहीं यह कितना उचित है! छोड़ें इस विषय को, आप तो बस मेरी बस में झाँकिए। नगर के बाहर बने विशाल चतुर्दिक् मार्ग संगम में चालक महोदय ने इतना शार्प टर्न लिया कि ऊपर रैक से मेरा बैकपैक मुझसे गलबहियाँ करने आ गिरा। यह तो अच्छा हुआ, उसकी चैन मेरे गले में नहीं लगी, वरना मेरा चैन चला जाता!

चलती बस में लगती हवा और जलबूँदें मुझे इस यात्रा के साथ वैचारिक यात्रा में ले गईं। पावस! अर्थात् बीती ऋतु से उपजी ऊष्णता से मुक्ति। धरती की प्यास के साथ-साथ सकल जीवों के प्यासे कंठों को तरलता। पावस का बालसखा है 'सावन', जो प्रतीक है रत्नगर्भा की गोद में उगी प्राणदायिनी उपजों से लेकर, व्याप्त हरियाली का, रीति-रिवाजों और तीज-त्योहारों का, सावनी झूलों में भरती नारी-पींगों का, जल डबरों से लेकर महासागर के जलाधिक्य का, ओस जैसे महीन जल-कणों की फुआरों का, संतों के चातुर्मास का, धरित्री के गर्भ में छिपे जीव-जंतुओं के अपने बिलों से बाहर विचरण करते हुए सारे जग को बताने का कि

यह धरती उनकी भी माँ है, शिव परिवार के आराधना का, आनंद का, वंदन का!

पर इसका एक 'विपरीत प्रतीक पहलु' भी है। सामर्थ्य विहीन लोगों के घरों में अनधिकृत जल प्रवेश से उठती वेदना का, निष्ठा से रोजी पर निकले लोगों के रोजगार के बह जाने का, अचानक आई बाढ़ में अपना के गुम जाने का, सुदूर गाँवों में वर्षा से हुए ध्वस्त मार्गों के कारण शिक्षा हास का। जल त्राहि की करुण पुकार का। बस यही कहूँगा—

*'सावनी ऋतु भी क्या कमाल करती है,
कहीं खुशी, कहीं गम का हाल करती है।'*

पचमढ़ी का पूरा मार्ग सुंदर, सर्पिले रास्तों से निर्मित है। कई स्थानों पर मेरा मन इन्हें रुककर निहारने का हुआ, पर सार्वजनिक यात्रा में ऐसा कहाँ संभव है! दार्शनिक गवाक्ष से देखते हुए स्वयं को अत्याज्य धीर-धराया कि यह सार्वजनिक बंधन हमें अपनी इच्छा से परे, सबको लेकर चलना सिखाते हैं। लगभग चार घंटों की

यात्रा में छह घंटों की थकान के साथ हमारी यात्रा-सहायिका (एक बस) एक जोरदार ब्रेक के साथ रुक गई। हम मध्य प्रदेश के नयनतारा पर्वत-स्थल पचमढ़ी के प्रवेश पर खड़े हैं। पूर्व में इसी पचमढ़ी पर मेरा यात्रा-वृत्त कई पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ है, पर आज का आस्था-सैलाब देखकर लग रहा है, इस वर्णन के बिना वह अधूरा ही है। समुद्र तल से १०६७ मीटर की ऊँचाई पर स्थित, कैप्टन जे. फारसिथ द्वारा १८६२ ई. में खोजा गया

यह पर्वतीय स्थल प्राकृतिक छटा का अनमोल उपहार है। दृष्टि-सीमा का अभिवादन करती सुंदर घाटियाँ, सर्पिणी से लहराते मार्ग, वन्य जीवों से भरे निविड़ वन्य क्षेत्र, कल-कल बहते झरने, सरोवर, राष्ट्रीय उद्यान, पंछी-कलरव, पौराणिक एवं ऐतिहासिक महत्त्व की धरोहरें, विभिन्न प्रकार की जड़ी-बूटियाँ, सरल हृदय लोग और भी बहुत कुछ, इसके सौंदर्य के साक्षी हैं। इन्हीं के मध्य स्थित है, किंवदंतियों से भरी, आस्था से सिंचित कंदरा 'नागद्वारी', जो लक्ष्य है इस रिपोर्ताज का कि सर्व सम्मुख हो यह नयनाभिराम नैसर्गिक सौंदर्य।

धूपगढ़ की चढ़ाई को नमन करता नागद्वारी मार्ग प्रारंभ में जितना सरल दिखता है, सतत आगे बढ़ने पर वह अपने विराट् रूप दर्शन कराता है। एक ओर जहाँ पाताल झूठी खाइयाँ हैं तो दूसरी ओर इतने ऊँचे शैल-श्रृंग कि इन्हें देखने पर सिर से टोपी गिर जाए। विषैले जीव-जंतुओं की तो यहाँ बहुलता है और क्यों न हो यह उनका ही तो घर है। सुखद संजोग है कि ये किसी को हानि नहीं पहुँचाते।

इस मार्ग में एक गाँव ऐसा भी है, जो साल में मात्र एक बार ही बसता है। यात्रा की प्रमुख स्थली ग्राम 'काजरी।' राष्ट्रीय उद्यान बनने के

कारण यहाँ के रहवासियों को अन्यत्र स्थापित कर दिया गया। अतः अब केवल यात्रा काल में ही यहाँ मानव पद-चाप गूँजते हैं। इस गाँव की एक कथा प्रचलित है, 'यहाँ की एक स्त्री ने संतान प्राप्ति की मन्त माँगी और कहा, पूर्ण होने पर नागदेव को काजल लगाएगी। मन्त पूरी हुई। जब वह स्त्री मन्त पूरा करने गई तो नागदेव का रूप देख न केवल वह मूर्च्छित हुई बल्कि उसकी मृत्यु हो गई। तभी से इस गाँव का नाम 'काजरी' पड़ गया। मान्यता आज भी जीवित है, गोविंदगिरी पहाड़ी की नागद्वारी गुफा के शिवलिंग पर काजल लगाने से मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।

किंवदंतियाँ तो और भी हैं; जैसे—पांडव वीर भीम को जब दुर्योधन ने विष खिला जल में फेंका, तब नाग उसे यहीं लाए थे और नागराज वासुकी ने उसे सहस्र वितंडों सा बल प्रदान किया था। भगवान् शिव ने भी भस्मासुर से बचने के लिए इन्हीं कंदराओं की शरण ली थी। अरे हाँ, एक आवश्यक बात न भूल जाऊँ, सावधान रहना मित्रो! प्रचलित मान्यताओं

की आड़ में यहाँ वक्रती ठग, चोर-उचक्के भी सक्रिय हैं, जो भाँति-भाँति के प्रलोभनों से भोले हृदयों को छलते हैं। ऐसा नहीं कि अपराधी प्रवृत्ति लोग ही यहाँ फिरते हैं, रामधन भैया जैसे गुणी, निष्णात और सहयोगी व्यक्ति भी मिलेंगे, जो आपकी यात्रा आनंद को द्विगुणित कर देंगे।

इस पहाड़ी क्षेत्र में सावनी फुहारें हल्की ठंड को आमंत्रित कर रही हैं, वैसे बारह से पंद्रह किलोमीटर की सीधी चढ़ाई तन को स्वेद से तर करनेवाली है। यह स्थिति मेरे लिए तो

अत्यंत कष्टप्रद है, अतः नैपकिन के साथ एक टॉवल, पाउडर और फ्रेशऑन्स मैंने ध्यान से रख लाया था। पथरीले मार्ग, कहीं फिसलन भरे, तो कहीं सँकरे, घनी झाड़ियों से घिरे हैं जहाँ से निकलने में डर लगे! न जाने कितने मोड़ ऐसे हैं, जिन्हें देखकर मन काँप जाए।

अमरनाथ के समतुल्य मानी जानेवाली इस यात्रा में दूर-दूर से श्रद्धालु, पर्यटक, पर्वतारोही और मेरे जैसे लेखक आते हैं। सबके दृष्टिकोण अलग, पर लक्ष्य एक। यही स्थिति तो विभिन्न पंथों की भी है; यदि हम समझें तो! विभिन्न समितियों के माध्यम से स्वल्पाहार, चाय, भोजन के भंडारों का सहयोग वंदनीय है; जैसे—चौरागढ़ महादेव ट्रस्ट, महादेव मेला समिति, बर्फानी बाबा सेवा समिति तथा कुछ बाहर से आए समूह। वर्षा के माहौल में, धूप-अगरबत्ती, शिवभजन, भोलेनाथ के जयकारे, भंडारा-भोजन की सुगंध के साथ श्रद्धालुओं की बनती-बिगड़ती पंक्तियाँ नागद्वारी यात्रा की धार्मिकता को और बढ़ा रहे हैं।

शासन द्वारा सुरक्षा चौकियों के साथ प्राथमिक उपचार केंद्रों को भी यहाँ-वहाँ स्थापित किया गया है। पूरा क्षेत्र सेक्टर में बँटा है और उसके हिसाब से ही अधिकारियों की नियुक्ति है। कभी-कभी व्यवस्थाओं में



अव्यवस्था दर्शन हो जाते हैं, जो इतने बड़े आयोजन में संभावित मान के चलने में ही मन की शांति है। एक दुःखद पहलु यह दिखा कि जनता स्वयं अपनी नागरिक भावना भ्रष्ट कर रही है! कचरा-स्थल होने के बाद भी जाने क्यों उसे बाहर फेंकने में शान सी समझते हैं। यदि पुलिस या समिति सेवक टोकें तो वह निंदा-पात्र बन जाएंगे। मार्ग-मध्य में विश्राम शिविर लगे हैं, जो मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के हिसाब से निर्मित हैं। यहाँ आश्रय लेते समय इस बात को अवश्य ध्यान रखना चाहिए।

अच्छा, आपसे एक बात बोलूँ, श्रद्धालु गाते-बजाते टोलियों में पदयात्रा करते, गहन वनों एवं खाइयों को पार कर, इस ऊँची चढ़ाई को भी उसी शक्ति के साथ चढ़ रहे हैं और एक मैं हूँ, थका मानव। स्वयं से लज्जित हुआ कि एक ओर यह लोग हैं और एक मैं, जो बस-यात्रा से इतना थक गया कि घड़ी-घड़ी विश्राम करता आगे बढ़ रहा हूँ। इस लज्जित भाव ने मुझे शक्ति दी। कह सकता हूँ, हर स्थिति-परिस्थिति में प्रेरणा छिपी है। हमें उसे पहचाना और स्वीकार करना पड़ता है।

नागद्वारी यात्रा का शाब्दिक चित्रण जितना लेखक के लिए कठिन है, उतना ही कठिन पाठक के लिए दृश्य-कल्पना है। सत्यानुभूति के लिए साक्षात् होना आवश्यक है।

कुछ यों—

‘चहुँओर चादर हरियाली,
धान की बालें कोंपल वाली।
मक्के की यह पौध निराली,
घास बिछावन, हरीतिमा आली।
जंगली लताएँ लिपटी जाएँ,
वृक्ष सभी मन में हर्षाएँ।
गीत प्यार का साथ में गाएँ,
तन-मन भी हर्षित हो जाएँ।’

स्वर्ग जैसा सुंदर, कवियों की कल्पना का स्वप्न लोक। परमात्मा के अस्तित्व का बोध कराती यह धरती माँ। जड़ी-बूटियों तथा अन्य औषधीय वनस्पतियों की प्राप्ति के लिए तो कुछ लोग इन दुर्गम पहाड़ों की चोटियों में भी जाने से नहीं चूकते। इनका भीष्म-साहस ‘भूमि औषधिनाम मातरम्’ को सिद्ध कर रहा है। चारों ओर के छोटे-छोटे गड्ढों में जल भर गया है और उसके आस-पास बैंगनी, गुलाबी, सफेद बटन जैसे फूल ऊगकर जल-गुच्छ का भान करा रहे हैं। कई जंतुओं ने इसे विचरण स्थली बना रखा है। वह सामने की श्यामल-शिलाखंड में शिलानुरूप रंग बदले गिरगिट बैठा है, जिसका आकार हमारे यहाँ पाए जाने गिरगिटों से काम से कम ड्योढ़ा है। मेरे सहयात्रियों ने तो विषधर-भुजंगों के भी दर्शन कर लिए; अच्छा ही है कि मेरा उनसे सामन नहीं हुआ। मुझे तो यहाँ की कई चट्टानें भी नाग आकृति की दिखीं। अब जरा नक्शे के रूप में इस मार्ग को समझे तो जलगली, कालझाड़, चित्रशाला, चिंतामन, पश्चिम द्वार, नागद्वारी काजरी यह सामान्य मार्ग है।

चलते-चलते जैसे ही ऊपर प्रमुख गुफा के सामनेवाले स्थान पर पहुँचते हैं, सामने लगभग पैंतीस फीट की विशाल कंदरा के दर्शन आश्चर्य

के साथ मन मोह लेते हैं। एक अविश्वसनीय, अकल्पित, अद्भुत, तिलस्म-सा। उसके और समीप आने पर तो आश्चर्य भरा मन कह उठता है ‘यह व्यापकता गगनचुंबी तो नहीं...!’ स्वेदमिश्रित थकान, वर्षा से भीगे वस्त्र और स्लिप-डिस्क के हल्के दर्द ने मुझे शैलाश्रय के लिए विवश कर दिया। यहाँ एक साधु चिलम भर रहा था। मेरी स्थिति को भाँप उसने मेरी ओर चिलम बढ़ा दी। धूम्र-पान न करनेवालों का प्रतिनिधित्व करते मेरे मना करने पर वह मुझे देख मुसकराया और बम-भोले बोलता हुआ वहाँ से चला गया। मैं निर्निमेष उसे पहाड़ी उतरते देखता रहा। अरे! मुझे उससे कुछ बोलना-बतियाना चाहिए था।

छह हजार फीट ऊँचाई पर बनी इस सुनसान गुफा में श्रद्धालुओं की भीड़ आस्था पुष्प अर्पित करने के लिए, शांति के साथ पंक्तिबद्ध है। यहाँ एक गुफा इतनी कठिनाई पर है कि वहाँ पहुँचना सामान्यतः कठिन है। इसमें नीबू फेंकने की मान्यता है। मैंने भी दो नीबू लिये, फिर कुछ सोचकर उनसे नीबू पानी बना तरोताजा हो लिया। इस प्रकार नीबू फिकाई को देख मुझे लगा, यह भी अच्छा ‘सीजनल बिजनेस’ है। क्या पता, जो नीबू बिक रहे हैं, वे ऊपर फेंके नीबुओं का पुनरागमन हों!

हम हर उस चीज को सत्य मनाने का प्रयत्न करते हैं, जिसे मानने का कोई ठोस आधार नहीं रहता। चलिए, लोगों को नीबू फेंकने दें और हम आगे बढ़ें। इस पवित्र गुफा में विराजी पुरातन शिव तथा नाग प्रतिमा देख कई लोगों के नेत्रों में अश्रु श्रद्धा को तरल कर रहे हैं। मैं भी उनमें से एक हूँ। दुनिया से संपर्क तोड़, शिव से जुड़ना मुझे इस यात्रा का ध्रुव-उद्देश्य लगा।

यात्रा प्रारंभ से अंतिम दिवस ‘नागपंचमी’ तक इस पवित्र कंदरा में विशेष पूजा-अर्चना होती है, जिसमें सभी भक्त बढ़-चढ़ के भाग लेते हैं। इस पूरे क्षेत्र में लोगों द्वारा चढ़ाए पैसों की व्यवस्था से लेकर वाहन स्टैंड तक के दायित्वों का व्यावसायिक पद्धति से आवंटन किया जाता है। यह कितना उचित और कितना अनुचित है, इसका चिंतन मैं सुधी पाठकों के ऊपर छोड़ता हूँ। आस्था के महा सैलाब की स्थली ‘नागद्वारी’ की यात्रा मूलतः गुप्तगंगा में पूजा के साथ समाप्त होती है।

मेरा उद्देश्य भी पूर्ण हो गया। प्रस्थान की वेला है। बस स्थानक के पास एक दुकान के शेड के नीचे खड़े-खड़े मैंने अपने राइटिंग पैड पर दृष्टि डाली। सभी बिंदु क्रमवार थे, फिर भी ऐसा लगा कि अभी बहुत कुछ छूट गया है। आश्चर्य, सौंदर्य और रहस्य से भारी इस घाटी के विषय में सत्य अभी परदे में है। ऐसा मेरा मानना है। क्या पता, कभी यह पवित्र गुफा स्वयं अपनी कथा सुनना चाहे! उस समय की प्रतीक्षा और अपने अमूल्य मसौदे के साथ मैं वापसी की बस में बैठ गया और धीरे-धीरे पीछे छूटता चला गया यह तिलिस्मी, सुंदर मान्यताओं के संसार नागद्वारी का, देवलोक के मार्ग का...।

सा
अ

दादू मोहल्ला-संजय वार्ड
सिवनी-४८०६६१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५१७५८६१

गजलें

गजल

● गोविंद गुलशन

: एक :

जिसमें हो सिर्फ तू ही तू ऐसा मुझे खयाल दे,
मेरी निगाहे-शौक्र में अपना तू अक्स डाल दे।

चारों तरफ हैं नूर की परतें तेरे इधर-उधर,
थोड़ी सी रौशनी उठा मेरी तरफ उछाल दे।

तेरी अजीम जात का, कोई नहीं मुकाबला,
कोई अगर मिसाल दे, कैसे तेरी मिसाल दे।

मैं ही अगर हूँ बेवफ़ा मुझसे त'अल्लूक़ात क्यूँ,
तुझसे जो हो सके तो अब दिल से मुझे निकाल दे।

तुझको न मैं समझ सका मेरी कोई खता नहीं,
तुझको समझ सकूँ सो तू दर्द में अपने ढाल दे।

: दो :

मुझको इस बार दुआओं का असर देखना है,
किस तरह बचता है आँधी में शजर देखना है।

मुश्किलें राह को दुश्वार बना देती हैं,
कैसे हो पाता है आसान सफर देखना है।

मेरे साये पे न कर वार तुझे होगा मलाल,
वार कर मुझपे अगर मेरा जिगर देखना है।

दर्द आलूद मनाज़िर हैं मेरे चारों तरफ़,
देख पाना इन्हें मुश्किल है मगर देखना है।

हो न जाए मेरा महबूब जुदा मुझसे कहीं,
किस तरह दिल से निकलता है ये डर देखना है।

आखिरी दौर में आ पहुँचा है साँसों का सफ़र
उससे कह देना उसे एक नज़र देखना है।

: तीन :

दर्द जब-जब जहाँ से गुज़रेगा,
क्राफ़िला हो के जाँ से गुज़रेगा।

फ़िक्र में आएगा सवाल मेरा,
और जवाब उसका हाँ से गुज़रेगा।

मैं तो ये सोच भी नहीं सकता,
कोई शिकवा जुबाँ से गुज़रेगा।

सामने आएगा मेरा किरदार,
ज़िक्र जब दास्ताँ से गुज़रेगा।

फिर मुझे याद आएगा बचपन,
इक ज़माना गुमाँ से गुज़रेगा।

रह गुज़र है उदास मेरी तरह,
जाने कब वो यहाँ से गुज़रेगा।

लोग हैरत में डूब जाएँगे,
जब भी वो दरमियाँ से गुज़रेगा।

ये परिदा जो क़ैद में है अभी,
एक दिन आस्माँ से गुज़रेगा।

: चार :

जब डूबकर न उभरे उम्मीद के सितारे,
तसवीर हो गए हम तसवीर के सहारे।

ख़ामोशियों की ज़द में आया हुआ हूँ लेकिन,
कानों में चुभ रहे हैं आवाज़ के शरारे।

जब डूबने लगा मैं महसूस हो रहा था,
आवाज़ दे रहे हों नज़दीक से किनारे।

हमने सफ़ेद काग़ज़ काले किए तो जाना,
शामिल सियाहियों में रहते हैं माहपारे।

हालाँकि झूठ को सच साबित किया है हमने,
लेकिन नहीं उतारे थाली में चाँद तारे।



सुपरिचित रचनाकार।
पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ
प्रकाशित। युग प्रतिनिधि
सम्मान तथा सारस्वत
सम्मान से सम्मानित।

उनसे नज़र मिली तो मंज़िल नज़र में आई,
महदूद हो गए हैं सब रास्ते हमारे।

पहले तो मेरे दिल ने मुझको बचा लिया था,
अब दिल भी दे रहा है बिखराव के इशारे।

: पाँच :

जब आई नींद तो फिर बच्चे ख़्वाब तक पहुँची,
सितारे गिनते हुए माहताब तक पहुँची।

तलब हुई थी अंधेरों में रौशनी की मुझे,
दिया जला तो तलब आफ़ताब तक पहुँची।

बहुत से फूल थे हर सिम्त और नज़र मेरी,
चमन में ताज़ा खिले एक गुलाब तक पहुँची।

नदी के साथ किनारों की तरह मैं भी चला,
बदल के राह जो अपनी, सराब तक पहुँची।

दबी हुई थी एक आवाज़ दिल में कब से मगर,
लबों तक आई तो फिर इंक्रलाब तक पहुँची।

फिर उसके बाद हुआ ये कि मिट गए दोनों,
वो दास्ताने मुहब्बत किताब तक पहुँची।

सा
अ

२२४, सेक्टर-१, चिरंजीव विहार
गाजियाबाद-२०१००२ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८१०२६१२४१

शुभ होता है, शुभ!

मूल : के.वी. तिरुमलेश

अनुवाद : डी.एन. श्रीनाथ

कन्नड़ के सुप्रसिद्ध कवि, कहानीकार और समीक्षक श्री के.वी. तिरुमलेश का जन्म १९४० में हुआ। हैदराबाद के सी.आई.ई.एफ. कॉलेज के प्राध्यापक रहे। कन्नड़ में वह आधुनिक कवि और कहानीकार के रूप में जाने जाते हैं। 'मुखवाड़गलु', 'वठारा', 'अवधा', 'सम्ममुख' आदि इनकी प्रमुख कृतियाँ हैं। सेवा-निवृत्ति के बाद स्वतंत्र रूप से साहित्य-साधना कर रहे हैं। उनकी एक चर्चित कहानी का हिंदी रूपांतर यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।

मे

रा लंबा नाम है राघवेंद्र राव। छोटा नाम है रघु। छोटा नाम ही मेरा पसंद का नाम है। मेरे लंबे नाम का पता तभी चला, जब मैं स्कूल में भरती हुआ था। जब इसका पता चला तो मुझमें यह भावना जाग्रत हुई कि मैं नहीं हूँ; दूसरा हूँ। जब मैं सिर्फ रघु था, उस जमाने में सुख से हमउम्र के, अपनी गली के बच्चों के साथ कोई-न-कोई खेल खेलता दिन बिताता था। बचपन में जो भी दिखता, आकर्षक लगता। नए लोग जब गली में आते तो एक तरह का कौतूहल होता कि वे कौन हैं, कहाँ से आए हैं और कहाँ जानेवाले हैं। कई लोग आते भी थे; जैसे सड़क का पता पूछने आनेवाले, पानी माँगते हुए आनेवाले, घर में काम-काज करने के लिए आनेवाले, भीख माँगनेवाले, सिर पर सामान लादकर बेचने के लिए आनेवाले, नंदी खिलानेवाले, भालू नचानेवाले, बंदर नचानेवाले, कसरत-तमाशा दिखानेवाले नट आदि। यद्यपि उस समय उनसे माँ, बापू, दादी या बड़ी बहन व्यवहार करते थे, लेकिन मैं भी उनके साथ शामिल हो जाता था। मुझे तो कोई काम-धंधा नहीं था न!

उसी तरह हमारी गली में आनेवालों में नरसन्ना भी था। वह हमारे घर के द्वार के पास आता था, शंख फूँकता था और घंटा बजाकर कहता, "शुभ होता है, शुभ होता है, नरसन्ना की बात शुभ होता है!" और उस समय घर से किसी को बाहर आना होता था, उसकी झोली में चावल या पैसे डालने होते थे। इस बीच वह कुछ-न-कुछ शकुन बता देता था। मेरी माता को उसके शकुन पर बड़ा विश्वास था। अगर कोई दिल्लगी करता तो वह कहती थी, "वह सौ शकुन कहता है, उसमें एक तो सच हो सकता है न, विश्वास करने में गलत क्या है?" यह कैसी तर्क की बात है, यह मेरी बड़ी बहन का वाद है। माँ से ज्यादा बड़ी बहन आधुनिक विचारधारा की नारी थी। वह कहती थी, "अगर मैं भी सौ शकुन कहूँ तो एक-दो शकुन तो सच होती ही हैं!" तब माँ कहती थी, "तुम तो नरसन्ना नहीं हो न!"

एक बार नरसन्ना ने कहा, "चाँदी चली जाएगी, सोना आएगा!" और कहकर वह चला गया था। उसके बाद माँ ने घर में जो-जो चाँदी की चीजें थीं, इस प्रकार छिपाकर रख दी थीं कि किसी को पता न चले। दादी ने कहा, "चाँदी जाकर सोना आ जाए तो अच्छी बात है न? अगर चाँदी

को छिपाकर रखोगी तो वह जाएगी कैसे? और सोना आएगा कैसे?" मगर इसके लिए माँ के पास जवाब नहीं था। मैं मन-ही-मन भगवान् से प्रार्थना करता था कि नरसन्ना का शकुन सच हो जाए। चाँदी और सोने के मूल्य में जो अंतर था, मुझे पता था, इसलिए मैंने इस प्रकार से प्रार्थना नहीं की थी। शकुन के कहने में जो कौतूहल था, इसलिए प्रार्थना की थी। नरसन्ना का हारना मुझे पसंद न था।

एक दिन हमारे घर की नौकरानी काम पर नहीं आई; आगे से आनेवाली भी नहीं है, यह भी पता चला। क्योंकि उसकी शादी तय हो चुकी थी। अब नई कामवाली को ढूँढना जरूरी हो गया।

हमारी गली में यह कोई मुश्किल काम नहीं था। दूसरी आई। उसी साल बड़ी बहन स्कूल-फाइनल में जिला स्तर पर प्रथम आई। जिले में जो प्रथम आते हैं, उन्हें चाँदी का पदक मिलना निश्चित था! नरसन्ना ने जो भविष्य बताया था, इस प्रकार सच हुआ? इसके बारे में घर में चर्चा हुई। बड़ी बहन ने कहा कि यह तो आधा सच है, पूरा सच मात्र सच है। घर के ज्यादातर लोगों ने बड़ी बहन के पक्ष में समर्थन दिया। माँ मानो अकेली रह गईं। उसने जिन-जिन चाँदी की चीजों को सुरक्षित रखा था, वैसी ही थीं! इस पर तुरंत दादी ने कहा, "चाँदी! शादी करने के लिए कामवाली काम छोड़कर चली गई थी न, उसका नाम भी चाँदी ही है न! चाँदी जाती है, सोना आता है! नरसन्ना की भविष्यवाणी सच हुई न!"

ठीक है न! हमने सोचा था कि चाँदी यानी गहने; यह सोचकर हम धोखा खा गए थे। चाँदी यानी कामवाली, जो हमारे घर का काम छोड़कर चली गई थी!

माँ ने गर्व से कहा, "शकुन की बातों को सीधा देखना नहीं चाहिए, टेढ़ा देखना चाहिए।"

मैं घर में कुछ दिन शंख लेकर नरसन्ना का अनुकरण करता रहा। मन में जो आता, भविष्यवाणी के रूप में बता देता था। माँ गरजकर कहतीं, "रघु, ऐसा नहीं करना चाहिए, यह गलत है।"

आगे चलकर मैं स्कूल में दाखिल हो गया तो नरसन्ना से भेंट कम हुई। शायद वह मेरी अनुपस्थिति में आता था। उसे देखने की, उसके शकुन

को और एक बार सुनने के लिए मन लालायित रहता था। उसके शकुन को और एक बार परखना चाहता था, यह मेरी सचमुच की इच्छा थी। मगर मुझे वह मौका ही नहीं मिल पा रहा था।

एक बार ऐसा हुआ कि हमारे गाँव में हर साल राम-कृष्ण उत्सव होता है। राम और कृष्ण की प्रतिमाओं को दो-दो लोग सिर पर रखकर चक्कर लगाते हैं, यह उत्सव की एक विशेषता है। फिर मेला और भीड़-भाड़ चलता ही रहता है। गाँव और आसपास के गाँवों से भी लोग अधिक संख्या में आते थे। मेला ही प्रमुख आकर्षण था। वहाँ हर चीज मिलती थी। मेले में हमारे घर के लोग जाते थे। एक बार मेले में एक विचित्र घटना घटी। रामू नामक एक जेबकतरा था; किट्टु उसका मददगार था। मेले में वे अपनी करामात दिखाते थे, यह निश्चित था। उस दिन रात में रामू ने एक आदमी के जेब से सेल फोन चुराया और उसे किट्टु के हाथ थमा दिया। किट्टु को उसे लेकर एक निश्चित जगह पर जाना था और रामू की राह देखनी थी। मगर जब यह घटना घट रही थी, किट्टु को पता चला कि आसपास मुफ्ती में पुलिस है। अपने हाथ में जो सेल फोन था, उसे कैसे छिपाना? उसने डर के मारे पास में खड़े व्यक्ति की झोली में उसे डाल दिया और दूर जाकर खड़ा हो गया। वह झोलीवाला व्यक्ति दूसरा कोई नहीं था, हमारा नरसन्ना ही था! उस दिन उसका शकुन-वाक्य था, 'जिस घर को बनाया, उसे नाश नहीं करता है राम, जिस घर में पैदा हुआ, उसे भूलता नहीं है कृष्ण!' उसके साथ ही उसका यह कहना जारी था कि शुभ होता है, शुभ होता है! इस मेले में उसकी झोली काफी भर जाती थी। इस बीच उसकी झोली में सेल फोन पड़ा था, जिसकी खबर उसे नहीं थी। मगर जिसने सेल फोन खो दिया था, उसे पता चला कि उसका सेल फोन किसी ने चोरी किया है, तो वह हो-हल्ला मचाने लगा। तुरंत ही पुलिस जो मुफ्ती में थी, सावधान हो गई। जो लोग पास में ही थे, रोक दिए गए। शायद पुलिस नरसन्ना की ओर ध्यान ही नहीं देती। मगर जब पुलिस अपने सेल फोन से, उस सेल फोन को, जो खो गया था, फोन किया तो नरसन्ना की झोली में से रिंगटोन बज गई!

पुलिस ने उसकी झोली अपने कब्जे में कर ली और नरसन्ना से पूछताछ की शुरुआत करने जा रही थी कि तभी नरसन्ना वहाँ से नौ-दो ग्यारह हो गया और फिर अँधेरे में चंपत हो गया।

मेला जहाँ संपन्न हो रहा था, वहाँ प्रकाश से जगमग कर रहा था। फिर भी आसपास के मैदान में गाढ़ा अंधकार छा गया था। नरसन्ना के मन में एक ही लक्ष्य था, पुलिस से बचकर कैसे जाना। आज पुलिस से बचकर भागने पर भी, पुलिस एक-न-एक दिन उसे पकड़ ही लेगी, यह अक्ल उसे क्यों नहीं आई, पता नहीं। गलती करने का एहसास उसमें न जाने क्यों था? मगर क्या करता, भागते-भागते वह एक पुराने कुएँ में गिर पड़ा।

वह दूसरे दिन ही पुलिस की पकड़ में आ गया। नरसन्ना का पाँव टूट गया था और वह कराहते हुए पड़ा था। उसे ऊपर उठाना ही मुश्किल काम था; फिर भी उसे ऊपर उठाया गया। उसे अस्पताल ले जाया गया, चिकित्सा कराई गई, पूछताछ की गई और उसके बाद उसे दो महीने की सख्त सजा दी गई। उसने कहा कि मैंने सेल फोन की चोरी नहीं की है, मगर कोई फायदा नहीं हुआ। क्योंकि वह 'रँगो हाथ' पकड़ा गया था और पुलिस से बचकर भाग निकला था। सेल फोन के नेपथ्य की घटना कुछ समय के



जाने-माने लेखक-अनुवादक। कन्नड-हिंदी में परस्पर अनुवाद। अब तक ८० पुस्तकें प्रकाशित। साहित्य अकादेमी का अनुवाद पुरस्कार, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का सौहार्द सम्मान, केंद्रीय हिंदी निदेशालय का अनुवाद पुरस्कार, कुवेंपु भाषा भारती प्राधिकार, बंगलुरु का पुस्तक पुरस्कार आदि से पुरस्कृत।

बाद ही पूर्ण रूप से सामने आई थी।

नरसन्ना दूसरों का भविष्य बताता है, मगर वह खुद अपना भविष्य क्यों नहीं जान पाया, इसके बारे में हम माँ से चर्चा करने लगे। माँ ने कहा था, "तुम सबको अक्ल ही नहीं है। नरसन्ना ने खुद अपने भविष्य के बारे में सोचा नहीं था। अगर डॉक्टर को खुद बीमारी का सामना करना पड़े तो क्या वह स्वयं चिकित्सा करेगा? दूसरे डॉक्टर की सलाह लेता है। नरसन्ना ने भी ऐसा ही किया। फिर उसने मेले में जिस वाक्य को कहा, उसे देखिए, 'जिस घर को बनाया, उसे नाश नहीं करता है राम, जिस घर में पैदा हुआ, उसे भूलता नहीं है कृष्ण!' यानी अगर राम खुद राजा बनने का हट करता तो अयोध्या राज्य चूर-चूर हो जाता; इसी प्रकार, कृष्ण का जन्म कारावास में हुआ था। इसे भी भूलना नहीं चाहिए। बेचारे नरसन्ना को बिना गलती किए जेल जाना पड़ा, है न?"

हमने कहा, "माँ, तुमने जो कहा, अक्ल की बात कही। मगर यह सब किस प्रकार का रिश्ता है?"

"रिश्ता है!" माँ ने कहा, "जेल जानेवाला हर इनसान अपराधी नहीं है, जेल के बाहर रहनेवाले हर इनसान सच्चा नहीं होता है; भगवान् का नाम 'राम और कृष्ण' रख लेते हैं और भगवान् के मेले में ही चोरी करते हैं; भोलाभाला इनसान जेल के अंदर रह जाता है और चोर-उचक्के बाहर रह जाते हैं। राघवेंद्र, इसके बारे में तुम क्या कहते हो?" माँ के तर्क से मैं दंग रह गया! जब मैं स्कूल जाने लगा, तभी से मुझे लंबे नाम से पुकारने लगी थी। यह ऐसा ही एक मौका था।

बाकी सभी खिलखिलाकर हँस पड़े। माँ नाराज हुई थी, यह स्पष्ट था। उस दिन शाम का नाश्ता नहीं मिला!

इधर नरसन्ना का पाँव ठीक हो गया है, मगर टेढ़ापन वैसा ही रह गया। वह लँगड़ाते हुए घर-घर आता है और भों-भों शंक फूँकता है, शकुन बताता ही रहता है, जैसे अपना कर्तव्य कर रहा हो। इधर हमें उस पर कुछ ज्यादा ही गौरव हो गया है; उसे कुछ ज्यादा वक्त खड़ा करके उससे बातचीत करते हैं और उसे कुछ ज्यादा ही पैसे देते हैं। यद्यपि हम उसके शकुन में विश्वास नहीं करते, मगर उस शकुन के बारे में अर्थ ढूँढ़ने में हम ज्यादा होड़ लगाते हैं।

(सा अ)

'नवनीत' दूसरा क्रॉस,
अन्नाजी राव लेआउट, प्रथम स्टेज
विनोबानगर, शिमोगा-५७७२०४ (कर्नाटक)
दूरभाष : ०९६११८७३३१०

नववर्ष की साँझ

● रोचिका अरुण शर्मा

२५

न दिनों विहान बहुत ही उदास रहने लगा था। मम्मी-पापा तो दफ्तर चले जाते हैं। स्कूल से घर लौटता है तो मंजू आंटी (आया) आ जाती हैं उसे बस पर लेने। घर आता है, कपड़े बदलता है, दूध पीता है और अपना गृहकार्य करता है। इतने में उसकी मम्मी दफ्तर से लौटकर आ जाती है। सबकुछ अच्छा ही चल रहा है। फिर भी विहान उदास ?

“चलो, विहान आज हम मॉल जाएँगे, वहाँ गोम्स खेलेंगे, बाहर तुम्हारा मनपसंद खाना खाएँगे।”

पापा ने कार स्टार्ट की और विहान मम्मी के साथ कार में बैठ गया।

मॉल में रहे तब तक तो विहान प्रसन्नचित्त रहा, लेकिन घर लौटते ही पुनः उदास। अगले रविवार, “चलो विहान, बच्चों की फिल्म आई है सिनेमा हॉल में।”

फिल्म देखते समय विहान खुश, लेकिन घर लौटते ही पुनः उदास। उफफ! क्या हो गया है इसे? कुछ समझ ही नहीं आ रहा।

मैं बताती हूँ मेम साहब, जब आप घर पर नहीं होते न, विहान अपनी अलमारी में से एक बुड़्डी औरत की तसवीर निकालकर देखता रहता है और न जाने उनसे क्या-क्या बातें करता रहता है। जब मैं रसोई में काम करती हूँ तो मुझे आवाजें आती हैं। एक दिन मैंने विहान के कमरे में आकर देखा तो यह तसवीर उसके हाथ में थी और वह इस तसवीर को एक चुटकुला सुनाकर हँस रहा था।

जैसे ही विहान के पापा ने वह तसवीर देखी, उनकी आँखों से आँसू बह निकले। उन्होंने तसवीर विहान की मम्मी की तरफ बढ़ा दी। तसवीर देखकर वह भी हैरत में पड़ गई।

दरअसल यह विहान की दादी की तसवीर थी, जिनका स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा था। इसलिए उन्होंने दादी को एक केयर सेंटर में भेज दिया था, ताकि वहाँ पर उनकी सार-सँभाल हो सके।

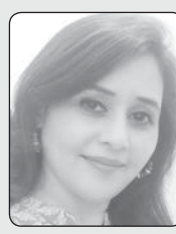
अगले रविवार, “चलो, विहान दादी से मिलने चलेंगे।”

विहान ने नए कपड़े पहने, दादी द्वारा कशीदा काढा हुआ रूमाल अपनी जेब में डाला और कार में बैठ गया।

केयर सेंटर में अपनी दादी को देखकर विहान उनसे लिपट गया। दादी-पोता दोनों की आँखों से आँसू बहने लगे। अपनी दादी को रोता देख विहान ने जेब से रूमाल निकाला और उनके आँसू पोंछ डाले।

“अब घर लौटते हैं विहान!” मम्मी का स्वर सुनते ही विहान जमीन पर पसर गया।

“मैं दादी को घर लेकर जाऊँगा, वरना मैं भी यहीं रहूँगा।” विहान ने जिद पकड़ ली थी। उसके पापा ने उसे गोद में उठाने की कोशिश की,



देश की पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, आलेख, कहानी, मुक्तक, दोहे, बाल कविताएँ एवं कहानियाँ आदि एवं साझा कहानी-संग्रह, कविता-संग्रह, लघुकथा-संग्रह प्रकाशित। साहित्य मंडल, श्रीनाथद्वारा द्वारा वर्ष २०१६ में ‘काव्य भूषण सम्मान’।

लेकिन वह तो दादी के पलंग का पाया पकड़कर अपनी जिद पर अड़ा हुआ था।

परिजनों के मिलने का समय समाप्त होने लगा था, सो केयर सेंटर के इनचार्ज ने विहान के पापा-मम्मी से बाहर जाने को कहा।

“बेटे विहान, घर में दादी की सेवा के लिए कोई नहीं। इसलिए हमने तुम्हारी दादी को यहाँ छोड़ा है। अगले रविवार हम पुनः तुम्हें इनसे मिलवाने के लिए लेकर आएँगे। तुम अभी तो घर चलो।”

“आपने मेरे लिए मंजू आंटी को रखा है न, वैसे ही दादी की सेवा के लिए भी आंटी रख दीजिए। लेकिन मैं दादी को यहाँ से लेकर ही जाऊँगा।”

हारकर विहान के पिता ने केयर सेंटरवालों से बात की और विहान की दादी को घर लेकर जाने की कार्रवाई पूरी की।

“आप इन्हें कल यहाँ से लेकर जा सकते हैं। हम आपकी दरखास्त आगे पहुँचा देते हैं।” केयर सेंटर इनचार्ज ने कहा।

लेकिन विहान तो टस-से-मस न हुआ। अब दादी ने विहान को गोद में उठाया और समझाया, “विहान मैं कल आऊँगी, आज मुझे मेरी सहेली के जन्मदिन की पार्टी में जाना है। अभी तुम अपने पापा के साथ घर जाओ।”

“कल पक्का आओगी घर?” विहान ने आँखें तिरछी कर पूछा।

“हाँ, मैं वादा करती हूँ, कल नव वर्ष साथ में ही मनाएँगे।”

अगले दिन सोसायटी में नववर्ष की पार्टी थी, लेकिन विहान कहीं नजर नहीं आया।

“अरे! विहान कहाँ रह गया?” पार्टी में उसके दोस्त उसे ढूँढ़ रहे थे।

थोड़ी देर में विहान अपनी दादी का हाथ पकड़कर मुसकराता हुआ पार्टी में पहुँचा। ‘हैप्पी न्यू इयर’ कह दादी ने सभी दोस्तों के हाथों में चॉकलेट थमा दी।

साँझ

३ सी.वी.जी.एन. कोस्टा
अपोजिट एम.जी.एम. डिज वर्ल्ड
ई.सी.आर. मुत्तुकाडु
चेन्नई-६०३११२
दूरभाष : ९५९७९७२४४४

गीत

● रमेश शर्मा

: एक :

मिले कभी जो यूँ राह चलते, तो आँसू अर्पण नहीं करेंगे!
दुःखों का क्या है, दुःखी तो हैं पर, दुःखों का वर्णन नहीं करेंगे!
सुने सुनाएँगे वो लतीफे, जो सुन के हम तुम, थे खिलखिलाए!
वो फिल्मी गाने, बिगाड़कर जो, हँसी-हँसी में थे, हमने गाए!
ठिठोलियों पर जो, नैन छलके, तो आगे दर्पण नहीं करेंगे!
दुःखों का क्या है, दुःखी तो हैं पर, दुःखों का वर्णन नहीं करेंगे!

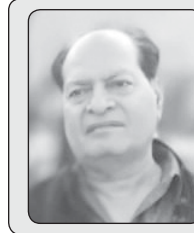
के खोल लाएँगे, मन्तों के तमाम धागे जो मिल के बाँधे!
मुँडेर से बेल गिर पड़ी वो, बँधी जो थी, चढ़ के मेरे काँधे!
पराजयों को रखेंगे जीवित, कभी भी तर्पण नहीं करेंगे!
दुःखों का क्या है, दुःखी तो हैं पर, दुःखों का वर्णन नहीं करेंगे!

चलो खिजाएँगे दर्द को हम, चिढ़ा-चिढ़ाकर रुला ही देंगे!
बड़े दिनों से थे, सिर चढ़ाए, उठाया हम ने, गिरा भी देंगे!
ये दर्द दंबूक दाग भी दे, नहीं समर्पण, नहीं करेंगे!
दुःखों का क्या है, दुःखी तो हैं पर, दुःखों का वर्णन नहीं करेंगे!

: दो :

यहाँ रहना है, पचास, साठ, सत्तर तक
दुश्मनी ऐसी है जैसे, हजारों साल जीना है!
मेरे बिन दिन टूटते, रात रूठती
उस पे अभिमान है तुमको, यही खुशहाल जीना है!

बारिशें लेकर के बादल, कभी पीछे भी फिरते थे!
पत्ते झरने की रुत में भी, हरे पत्ते ही गिरते थे!
झील सी आँखों में सपने, कभी मछली से तिरते थे!
चल रहे थे, सपाट रास्तों पे तुम
एक जरा ठोकर खाई तो, कहा जंजाल जीना है!



सुपरिचित गीतकार नीमच मध्यप्रदेश में जनमे तथा कला विषय से स्नातक। विभिन्न मंचों से गीत प्रसारित।

आँख में ले कर फिरता क्यूँ, गैर के गाल का, एक वो तिल!
सेठ की ड्योढ़ी से लौटा, हवेली में रख आया दिल!
दावतें दो दिन की पगले, घड़ी भर गीतों की महफिल!
कहाँ फिर वो बाँसुरी, मृदंग, वायलिन
टीन के टूटे डिब्बे पर, यही सुरताल जीना है!

मन तेरा बहका, ना टूटा, आँख फिसली न, कभी रोई!
दिन तेरा, मेले में बीता, रात बिन सपनों के सोई!
याद में तू न किसी के है न, तेरी यादों में कोई!
तेरी मुठ्ठी में, जमीन आसमान सब
जेब में सोने के सिक्के, मगर कंगाल जीना है!

भाग्य का लेख नहीं है ये, अपने अभिमान का लेखा है!
तेरे और मेरे 'मैं' के बीच, एक बारीक सी रेखा है!
द्वार की झिरी से छुप के, मुझे तुम ने भी देखा है!
मन हुआ जाता है कमजोर, पर ये कैसी जिद
मैं सुलह पर हूँ आमादा, तुझे हड़ताल जीना है!
यहाँ रहना है, पचास, साठ, सत्तर तक''''

सा
अ

गरिमा प्रोविजन स्टोर
सेगवा हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी
सेगवा रोड, चित्तौड़गढ़-३१२००१ (राज.)
दूरभाष : ९६८०३३३१११

गणतंत्र की गौरव-गाथा

• देवेंद्रराज सुथार

सो लह सौ ईसवी में अंग्रेज ईस्ट इंडिया कंपनी के जरिए भारत आए। शुरुआत में व्यापारिक कामकाज तक सीमित रहनेवाले अंग्रेजों ने सन् १७७५ में बंगाल, बिहार और उड़ीसा के राजस्व तथा दीवानी न्याय के अधिकारों पर कब्जा कर लिया। सिपाही विद्रोह के बाद ब्रिटिश सत्ता ने आधिकारिक तौर पर भारत का शासन अपने हाथों ले लिया। और यहीं से शुरू हुई असली आजादी की जद्दोजहद। लंबे संघर्ष के बाद १९३० आते-आते देश में पूर्ण स्वराज का माहौल बन चुका था। हालाँकि भारत की संविधान सभा का निश्चित उल्लेख जो भले ही इन शब्दों में या इस नाम विशेष में न हो, पहली बार भारत शासन अधिनियम, १९१९ लागू होने के बाद १९२२ में महात्मा गांधी ने किया था। इसके बाद अगस्त १९२८ में भारत के संविधान के सिद्धांत निर्धारित करने के लिए मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक समिति बनाई गई। इस समिति की रिपोर्ट 'नेहरू रिपोर्ट' के नाम से मशहूर हुई। फिर श्रीमती एनी बेसेंट की पहल पर कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया बिल, १९२५ अस्तित्व में आया। लेकिन १९२९ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने लाहौर अधिवेशन में पूर्ण स्वराज हासिल करने का निर्णय लिया। इसके बाद भी ब्रिटिश हुकूमत गोलमेज वार्ताओं के जरिए अपनी सत्ता और प्रभाव बनाए रखने की कोशिशें करती रही। यही कारण है कि पृथक् निर्वाचन व्यवस्था के जरिए उन्होंने हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिकता के बीज भी बोए।

सन् १९३४ में कांग्रेस कार्यकारिणी ने वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित संविधान सभा द्वारा एक संविधान तैयार



सुपरिचित कवि एवं लेखक। नियमित स्तंभ लेखन। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कविता, व्यंग्य और लघुकथाएँ प्रकाशित।

करने की माँग की। यह पहला मौका था जब संविधान सभा के लिए औपचारिक रूप से एक निश्चित माँग पेश की गई। इसके बाद १९३६ में कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में संविधान सभा द्वारा संविधान निर्माण की माँग की गई। १९३८ में कांग्रेस के पं. जवाहरलाल नेहरू ने घोषणा की कि स्वतंत्र भारत के संविधान का निर्माण वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनी गई संविधान सभा करेगी और इसमें कोई बाहरी हस्तक्षेप नहीं होगा। नेहरू की इस माँग को १९४० में ब्रिटिश सरकार ने मान लिया, जिसे 'अगस्त प्रस्ताव' के नाम से जाना जाता है। इस समय

कैबिनेट मिशन ने एक महत्वपूर्ण काम यह किया कि मुस्लिम लीग को उसकी माँग के दायरे में ही एक संविधान सभा गठन पर राजी कर लिया। आखिरकार कैबिनेट मिशन योजना के सुझाए प्रस्तावों के तहत जुलाई से अगस्त १९४६ के बीच संविधान सभा की कुल ३७९ सीटों में से ब्रिटिश भारत के लिए आवंटित २९६ सीटों पर चुनाव हुआ। इसमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को २०८, मुस्लिम लीग को ७३ और छोटे समूह तथा स्वतंत्र सदस्यों को १५ सीटें मिलीं।

द्वितीय विश्वयुद्ध का माहौल था। ब्रिटिश हुकूमत पर भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का काफी दबाव था। १९४२ में ब्रिटिश सरकार के कैबिनेट मंत्री सर स्टैफोर्ड क्रिप्स अपने साथियों के साथ भारत के स्वतंत्र संविधान के प्रारूप के प्रस्ताव के साथ भारत आए। क्रिप्स प्रस्ताव को मुस्लिम लीग ने अस्वीकार कर दिया। मुस्लिम लीग भारत को दो स्वायत्त हिस्सों में बाँटने की माँग कर रही थी। आखिरकार १९४६ में ब्रिटिश हुकूमत ने तीन सदस्यीय कैबिनेट मिशन भारत भेजा। इसमें लॉर्ड पैथिक लॉरेंस, सर स्टैफर्ड क्रिप्स और ए.वी. अलेक्जेंडर शामिल थे। कैबिनेट मिशन ने मुस्लिम लीग की दो संविधान सभाओं की माँग को

खारिज कर दिया और कुछ अहम सुझाव दिए।

कैबिनेट मिशन ने एक महत्वपूर्ण काम यह किया कि मुस्लिम लीग को उसकी माँग के दायरे में ही एक संविधान सभा गठन पर राजी कर लिया। आखिरकार कैबिनेट मिशन योजना के सुझाए प्रस्तावों के तहत जुलाई से अगस्त १९४६ के बीच संविधान सभा की कुल ३७९ सीटों में से ब्रिटिश भारत के लिए आवंटित २९६ सीटों पर चुनाव हुआ। इसमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को २०८, मुस्लिम लीग को ७३ और छोटे समूह तथा स्वतंत्र सदस्यों को १५ सीटें मिलीं। देशी रियासतों के लिए अलग से ९३ सीटें बाँटी थीं, लेकिन उन्होंने खुद को सभा से बाहर रखने का फैसला किया

और वे सीटें भर नहीं पाईं। नवंबर १९४६ को संविधान सभा का गठन हुआ। जिसमें महात्मा गांधी को छोड़कर उस वक्त राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़ी करीब हर बड़ी शख्सियत शामिल थी। संविधान सभा की पहली बैठक ९ दिसंबर, १९४६ को हुई। मुस्लिम लीग ने अलग पाकिस्तान की माँग को लेकर बैठक का बहिष्कार किया। लिहाजा पहली बैठक में कुल २११ सदस्यों ने हिस्सा लिया। सभा के सबसे वरिष्ठ सदस्य डॉ. सच्चिदानंद सिन्हा को सभा का अस्थायी अध्यक्ष चुना गया। बाद में डॉ. राजेंद्र प्रसाद सभा के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। डॉ. हरेंद्र कुमार मुखर्जी और वी.टी. कृष्णमाचारी को सभा का उपाध्यक्ष निर्वाचित किया गया।

१३ दिसंबर, १९४६ को पंडित नेहरू ने सभी के सामने पहली बार संविधान सभा के उद्देश्य रखे। इन उद्देश्यों में ही दरअसल सभा का ढाँचा और उसके कामकाज की झलक थी। इसमें भारत को एक स्वतंत्र, संप्रभु गणराज्य घोषित किया गया। ब्रिटिश भारत के सभी हिस्सों और इनमें शामिल होने की इच्छा रखनेवाले क्षेत्रों को संघ के दायरे में लाया गया। संप्रभु भारत के सभी अधिकार और शक्तियों का स्रोत जनता को बनाया गया। सभी के लिए न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्वतंत्रता, सुरक्षा और समान अवसर, विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, कहीं भी आने-जाने और संगठन बनाने की स्वतंत्रता जैसी कई बातें घोषित की गईं। इस प्रस्ताव को २२ जनवरी, १९४६ को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। बेनेगल नरसिम्हा राव द्वारा किए गए संविधान के प्रारूप पर विचार-विमर्श करने के लिए संविधान सभा ने २९ अगस्त, २९४७ को एक संकल्प पारित कर प्रारूप समिति का गठन किया गया। और इसके अध्यक्ष के तौर पर डॉ. भीमराव अंबेडकर को चुना गया।

इस समिति में अंबेडकर के अलावा छह और सदस्य थे। इस दौरान संविधान सभा ने कुछ और महत्वपूर्ण फैसले किए। मई १९४९ में राष्ट्रमंडल में भारत की सदस्यता का सत्यापन किया गया। २२ जुलाई, १९४७ को भारत के राष्ट्रीय ध्वज को अपनाया गया। २४ जनवरी, १९५० को संविधान पर संविधान सभा के सदस्यों ने अंतिम रूप से हस्ताक्षर किए। २४ जनवरी, १९५० को राष्ट्रीय गान को अपनाया गया। २४ जनवरी, १९५० को ही राष्ट्रीय गीत को अपनाया गया।

इस समिति में अंबेडकर के अलावा छह और सदस्य थे। इस दौरान संविधान सभा ने कुछ और महत्वपूर्ण फैसले किए। मई १९४९ में राष्ट्रमंडल में भारत की सदस्यता का सत्यापन किया गया। २२ जुलाई, १९४७ को भारत के राष्ट्रीय ध्वज को अपनाया गया। २४ जनवरी, १९५० को संविधान पर संविधान सभा के सदस्यों ने अंतिम रूप से हस्ताक्षर किए। २४ जनवरी, १९५० को राष्ट्रीय गान को अपनाया गया। २४ जनवरी, १९५० को ही राष्ट्रीय गीत को अपनाया गया। और यही नहीं, संविधान सभा ने ही २४ जनवरी, १९५० को डॉ. राजेंद्र प्रसाद को भारत के पहले राष्ट्रपति के तौर पर चुना। इस तरह कुल दो वर्ष, ग्यारह महीने और अठारह दिन में संविधान

सभा की ग्यारह प्रमुख बैठकें और कई उप-समितियों की बैठकें हुईं। डॉ. भीमराव अंबेडकर की अगुवाई में संविधान निर्माताओं ने ६० देशों के संविधानों पर चर्चा की। डॉ. अंबेडकर ने ४ नवंबर, १९४८ को संविधान का अंतिम प्रारूप पेश किया। इसी दिन संविधान पहली बार पढ़ा गया। इस पर पाँच दिन तक आम चर्चा हुई और ऐसी तीन बैठकें हुईं। आखिरकार २६ नवंबर, १९४९ को संविधान को सर्वसम्मति से अपना लिया गया और २६ जनवरी, १९५० को इसे एक लोकतांत्रिक सरकार प्रणाली के साथ लागू किया गया।

संविधान में अल्पसंख्यक जनों के संवैधानिक अधिकारों की रक्षा के लिए विशेष प्रावधान व दलित और पिछड़े तबके के लोगों के लिए आरक्षण एवं उदारवादी तरीका अपनाया गया। समानता, स्वतंत्रता और बंधुता का सिद्धांत फ्रांस के संविधान से आयातित किया गया। खुद अंबेडकर इस सिद्धांत के पुरोधा और प्रतिपालक थे। संविधान सभा में देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने अंबेडकर के इस मुश्किल काम को कम समय में अपनी सूझबूझ और बुद्धिमत्ता से संपन्न करने के लिए भूरि-भूरि प्रशंसा की। साथ ही अंबेडकर की परिकल्पना के आधार पर रिजर्व बैंक की स्थापना भी की गई। संविधान को आकार देने के लिए पश्चिमी मॉडल इस्तेमाल किया गया तथा ब्रिटिश, आयरलैंड, अमेरिका, कनाडा और फ्रांस सहित विभिन्न देशों के संविधान प्रावधान लिये गए, पर इसकी मूल भावना भारतीय है।

सा
अ

गांधी चौक, आतमणावास, बागरा
जिला-जालौर-३४३०२५ (राजस्थान)
दूरभाष : ८१०७१७७१९६

छुट्टा छांड

• रमा पांडेय

क

भी अपने मुँह से निकली बात इस तरह वापस निगलनी होगी, यह पता होता तो श्रीमती वर्मा कभी अपना मुँह न खोलतीं। मैंने अपने बचपन से ही अम्मा को श्रीमती वर्मा से यह कहते सुना था, इंदिरा सोच-समझकर बोला करो, कभी-कभी ऊपर भगवान् सुन रहे होते हैं, वे कहते हैं, जरूरत से ज्यादा बोलनेवाले की यही सजा है, जो वह दूसरे के लिए कह रहा है, वही उसके लिए भी सच हो जाए।

अभी कुछ महीने पहले की ही बात है कि श्रीमती वर्मा यानी इंदिराजी एक चंपे की डाली को सड़क से उठाकर घर लाईं और उसे काला रंग लपेटकर अपनी सूखे पत्थरों की रॉकरी पर गाड़ दिया। ठीक ही लग रहा था वह काला टूँठ। क्योंकि रॉकरी पत्थरों से बनती है बीच-बीच में थोड़े पेड़-फूल लगाने से, पत्थर भी लाल रौनकी लाल हो जाते हैं, यानी रौनक पा जाते हैं और वह पेड़-पौधे भी पत्थर के स्पर्श से अपने को और मजबूत पाकर खिल उठते हैं। यह आधुनिक बागवानी की नई मिसाल है, जो इंदिराजी के कल्लू माली को निहायत बेवकूफी की बात लगती थी। उसे बिल्कुल नापसंद था पत्थर फूल का साथ माटी पौधे के साथ। उसने न जाने कितने उजड़े बगीचों में जान डाली थी, पर पत्थर फूल का साथ कतई नापसंद था। उसने मालकिन से हल्के सुर में विरोध करते हुए कहा, 'पत्थर गरमा जाते हैं, पौधे मर जाएँगे', पर फिर बेचारा पेट की मार से चुप रह गया। मन-ही-मन पछताता रहा कि कैसे जाहिलों के यहाँ काम कर रहा है।

जबसे सूखी चंपा की डाली लाई गई, फिर काले रंग में रंगी गई और रॉकरी में लगाई गई, कल्लू का तो कलेजा ही फट गया, आखिर उससे न रहा गया। उसने कह ही डाला—यह छुट्टा छांड डाल उठा लाईं हो मेम साहब बगीचा सजाने को? यह इतनी सी डाल अपने पेड़ में लगी रह सकी, यह आपका बगीचा क्या सजाएगी। अरे, हमारे यहाँ छुट्टा छांड कुछ भी नहीं रोपा जाता, यहाँ तक कि खूँटे से छूटी गाय भी कोई अपने यहाँ नहीं बाँधता कि न जाने क्या रोग हो, ऐसे कैसे खूँटे से छोड़ दी गई, उसके पीछे क्या-क्या कहानी छिपी हो, गाँव का आदमी छुट्टा छांड चीज के हाथ तक नहीं लगाता। कल्लू अभी बोल ही रहा था कि तभी आ गई इमरती मालिशवाली,



सुपरिचित लेखिका, कवयित्री। दूरदर्शन पर उद्घोषिका। कई राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय पुरस्कारों से पुरस्कृत।

हमेशा की बातूनी। उसने भी कल्लू की हाँ में हाँ मिलाई, 'देखो मालकिन, बात सही है। हमारे गाँव में तो छुट्टा छांड साँड़ और छुट्टा औरत से नाता करने से परहेज-विधवा से नाता कर डालो जात है पर छुट्टा छांड यानी आदमी की छोड़ी औरत से कोई नाता नहीं करत। नाता तो जानती हो न मलकिन, माने फेरा न करो पंचों के सामने नाते का करार कर दो। अरे मेम साहब, हमारे यहाँ तो यह भी कहो जात है, छुट्टा छांड से राँड भली, फेंक दे ये डाली का इसमें कौन से फूल झरेंगे।' इंदिरा को इन मुँह लगे नौकरों पर जमकर गुस्सा आया। सार्थक उसका ३० साल का बेटा पास ही बैठा था, जो वकील था, वह हँसकर बोला, किन बेवकूफों की बातों में आ रही हो अम्मा, तुम्हारा मन है तो यह सूखी काली चंपे की डाल यहाँ गड़ेगी और कल्लू, यू शटअप, लगा दो चंपा की डाली जहाँ अम्मा कर रही हैं।

ओ भई चंपाजी लग गई। कल्लू रोज रॉकरी में पानी डालता, कुछ छोटें चंपा पर भी पड़ते। तीन महीने गुजरे तो इंदिरा ने देखा, सूखी डाल से चंपा की हरी पत्तियाँ फूटीं और १५ ही दिन में कलियाँ आ गईं। अब तो इंदिरा ने जमकर विजय की घोषणा कर दी, आ गई न चंपा, आ गई न चंपा, मैं जीत गई। कल्लू माली का उतरा मुँह देखने लायक था, इमरती की जुबान भी बंद। लीजिए जनाब, देखते-ही-देखते चंपा की सूखी डाल से लाल-लाल चंपा के सुगंधवाले फूलों का गुच्छा फूट निकला। इंदिराजी इतनी खुश, इतनी खुश कि उनका बस चलता तो मोहल्ले भर में चंपा के फूल खिलने की खुशी में लड्डू बँटवा के ही दम लेतीं। वह तो न किया, पर किटी पार्टी इस बार अपने घर रख ली। बड़ा सा जूड़ा बनाया, उसमें लाल चंपा का फूल नहीं पूरे का पूरा चंपा का गुच्छा लगाया। सुंदर तो वह थीं ही, पर लाल चंपा के मुग्ध भाव ने उनके चेहरे पर कुछ ज्यादा ही ललौँछ ला दी। वर्मा साहब भी

इंदिराजी को छेड़ दिए। प्रोफेसर आदमी धीरे स्वभाव में बोले, 'आज क्या शहर में कल्ल के इरादे हैं? ऐसा करो किटी पार्टी का नाम चंपा पार्टी रख लो।' कहना न होगा पार्टी हिट रही, श्रीमती वर्मा पूरी पार्टी में मोरनी सी पंख फैलाए नाचती रहीं। हाय तब क्या पता था कि इस छुट्टा छांड कहावत पर गाज गिरनेवाली है।

सार्थक (उनका बेटा) पिछले कुछ दिनों से अजीब सा व्यवहार कर रहा था। लगता था जैसे अंदर-ही-अंदर कुछ चल रहा है, श्रीमती वर्मा ने पूछा भी, पर उसने कहा, नहीं कुछ होगा तो बता दूँगा।

अब आते हैं मुद्दे की बात पर, हुआ यों कि पिछले सप्ताह अदालत का नाम बताकर सार्थक जो मुंबई गया तो कई दिन तक नहीं लौटा, बड़ी हल्की तौर पर एक या दो फोन करता रहा एक दिन अचानक उसका फोन आया तो श्रीमती वर्मा ने कड़ककर कहा, बताते क्यों नहीं कि तुम्हारे साथ क्या चल रहा है, ऐसा तो तुम कभी नहीं करते। देखो, मैं माँ हूँ, मुझे अंदर से लग रहा है, कुछ तो है जो ठीक नहीं है। सार्थक एक लंबी खामोशी के बाद बोला—हाँ माँ, अब कहे बिना चारा नहीं, मैंने वत्सला से यहाँ कोर्ट मैरिज कर ली है। श्रीमती वर्मा बेहोश होते-होते बर्ची, भिंची हुई आवाज में बोली—क्या? तभी सार्थक बोला—मालूम है, तुम मुझे माफ नहीं करोगी। सुनो माँ, वत्सला अब अकेली वकालत करेगी। उसने अपने पति से आपसी रजामंदी से तलाक ले लिया है, दोनों ने कोई कारण जाहिर नहीं किया, बस कहा हम कि अब साथ नहीं रह सकते। न इसने कुछ माँगा, न उसने कुछ दिया। बिना चर्चा किए पाँच साल का वैवाहिक संबंध जब खत्म हुआ तो आप सब इस बात को पचा नहीं पाए। हर रोज आप सबने परनिंदा के पान खूब चबाए। वत्सला ऐसी, वत्सला वैसी, जरूर सारी गलती वत्सला की ही होगी, लोग जिंदगी में क्या-क्या नहीं बर्दाश्त करते। अरे जैसे पाँच साल कट गए, वैसे ही बाकी के पचपन भी कट जाते और भी जाने क्या-क्या, तुम औरतों की वाहियात बातें, औरतों ही औरतों को नंगा करती हैं।

सार्थक फिर बोला—सुन रही हो न माँ, टेलीफोन पकड़कर मूर्ति बन जाने से काम नहीं चलता, मैं वत्सला को बचपन से जानता हूँ, पर मन में कभी उठता उगता, उससे पहले ही उसकी शादी कर दी गई। एक इश्क पनपने से पहले ही मुरझा गया। वत्सला के साथ बच्चे की कोई जिम्मेदारी नहीं है, अगर होती तो मैं वह जिम्मेदारी भी ले लेता। आप शायद बेहद चोंक रही होंगी, अफसोस कर रही होंगी कि आपका सार्थक ऐसी निरर्थक बातें कर रहा है।

माँ यही जीवन का सही अर्थ है कि आप किसी के जीवन को निरर्थक न होने दें। कुछ ऐसा करें कि उसका जीवन भी सार्थक हो जाए। रोओ मत माँ, चुप हो जाओ।

इंदिराजी बड़ी मुश्किल से मुँह से आवाज निकाल पाई, बोलीं, तूने तो

मुझे जीते-जी मार दिया सार्थक, मेरे क्या-क्या सपने थे।

सार्थक बोला, 'तुम्हारे सपनों में अपने नहीं शामिल होते क्या माँ?'

इंदिराजी बोलीं, 'क्या बकवास कर रहे हो?'

'तुम अपने नहीं हो क्या? ये सपने तुम्हें लेकर ही तो देखे मैंने।'

सार्थक बोला, 'फिर अपनों के अपने भी तो तुम्हारे अपने हुए न माँ, मैं वत्सला से बेहद प्यार करता हूँ, अब यह विवाह हो चुका है। तुम्हारी परेशानी में समझता हूँ, तुम वत्सला से नहीं, समाज से डरती हो।'

इंदिरा बोली—ज्यादा वकालत मत झाड़ो, यह कोर्ट नहीं है, यह मेरा घर है, जहाँ मैं और तुम्हारे पापा ही सब फैसले लेते रहे हैं। फिर जोर से रोकर बोलीं, 'हाय, मैं वर्माजी को क्या मुँह दिखाऊँगी।'

सार्थक बोला—तुम वत्सला की मुँह दिखाई के बारे में फैसला दो माँ, पापा को सब मालूम है, बाहर निकलकर देखो। लान में अंकल और पापा आपस में बात कर रहे हैं, रखता हूँ माँ, अपना फैसला देना माँ, मैं और वत्सला अपने घर ओह सारी, तुम्हारे घर आ सकते हैं या नहीं?

इंदिरा फफककर रो पड़ी, फोन हाथ में ही था कि वर्माजी अंदर आ गए पीछे-पीछे शर्माजी भी थे।

वर्माजी बोले, 'क्यो रो रही हो इंदिरा? घर में बहू आ रही है, रोने से अपशगुन होता है। शर्माजी हाथ जोड़कर बोले, 'भाभीजी बहुत शर्मिंदा हूँ, आप हमें माफ कर दें, आपका दुःख समझ सकता हूँ।'

इंदिराजी फुफकारते हुए बोलीं, दुनिया तबाह कर दी मेरी इन दोनों ने, अब क्या होगा।

वर्माजी हँसकर बोले, होगा क्या? दोनों का शानदार रिसेप्शन होगा, मैं और शर्माजी मिलकर करेंगे।

श्रीमती वर्मा फिर फुफकारी—मिलकर नहीं, नाचकर करना, बहुत बढ़िया काम हुआ है, समाज में बहुत बढ़िया काम हुआ कि एक उजड़ी लड़की को अपने इकलौते कुँवारे लड़के की बहू बनाकर ला रहे हैं।

अब बारी शर्माजी के गुस्सा होने की थी। हमेशा मीठा बोलनेवाले वर्माजी तमककर बोले, 'तुम कैसी हो इंदिरा? अभी पाँच महीने पहले तुम उस डाल से बिछुड़ी चंपा की डाली को फिर से जिंदगी देकर बहुत खुश थीं। मोहल्ले भर में इतरा रही थीं, आज हमारा बेटा एक इनसानो चंपा को फिर से जिंदगी दे रहा है तो तुम इतना शोक मना रही हो। खुश हो जाओ, सार्थक एक जीवन को फिर जीने का अर्थ दे चुका है। वत्सला को भी लाल चंपा समझकर अपने केशों में सजा लो। इंदिरा, देखना घरभर महक जाएगा। वत्सला न छुट्टा छांड है न राँड। वत्सला हमारी बहू, एडवोकेट वत्सला वर्मा है। और यही नया सच है।

सा
अ

सी-५११, ए एनजीक्यूटिव विला
सुशांत लोक, फेस-१
गुरुग्राम-१२२००२

हम हार नहीं मानते

मूल : टॉमस ट्रांसट्रोमर

अनुवाद : बंशीधर तातेड

साहित्य के नोबल पुरस्कार से सम्मानित स्वीडन के महान् कवि टॉमस ट्रांसट्रोमर का जन्म १५ अप्रैल, १९३१ को स्टॉकहोम (स्वीडन) में हुआ। उनके लेखन की शुरुआत १९५० के दशक में हुई। उनकी कविताओं में रोजमर्रा की बातें और सादगी के लिए कोशिश करने की विशेषता रही है। उनकी कविताओं को समृद्ध, उत्सुक और मूल कल्पना द्वारा चिह्नित किया गया है। उनकी दो बड़ी रुचियों में प्रकृति और संगीत रहे हैं, जिसकी गहरी छाप उनकी कविताओं पर देखने को मिलती है। यहाँ प्रस्तुत है उनकी कुछ कविताओं का हिंदी-रूपांतर।



त्वरित गति

मैं एक काले दिन के बाद
हेडन खेलता हूँ
और अपने हाथों में
एक सामान्य गरमी महसूस करता हूँ।
चाबियाँ तैयार हैं।
नरम हथौड़ों से प्रहार।
प्रतिध्वनि हरी, जीवंत और शांत।
संगीत कहता है कि आजादी मौजूद है
और कोई भी सम्राट्
कर का भुगतान नहीं करता है।
मैं मेरे हाथों को
अपने हेडनपॉकेट में धकेलता हूँ
और शांति से दुनिया को
देखनेवाले व्यक्ति की नकल करता हूँ।

मैं हेडनफ्लेग फहराता हूँ
जो यह बताता है—
'हम हार नहीं मानते।
परंतु शांति चाहते हैं।'
संगीत ढलान पर काँच का घर है
जहाँ पत्थर उड़ते हैं,
वहाँ पत्थर लुढ़कते हैं।
और पत्थर हकीकत में लुढ़कते हैं
परंतु प्रत्येक फलक पूरा रहता है।

आधा-अधूरा स्वर्ग

निराशा अपनी कार्यप्रणाली को तोड़ देती है

पीड़ा अपनी कार्यप्रणाली को तोड़ देती है
गिद्ध अपनी उड़ान को तोड़ देता है।
आतुर प्रकाश बहता है
यहाँ तक कि भूत भी एक दवा की खुराक लेता है
और हमारे चित्र दिन के उजाले को देखते हैं
हिमयुग स्टूडियो के हमारे लाल जानवर।
सबकुछ इधर-उधर देखने लगता है
हम सैकड़ों में धूप में चलते हैं
प्रत्येक आदमी अध-खुला दरवाजा है।
सबके लिए एक कमरे के लिए अग्रणी
हमारे नीचे अंतहीन जमी
दरख्तों के बीच जल चमक रहा है
झील पृथ्वी में एक खिड़की है।

खुले और बंद स्थान

एक आदमी अपने कार्य से संसार को
एक दस्ताने की तरह महसूस करता है।
वह दुपहरी में कुछ देर के लिए
शेल्फ पर दस्ताने अलग रखकर
आराम करता है।
वहाँ वे अचानक बढ़ते हैं
फैलते हैं और पूरे घर को
अंदर से अँधेरघोर कर दिया।
काला घर वसंत की हवाओं के बीच दूर है।
'आम माफी' घास में फुसफुसाती है 'आम माफी'।
एक लड़का आकाश में
एक अदृश्य रेखा को
तिरछा करके दौड़ता है

जहाँ उसके भविष्य का जंगली सपना
उससे भी बड़ी पतंग की भाँति उड़ता है
उपनगर।

आगे उत्तर में आप एक चोटी से
नीले अंतहीन कालीन को देख सकते हैं
चीड़ के जंगल
जहाँ बादल छाया
स्थिर खड़े हैं
नहीं उड़ रहे हैं।

दबाव में

नीले आसमान का इंजन-ड्रोन
बहरा कर रहा है।
हम यहाँ कैंपकंपी वाले कार्यस्थल पर रह रहे हैं
जहाँ संसार की गहराई
अचानक खुल सकती है—
गोले एवं टेलीफोन फुफकार।
आप सुंदरता को सिर्फ
एक पक्ष से देख सकते हैं,
जल्दबाजी में।

मैदान पर घना अनाज,
पीली धारा में कई रंग।



सुपरिचित लेखक एवं अनुवादक। अब तक
'आँख के धन को', 'सुनहरी धूप से संवाद'
(हिंदी गजलें), 'कर्म का अटल सिद्धांत'
'घोराँ खिल्या गुलाब' (राजस्थानी काव्य),
'कितनी सुहानी भोर' (हिंदी गीत)। तीन दर्जन
विदेशी लेखकों की कहानियों और कविताओं
का राजस्थानी में अनुवाद। 'स्टेट अवार्ड
२०१५', 'पद्मश्री मगराज जैन सम्मान' एवं अन्य सम्मान।

मेरे सिर में बेचैन साये
वहाँ खींचे जाते हैं।

वे अन्नाज में रेंगना और
सोना बनना चाहते हैं।
अँधेरा हो रहा है
अर्ध-रात्रि को मैं सोने जाता हूँ
छोटी नाव बड़ी नाव से बाहर निकलती है
आप पानी में अकेले हैं।
समाज की काली पतवार
आगे और दूर जाती है।

सा
अ

केशर कुंज, स्कूल नं. ४ के पास,
बाड़मेर-३४४००१ (राज.)
दूरभाष : ९४१३५२६६४०

बच्चे हम आँगनवाड़ी के

कविता

● लाल बहादुर श्रीवास्तव

बच्चे हम नन्हे-मुन्ने आँगनवाड़ी के
रोजाना जाते हम आँगनवाड़ी में,
दो दीदी, एक बड़ी और एक है छोटी
आँगनवाड़ी में सदा हमारे साथ रहती
बड़ी दीदी खेल खेल में पढ़ाती
हमको अक्षर ज्ञान रोज कराती
गीत कविताएँ खूब सुनाती
अच्छी-अच्छी बातों से मन बहलाती
नेक बने हम नन्हे-मुन्ने हम सब
अपना प्यार माँ सा हम पर लुटाती...
छोटी दीदी हमें घर से साथ लाकर
देखभाल खूब हमारी नित करती,
एक लाईन में सबको बिठाकर
नाश्ता और खाना समय पर खिलाती

जब होती छुट्टी आँगनवाड़ी की तब
हाथ पकड़ घर तक छोड़ने जाती...
आँगनवाड़ी फूलों की है फुलवारी
हम नन्हें मुन्ने इसके खिलते फूल
आँगनवाड़ी में खेल खिलौने ढेरों
मन हम सबका खूब ये बहलाते हैं
खेल-खिलौने हमको गुदगुदाते हैं...
आँगनवाड़ी में जाकर नैतिक शिक्षा
और भाईचारे से रहना हम सीखते हैं
स्वस्थ रहे हम सदा वजन मशीन
पर समय-समय पर तुलते रहते हैं
हेल्थ चेक अप से स्वस्थ रहते हैं
पूरक पोषण आहार से पोषित रहते हैं...
जब आती आँगनवाड़ी में मेडम, सर



चित्रकार, कहानीकार एवं कवि। कहानी,
कविता, लघुकथा, साक्षात्कार, व्यंग्य,
यात्रा-वृत्तांत, बाल कविताएँ, कहानी
पत्र-पत्रिकाओं एवं समाचारों में निरंतर
प्रकाशित। 'नया सवेरा, धूप छाँव'
(बाल संग्रह), मुखौटे लघु कथा-संग्रह
प्रकाशित। जनगणना गीत लेखन के लिए
राष्ट्रपति रजत पदक से सम्मानित। साहित्य सेवा सम्मान एवं
कई संस्थानों द्वारा रचनाओं पर सम्मानित।

हम मान सम्मान से अभिवादन
सबका नन्हे-मुन्ने तन-मन से करते हैं।

सा
अ

शब्द शिल्प, एल.आई.जी. ए-१५
जनता कॉलोनी, मंदसौर-४५८००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५०३३९६०

सोफा कवर

● परगट सिंह जठोल

अ

चानक पत्नी ने पूछा कि तुम्हें अपने देश की कौन सी बात सबसे अच्छी लगती है? मैंने कहा, 'डाइवर्सिटी, विभिन्नता और एक खास शब्द कहूँ तो 'विचित्रता'।

इस बात से यह मत समझ लेना कि मेरे जवाब में कोई गंभीर दर्शन अथवा संजीदा सोच छिपी है, मैं तो हल्के-फुल्के अंदाज में सिर्फ यह कहना चाहता था कि हमारे यहाँ हर गली-नुकड़ में एक से बढ़कर एक विचित्र प्राणी मिलते हैं। जैसे वह कहानी है न कि एक ट्रक ड्राइवर ने अपने ट्रक के पीछे लिखवाया हुआ था, 'प्रणाम शहीदां नूँ', किसी ने प्रभावित होकर उसे रुकवाया और ईनाम देना चाहा, अब ट्रक ड्राइवर ने हैरान होकर ईनाम देने की वजह पूछी, तो उस राहगीर ने कहा कि तुम्हारे दिल में हमारे शहीदों के प्रति कितना सम्मान है, जिन्होंने देश के लिए कुर्बानियाँ दीं। इस पर ट्रक ड्राइवर ने ईनाम वापस देते हुए कहा, 'साहब, मैं तो उन शहीदों को प्रणाम कर रहा हूँ, जो मेरे ट्रक के नीचे आकर शहीद हुए हैं।'

इसलिए मैंने भी डाइवर्सिटी, विभिन्नता आदि शब्द सिर्फ बोलने के लिए बोल दिए, मैं यहाँ सिर्फ विचित्रता का बखान करना चाहता हूँ। वैसे तो ऐसे लोग हर रोज कहीं-न-कहीं मिल जाते हैं, बशर्ते आप अपने आँख-कान खोलकर चलें और यह समझ लें कि मोबाइल के बाहर भी दुनिया बसती है।

कल हम बाजार गए, जोकि मेरे लिए हमेशा तकलीफदेह होता है, क्योंकि पैसा खर्चना मुझे अच्छा नहीं लगता। कई दिन से पत्नी कह रही थी कि सोफे पर धूल चढ़ जाती है, इसके लिए कवर खरीदकर लाते हैं। छोटा सा बाजार है मेरे कस्बेनुमा शहर का, किसी ने बताया कि एक दुकान है, जहाँ आपको अच्छे सोफा कवर मिल सकते हैं। हम सीधे उसी दुकान पर गए, यहीं वह घटना घटी, विचित्रता वाली।

हम दो-तीन सीढ़ियाँ चढ़कर दुकान में पहुँचे, काउंटर पर लगभग 55 साल का एक आदमी बैठा था, जिस तरह से वह आराम फरमा रहा था, लगा कि दुकान का मालिक ही हो सकता है। किसी विचार में मगन वह गुमसुम सा बैठा था, दुकान पर कोई ग्राहक पहले से नहीं था।

हमें देख वह थोड़ा सचेत हुआ तो मैंने पूछा, 'सोफा कवर मिल



(समाजशास्त्र) के पद पर कार्यरत।

सुपरिचित लेखक। 'मैं आदम नहीं' नाम से। इनका पंजाबी भाषा में काव्य-संग्रह प्रकाशित। साहित्य सेवा में कार्यरत, विभिन्न पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति झज्जर हरियाणा में स्टेट इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडीज इन टीचर एजुकेशन में असिस्टेंट प्रोफेसर

जाएँगे, वे होजरी वाले, सोफे को ऊपर से ढकने के लिए?'

उसने सोफे का साइज पूछा, मैंने बताया कि जो सोफे का स्टैंडर्ड साइज होता है, एक श्री सीटर है और दो सिंगलवाले।

वह बोला, 'ऐसे नहीं पता चलेगा, फोन में कोई फोटो है तो दिखा दो।'

मैं फोन देखने लगा तो मुझे ड्राइंग रूम का पूरा फोटो मिल गया, जिसमें सोफा साफ दिखाई दे रहा था। मैंने मोबाइल स्क्रीन की रोशनी बढ़ाकर, वह फोटो खोलकर मोबाइल उसके हाथ में पकड़ा दिया।

उसने लगभग आधा मिनट मोबाइल स्क्रीन में देखा और बोला, 'यह जो परदे आपने लगाए हैं, कम-से-कम तीन-चार साल पुराने हैं।'

मैंने कहा, 'हाँ, पाँच साल तो हमें हो गए इन परदों को देखते-देखते।'

वह बोला, 'तभी कह रहा हूँ, यह कपड़ा आजकल नहीं आता, न ही यह डिजाइन, इस कपड़े की क्वालिटी बहुत अच्छी थी।'

मैंने भी सिर हिलाकर उसकी हाँ में हाँ मिला दी।

वह बोला, 'कहाँ रहते हो?' मैंने कहा, 'माता गेट के सामने, सुरखपुर रोड।'

उसने पूछा, 'घर अपना है या किराए का?' मैंने कहा, 'किराए का।'

वह बड़ी बेतकल्लुफी से बोला, 'किराए के घर में क्या करोगे सोफा कवर चढ़ाकर।'

उसने नजर फिर मोबाइल स्क्रीन में गढ़ा दी और बोला, 'ये जो

दरवाजे हैं न, ये शीशम की लकड़ी के हैं।'

मैंने कहा 'हाँ', अब मुझे भी उसकी बातों में आनंद सा आने लगा। मैंने कहा, 'शीशम के हैं, तभी हर बार बारिश के सीजन में आधा इंच बढ़ जाते हैं, फिर बंद भी नहीं होते।'

उसने एकदम अपनी शादी में मिले हुए सोफे का जिक्र छोड़ दिया, जो शीशम की लकड़ी से बना था। वह बोला, 'मेरे बच्चे मुझे कहने लगे, पापा, इस सोफे को किसी को दे दो, मैंने उस पर थोड़े पैसे लगाकर पॉलिश वगैरह करवाकर ऐसा कर दिया, अब बच्चे बोलते हैं, इसे किसी को नहीं देंगे।'

पत्नी ने सोचा, टाइम तो खोटी हो ही रहा है, क्यों न वह भी चर्चा में कुछ अपना हिस्सा डाले, उसने कहा, 'हाँ जी, आजकल फिर से पुरानी चीजें फैशन में आ गई हैं, लोग इन्हें खरीद-खरीदकर घरों में सजा रहे हैं।'

अब वह फिर मोबाइल स्क्रीन में देखने लगा। मैंने सोचा, अब तो उस फोटो में सिर्फ सोफे बचे हैं, परदे इसने देख लिए, दरवाजे इसने देख लिए, अब शायद सोफे का साइज देखकर कवर के बारे में बात करेगा।

वह बोला (ध्यान स्क्रीन में ही), 'यहाँ क्या करते हो?'

मैंने कहा, 'कॉलेज में पढ़ाता हूँ', उसने पूछा, 'नेहरू में', मैंने कहा, 'नहीं, प्रारंभ में।'

वह बोला, 'हाँ, वह भी तो नेहरू के सामने ही है।'

मैं चुप।

अब उसने पूछा, 'आपकी पत्नी भी जॉब में है?', मैंने कहा, 'हाँ'

वह बोला, 'मेरी बेटी ने भी इस साल बी.एस-सी. नर्सिंग की है, अभी हैदराबाद में कोई साइकेटरिस्ट के कोर्स के लिए अप्लाई किया था, वहाँ हुआ नहीं, आजकल पैसे और सिफारिश का भी तो खेल है, १७वाँ रैंक था बेटी का, चार सीट ही थीं जर्नल की। एडमिशन हुआ नहीं तो रोने लगी, मैंने कहा, रोना किसलिए, क्या पता तुम्हारी किस्मत में कुछ और भी अच्छी जगह जाना लिखा हो।'

इस पर पत्नी बोली, 'साइकेटरिस्ट बननेवाले को तो रोना नहीं चाहिए।'

वह मेरी पत्नी से नजर न मिला (नजर चुराता हुआ) मुझे मुखातिब हुआ, 'साइकेटरिस्ट का तो देखो आजकल यह है कि ज्यादातर इनके पास पुरुष जाते हैं, जो अपनी घरवालों से बहुत परेशान हैं।'

उसने यह बात पूरी गंभीरता से रखी और केवल यहीं नहीं रुका, अपनी बात को और पुख्ता करने के लिए उसने एक दृष्टांत भी पेश किया, वह बोला, 'एक आदमी ने अपनी घरवाली से तौलिया माँग ली, घरवाली ने आगे से सामान की एक लंबी लिस्ट (हाथ से बताते हुए) उसे थमा दी। अब वह आदमी सोच रहा है कि मैंने तौलिया माँगकर गलती कर दी या शादी करके।'

इतने में मेरी पत्नी खाली हाथ दुकान से बाहर आ गई और हम घर की तरफ चल पड़े। चलते-चलते मेरे दिमाग में उस आखरी व्यक्ति की टिप्पणी कौंध गई, 'घर में भी नहीं घुस सकते' और मेरे मानसिक पटल पर एक तसवीर उभरी, जिसमें अपने घर के गेट के बाहर राहुल गांधी चारपाई पर बिस्तर बिछा रहे थे और उनके बगल में सोनिया गांधी मच्छरदानी लिये खड़ी थीं।

अब वह हल्का मुसकराया तो मैंने भी झिझकते हुए (क्योंकि पत्नी साथ थी), उसके सुर में सुर मिला दिए।

अब उसने फिर मोबाइल स्क्रीन की तरफ ध्यान से देखकर कहा, 'देखो सर, इस साइज का कवर तो आपको बना बनाया नहीं मिलेगा, मेरी मानो तो किसी टेलर को साइज बताकर आप इसे बनवा लो।'

मेरा फोन अब भी उसके हाथ में था, जिससे उसके हाथ से छीनना मुझे अच्छा नहीं लग रहा था, फिर भी मैंने बेशर्मी से उससे मोबाइल माँग ही लिया और हम वापस दुकान की सीढ़ियाँ उतर गए।

उसने फिर मुझे पीछे से आवाज दी, मैं रुक गया और उसकी बात सुनने के लिए थोड़ा पास गया तो वह पूरी गंभीरता से बोला, 'भाई साहब, मेरी मानो तो घर में कोई पुरानी बैडशीट पड़ी हो तो उससे ढक दिया करो।'

मैं उसके मशविरे से बहुत प्रसन्न हुआ और उसका धन्यवाद किया। वापिस आते हुए पत्नी एक दुपट्टे की छोटी सी दुकान में घुस गई, मैं बाहर खड़ा हो गया। साथ वाली दुकान पर दुकानदार सहित चार लोग राजनीति पर चर्चा कर रहे थे। एक बोला, 'सोनिया गांधी से पूछताछ चल रही है।' दूसरा बोला, 'सब चिल्ला रहे हैं, ममता बनर्जी, केजरीवाल कि यह ईडी का गलत इस्तेमाल हो रहा है।' पहलेवाला फिर बोला, 'चिल्लाएँ भी क्यों न, इनको पता है, धीरे-धीरे सबका नंबर आएगा।'

इस पर दुकानदार सीट पर थोड़ा आगे आते हुए बोला, 'और किसी का भी आ जाए भाई साहब, यह केजरीवाल नहीं फँस सकता, चाहे मेरे से लिखवा लो, यह बहुत तेज खोपड़ी है।'

एक जो अब तक चुप था, वह बोला, 'तुम पूछताछ की बात कर रहे हो भाई साहब, आज तो सोनिया गांधी और राहुल के घर सील कर दिए, घर में भी नहीं घुस सकते।'

इतने में मेरी पत्नी खाली हाथ दुकान से बाहर आ गई और हम घर की तरफ चल पड़े। चलते-चलते मेरे दिमाग में उस आखरी व्यक्ति की टिप्पणी कौंध गई, 'घर में भी नहीं घुस सकते' और मेरे मानसिक पटल पर एक तसवीर उभरी, जिसमें अपने घर के गेट के बाहर राहुल गांधी चारपाई पर बिस्तर बिछा रहे थे और उनके बगल में सोनिया गांधी मच्छरदानी लिये खड़ी थीं।

मैं अंदर-ही-अंदर मुसकराया कि बिना एक दमड़ी खर्च किए हम एक मनोरंजन से भरपूर यात्रा पूरी कर घर की तरफ प्रस्थान कर रहे हैं।

सा
अ

४८०/४ सुर्खपुर रोड
सामने माता गेट
झज्जर, हरियाणा-१२४१०३
दूरभाष : ९८१२४०११९७

कविताएँ

● मधु मोहिनी उपाध्याय

एक प्रेयसी

एक दिन हमारे
मकान मालिक
बड़े रोश में आए,
सप्तम स्वर में चिल्लाए,
कि या तो मकान
खाली कीजिए,
या पचास हजार
किराया दीजिए,
किराया सुनते ही
हम चकराए,
हमने अपने
कवि सम्मेलनों
के चित्र दिखाए,
चित्रों को देखते
ही बोले—
अच्छा तो आप
कविता भी लिखती हैं ?
दिखने में तो ठीक
ही दिखती हैं ?
फिर ये कविता
का कीड़ा
आपको दिन-रात
क्यों काट रहा है ?
हमने कहा यहाँ
बड़े बड़े कीड़े
देश को काट रहे हैं,
देश की सुनहरी किताब,
दीमक की तरह
चाट रहे हैं
और हम कविता
भी न कहें ?
गूँगे बहरों की तरह रहें ?

आप कविता को
कीड़ा बता रहे हैं ?
किराए के साथ-साथ
आप हमारी पीड़ा
भी बढ़ा रहे हैं।
अरे! कविता के
कीड़े का जन्म तो
समाज की पीड़ा
से होता है,
और ये पीड़ा
आप जैसे
सेठों के
पेटों में नहीं उठती।
कविता तो केवल
दिलवालों
को ही छू पाती है,
और आपके विचारों से तो
ईट गारे और
पत्थर की ही
बू आती है।
लगता है आपके
शरीर का,
सबसे महत्वपूर्ण भाग,
कहीं भाग गया है,
और अभिमान का
कुंभकरण
सोते से जाग गया है।
अरे! कविता के
कीड़े में तो
वो शक्ति है जो
समाज के
बड़े से बड़े सर्प
को भी,

डूँस जाती है
और मन को छू
जानेवाली
कविता तो
प्रेयसी की भाँति,
सदा-सदा के लिए
मन में बस जाती है ॥



लिपिस्टिक (होंठों की लाली)

एक वक्त था कि
होंठों की लाली का
बेहद शौक था।
लिपिस्टिक के अभाव में,
बदसूरती का खौफ था ॥
साड़ी के शेड से,
लिपिस्टिक का शेड,
मिलाते थे।
हरे नीले पीले रंगों
की साड़ी में कंट्रास्ट
लगाते थे।
डे में लाइट,
लाइट में डार्क,
लगाते थे।
मैचिंग आयी शैडो से,

चेहरा सजाते थे।
कंट्रास्ट आईशैडो से
चेहरा सजाते थे।
रेड साड़ी पर,
ऑरेंज नहीं जमती थी।
ऑरेंज पर मजेंटा,
ब्यूटी कम करती थी।
इन्ही रंगों के मैच की,
लिप्स्टिक्स की कतार थी।
जीवन में बनावटी,
रंगों की भरमार थी।
कलम ने जीवन को,
एक नया मोड़ दिया।
होंठों की लाली को,
दुखियों की बेहाली से,
जोड़ दिया।
धिक्कारते हुए कहा—
कि रँगना है ?
तो सबको
एक रंग में रंगो।
तुम्हारे होंठों की लाली से,
क्या उनके जीवन में,
खुशहाली आएगी ?
जो लाल होने से पहले ही
पीले पड़ गए हैं ?
भूख गरीबी और बेकारी से,

जिनके जीवन के,
तमाम वसंत, पतझड़ में
बदल गए हैं।
अरे रँगना है ?
तो उन चेहरों को रंगो
जो बदरंग हो गए हैं।
जिनके जीवन के विविध रंग,
स्याह में बदल गए हैं।
यदि नहीं ऐसी लिपिस्टिक,
तो लाल स्याही से लिखो,
एक संदेश राष्ट्र के
उन कर्णधारों के नाम,
जो सबको
एक ही रंग में रँगता हो।
जहाँ कंट्रास्ट न हो मैच हो,
समता हो।
तब ही देश में
खुशहाली होगी।
सभी के होंठों पर,
वास्तविक लाली होगी।

सा
अ

जे.पी. टाउनशिप,
जे.पी. कॉस्मॉस
के.एम. ३६/२०७ सेक्टर-१३४
नोएडा-२०१३०४

छत्तीसगढ़ी लोक-नाट्य

• बीरू लाल बरगाह

“लो

क नगरों और ग्रामों में फैली हुई वह समूची जनता है, जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार केवल पोथियाँ ही नहीं हैं, वरन् विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जो वस्तुएँ आवश्यक होती हैं, उनको उत्पन्न करते हैं।”

— आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

लोक-नाट्य की परंपरा भारत में प्राचीनकाल से चली आ रही है। भरतमुनि ने (ई.पू. की तीसरी शताब्दी) अपने ग्रंथ ‘नाट्यशास्त्र’ में इस विषय का विस्तृत वर्णन किया है। लोक-नाट्य जनसाधारण में प्रचलित परंपरागत और बिना परदे के नाटक, जिनमें संकेतों और गीतों की प्रधानता होती है और संवाद अधिकतर पद्य में होता है, जैसे—रामलीला, नौटंकी आदि। लोक-नाट्य में प्रेम विरह एवं सहयोग के हृदयस्पर्शी प्रसंगों के अभिनय के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं धार्मिक चेतना का समावेश होता है। लोक-नाट्य जनमानस की संपूर्ण भावनाओं को अभिनय एवं रंगमंच के माध्यम से व्यक्त करने में सक्षम है।

छत्तीसगढ़ी लोक-नाट्य ग्रामीण अंचल में प्रचलित वह लोकविधा है, जिसमें सरल, सहज, आंचलिक गीतों के कारण लोकगीतों का सहज अभिनय के कारण लोक-नाट्य का, लोकहित के तथ्यों से सराबोर कथाओं के कारण लोक कथाओं का और उपदेशात्मक लोकोक्ति, रोचक जनऊला के कारण प्रकीर्ण साहित्य का आनंद प्राप्त होता है।

डॉ. विनय पाठक के अनुसार, “छत्तीसगढ़ी लोक-नाट्य में समग्र लोक कलाओं का ही नहीं अपितु लोक साहित्य की संपूर्ण विधाओं का भी समन्वय है, जिसके कारण यह लोककला और लोकसाहित्य की

सर्वाधिक लोकप्रिय विधा के रूप में जन-मन में प्रतिष्ठित है। यही कारण है कि इसमें लोक-नाट्य कलाकार परंपरा को संरक्षित रखते हैं वहीं दूसरी ओर युगानुरूप विकास का पथ संधारण करते हैं। इस तरह परंपरा को अक्षुण्ण रखते हुए विकास का मार्ग प्रशस्त करते हैं।”

छत्तीसगढ़ी लोक-नाट्य ग्रामीण अंचलों में मंचित रोचक नाट्य है। इस लोक-नाट्य का रंगमंच खुले स्थान पर बनाया जाता है। प्रायः गाँव के मध्य स्थित चौराहे अथवा देवालय के चबूतरे को मंच बना दिया जाता है। जो चारों तरफ से खुला हुआ होता है। चारों कोणों से चार खंभे जमीन से कुछ ऊपर गाड़ दिए जाते हैं। खुला रंगमंच बनाए जाने के पीछे उद्देश्य सिर्फ इतना है कि अधिक-से-अधिक दर्शक बैठ सकें और दर्शकों को देखने में किसी प्रकार की बाधा न हो। इस सुंदर व आकर्षक रंगमंच पर लोक-नाट्य के पात्र अपने सहज अभिनय का प्रदर्शन कर जनमानस को सम्मोहित करते हैं। ये पात्र पारंपरिक पोशाक में आते हैं, पात्रों को पहचानने में कोई कठिनाई नहीं होती। मुख पर पाउडर की मोटी परत, आँखों में काजल की मोटी लकीर और होंठों पर लाली, शृंगार के साथ पात्र मंच पर धीरे से प्रवेश करते हैं तो नाट्य स्थल तालियों की करतल ध्वनि से गूँज उठता है। उल्लेखनीय है कि लोक-नाट्य में सिर्फ पुरुष

पात्र ही होते हैं। स्त्री पात्र की भूमिका भी स्त्री की वेशभूषा धारण कर पुरुष ही निभाते हैं। लोक-नाट्य में एक हास्य कलाकार अवश्य होता है, जिसे विदूषक कहते हैं। इसकी भूमिका को सभी लोग पसंद करते हैं। अपने अभिनय, संवाद द्वारा दर्शकों को हँसी से लोट-पोट कर देते हैं।

लोक-नाट्य का संगीत पक्ष भी बड़ा मजबूत होता है। वाद्य यंत्र—तबला, झाँझरी, मंजीरा, चिकारा, हारमोनियम इत्यादि के साथ संगीत बेजोड़ होता है।



भाषा सहज, सरल, छत्तीसगढ़ी ही होती है। सामान्य रूप से लोक-नाट्य के माध्यम से प्राचीन ग्रंथों को सामाजिक रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है। नाट्य ऐतिहासिक, सामाजिक, पौराणिक, सभी तरह के होते हैं—१. रहस, २. नाचा, ३. गम्मत, ४. पंडवानी, ५. भतरा नाट, ६. दहिकांदो, ७. माओपारा, ८. खंब स्वाँग।

रहस : रहस शास्त्रों में वर्णित 'रासलीला' है, जो छत्तीसगढ़ में उच्चारण परिवर्तन के कारण 'रहस' बन गया। रहस ब्रज में चलकर छत्तीसगढ़ आई हुई परंपरा है। रहस वर्तमान में छत्तीसगढ़ की संस्कृति में बहुप्रचलित लोक-नाट्य है, जो श्रीमद्भागवत पुराण के दशम स्कंध पर आधारित होने के कारण कृष्ण लीला पर केंद्रित है, जो न केवल मनोरंजक है अपितु भक्तिभाव से परिपूर्ण है। ग्रामीण क्षेत्रों में रहस कई रातों तक चलता है, ग्रामवासी बड़े चाव से इस आयोजन का आनंद लेते हैं। इसके लिए काफी तैयारी करनी पड़ती है। आयोजक महीने भर पहले तैयारी में लगे रहते हैं। तैयारी के तहत रासधारी को एक महीने पहले नारियल-धोती देकर निमंत्रण दिया जाता है। सगे-संबंधियों और इष्ट मित्रों को भी नेवता देकर बुलाया जाता है। बेटियों को लिवाकर लाया जाता

है। दक्ष मूर्तिकार मिट्टी, पैरा से भगवान् गणेश, रिद्धि-सिद्धि, राधा-कृष्ण, ब्रह्मा, विष्णु, महेश और पांडवों की मूर्तियाँ बनाता है, जिनकी आँखें रहस के आरंभ होनेवाले दिन में ही बनाई जाती हैं, इसे 'जीवपारना' कहते हैं, तदनुसार यह मान लिया जाता है कि अब ये मूर्तियाँ सजीव हो गई हैं, निर्धारित तिथि के बाद इनका विसर्जन होता है।

'रहस' का अर्थ रास या रासलीला है। इसमें संगीत नृत्य प्रधान श्रीकृष्ण के विविध लीलाओं का अभिनय किया जाता है। इसे एक पखवाड़े में संपन्न किया जाता है। श्रीमद्भागवत पुराण के आधार पर श्री रेवारांम द्वारा रहस की पांडुलिपियाँ बनाई गई थीं और इसी आधार पर रहस का प्रदर्शन होता है। इसके लिए संपूर्ण गाँव को ब्रजमंडल मानकर इसकी नाट्य सज्जा की जाती है। चितेर जाति के कलाकारों द्वारा गाँव के विभिन्न स्थानों पर मिट्टी की विशाल मूर्तियाँ स्थापित की जाती हैं, जिनमें भीम, कंस, अर्जुन, कृष्ण आदि देवी-देवताओं की मूर्तियाँ होती हैं। रहस का आयोजन बेड़ा (रंगमंच) में किया जाता है। रहस प्रारंभ करने के पूर्व इसका प्रतीक थुन्ह (खंब) गाड़ा जाता है। रहस का आयोजन रात्रिकाल में किया जाता है। रहस का सूत्रधार रासधारी कहलाता है, जो कथा वाचन, व्याख्या, संगीत निर्देशन आदि करता है। रहस के प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय व्यक्ति हैं—कौशल सिंह, विसेसर सिंह, केसरी सिंह, बिलासपुर के मँझला महाराज और बुली ग्राम के रेवारांम कुलीवाला।

लोक-नाट्य में एक पंडित (रासधारी) होता है, जो कृष्ण लीलाओं

को गायन शैली में प्रस्तुत करते हुए व्याख्या करता है। रहस में पात्रों का अभिनय, संगीत पक्ष सब बड़ा सबल होता है। संपूर्ण वाद्य यंत्रों के साथ रहस के संगीतकार रातभर खड़े-खड़े संगत देते रहते हैं। "खड़े साज का व्यवहार लोक-नाट्य रहस की प्रमुख विशेषता है। सुगम संगीत, शास्त्रीय संगीत के साथ लोकसंगीत की छटा जब गीतकार बिखेरते हैं तो पहुँना (अतिथि) के साथ प्रकृति भी झूम उठती है।" हिंदी छत्तीसगढ़ी बोली को ब्रजभाषा का पुट देकर जब संवाद करते हैं तो ब्रजभूमि में होने का अहसास होने लगता है। बीच-बीच में छत्तीसगढ़ी अर्थ बतानेवाला अनुवादक होता है, जिसे 'गुटकहा' कहते हैं। लोकशैली के गायन में नृत्य करनेवाले पात्र को 'नचकहार' कहते हैं। विदूषक हँसाने का कार्य करता है, साथ ही सामाजिक विसंगतियों और विद्रूपताओं की ओर भी

समाज का ध्यान आकर्षित करता है, उनके समाधान का संकेत भी देता है। रहस के लोक कलाकार भी नैतिक मूल्यों और मानवता को बनाए रखने का संदेश देते हैं। रहस के मुख्य पात्र कृष्ण हैं, उनके पीतांबर, मोर पंखों का मुकुट और बाँसुरी दर्शकों का मन मोह लेते हैं। राधा उनकी प्रेमिका है, गोपियाँ ललिता, बिशाखा आदि हैं। इनका श्रृंगार एवं



अभिनय बहुत सुंदर होता है।

नाचा : नाचा भी रहस के समान छत्तीसगढ़ का प्रसिद्ध लोक-नाट्य है। आरंभ में नाचा छत्तीसगढ़ में निम्न स्तरीय मनोरंजन की विधा के रूप में प्रचलित रही है, किंतु वर्तमान समय में संपूर्ण छत्तीसगढ़ में लगभग आठ सौ नाचा पार्टियाँ हैं। नाचा छत्तीसगढ़ की एकमात्र ऐसी लोकविधा है, जो पहले ग्रामीण मंचों पर मशाल की रोशनी में १००-५० ग्राम्यावासियों का मनोरंजन करती थी और आज भव्य मंचों पर बिजली की रोशनी में पचास हजार दर्शकों को रातभर बिठाए रखने का कीर्तिमान बना रही है। डॉ. परदेशीराम वर्मा के अनुसार, "कल्पना का लोक मंचीय विस्तार है नाचा। जो कलाकार जिस सीमा पर जा सके, उसे नाचा ने वहाँ तक पहुँचने में पूरा साथ दिया है।"

नाचा पार्टी के सभी कलाकार पुरुष होते हैं। यह लोक कलाकारों की स्वायत्त विधा है, इसमें कथा चयन की स्वतंत्रता और अभिनय प्रस्तुति की आजादी कलाकारों को होती है। नाचा अपने आप में एक संपूर्ण नाट्य विधा है, प्रहसन और व्यंग्य इसके मुख्य स्वर हैं। नाचा का आयोजन किसी भी अवसर किया जा सकता है। कुछ नाट्य मंडलियों में देवार जाति की महिलाओं की भागीदारी होती है। नाचा में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक सभी स्तर पर लोकमानस जिस बात को स्वीकार नहीं कर पाता, उसका मखौल वह नाचा द्वारा करता है। कुरीतियों, विषमताओं, विद्रूपताओं और आडंबरों पर तीखी चोट नाचा द्वारा की जाती है। नाचा

में परी व जोक्कड़ स्थायी मुख्य पात्र है। परी एक सामान्य, भोली-भाली नेक महिला होती है, जबकि जोक्कड़ विदूषक होता है। दोनों के संवाद दर्शकों को हँसी से लोट-पोट कर देते हैं। हबीब तनवीर ने मृच्छकटिकम् से लेकर शेक्सपीयर तथा ब्रेख्त के नाटकों का मंचन नाचा शैली में करके इस नाट्य-शैली को अंतरराष्ट्रीय ख्याति दिलाई है। पद्मश्री गोविंदराम निर्मलकर नाचा के ख्यातिलब्ध कलाकार हैं।

कलाकार आज भी नाचा को सौंदर्यमूलक परिष्कार से माँज रहे हैं। पहले से ज्यादा लोक धुनें, जन-मन को चमत्कृत कर देनेवाली नृत्य की विभिन्न मुद्राएँ और पात्रों की आकर्षक वेशभूषा से नाचा में विकास की असीमित संभावनाएँ हैं।

गम्मत : गम्मत नाचा का ही भाग है। यह लोक-नाट्य लोक-चेतना के जागरण का एक कलात्मक उपक्रम है। भोंसला शासन के काल में गम्मत लोक-नाट्य सर्वाधिक लोकप्रिय था। नाचा की तरह गम्मत में भी विचित्र वेशभूषाधारी पात्र जोक्कड़ होता है। यह पात्र ऊटपटाँग हरकतों से बच्चे, बूढ़ों के मन को चमत्कृत करता है, उन्हें हँसाता है। सामान्यतः गम्मत दो पात्रों के संवाद से प्रारंभ होता है। इन पात्रों को 'गम्मतिहा' कहा जाता है। गम्मतिहा का चरित्र बौद्धिक और शालीन होता है और दूसरा ठीक विपरीत। ये पात्र सामाजिक बुराई, कुरीति और व्यवस्था पर संवादों के माध्यम से कटाक्ष करते हैं। बाबू रेवाराम ने गुटके पर आधारित रतनपुरिहा गम्मत को मानक निर्दिष्ट कर लोक कलाकारों से जब इसका मंचन कराया तो तमाशा तत्त्व को गौण और भक्ति को प्रमुख तत्त्व के रूप में स्थापित कराया। इसके पश्चात् श्रृंगार में शालीनता और प्रेम में अलौकिकता का समावेश हुआ और गम्मत का उच्छृंगल रूप मर्यादित हुआ। लोक-नाट्य का यह परिनिष्ठित स्वरूप ही रतनपुरिहा गम्मत है।

गम्मत का प्रदर्शन खुले मंच में होता है। पात्रों की संख्या २-४ या उससे अधिक हो सकती है। मंच के एक ओर गायक-वादक मंडली होती है जो अपने वाद्ययंत्रों के ध्वनि से गीतों को रसमय बनाते हैं।

पंडवानी : महाभारत के पांडवों की कथा का छत्तीसगढ़ी लोक रूप पंडवानी है। पंडवानी का मूल आधार परधान और देवारों की पंडवानी गायकी, महाभारत की कथा और सबल सिंह चौहान की दोहा-चौपाई शैली में महाभारत है। इसमें मुख्य नायक भीम हैं। पंडवानी के लिए विशेष अवसर, ऋतु या अनुष्ठान की आवश्यकता नहीं होती। पंडवानी में एक मुख्य गायक, एक हुंकार भरनेवाला 'रागी' तथा वाद्य पर संगत करनेवाले लोग होते हैं, जो आम तौर पर तबला, ढोलक, हारमोनियम और मंजीरा से संगत करते हैं। मुख्य गायक हाथ, चेहरे, आँख की भंगिमाओं द्वारा नाटकीय ढंग से पंडवानी की कथा का गायन करता है। तंबूरा एवं करताल बजाता है। पंडवानी के कलाकारों में पद्मभूषण तीजनबाई एवं झाडूराम देवांगन हैं, दानी परधान, गोंगिया परधान, रामजी देवार, पूनाराम निषाद, ऋतु वर्मा आदि पंडवानी के अन्य कलाकार हैं।

भतरा नाट : यह बस्तर के भतरा जनजाति द्वारा किया जानेवाला नृत्य नाट्य है। इसे मुख्यतः पुरुष करते हैं, इसका मंचन उत्सवों, जात्रा या मंडई के अवसर पर होता है। कुछ लोग इसे 'उड़िया नाट' भी कहते हैं,

क्योंकि यह उड़सी से आया है। इसमें भरतमुनि के नाट्यशास्त्रों की अनेक बातें विद्यमान हैं, यथा—कलाकारों का प्रवेश, प्रस्तावना, मंचन के पूर्ण होने तक विदूषक टेढ़ी लकड़ी लेकर उपस्थित होना; गणेश, सरस्वती की आराधना आदि। अधिकांश नाटक रामायण, महाभारत एवं अन्य पौराणिक कथाओं पर आधारित होते हैं। सभी नाट्यों में भागवत धर्म की अच्छाइयों व उच्च नैतिक गुणों का संदेश लोक-जीवन में पहुँचाया जाता है।

दहिकांदो : छत्तीसगढ़ के मैदानी क्षेत्र के आदिवासी कृष्ण-जन्माष्टमी के अवसर पर दहिकांदो नामक नृत्य-नाट्य का प्रदर्शन करते हैं। यह कर्मा और रास का मिला-जुला रूप है, इसमें कदंब के नीचे राधा-कृष्ण की मूर्ति स्थापित कर इसके चारों ओर नृत्य करते हुए कृष्ण लीला का अभिनय करते हैं। कृष्ण का सखा 'मनसुखा' इसमें विदूषक होता है, जो दही से भरा मटका फोड़ता है।

माओपाटा : माओपाटा बस्तर की मुड़िया जनजाति में प्रचलित प्रसिद्ध लोकनाट्य है। माओपाटा बाइसन (गौर) के सामूहिक आखेट पर आधारित नृत्य नाटिका है, जिसमें गौर का शिकार व उसमें आनेवाली बाधाओं का मंचन किया जाता है। संपूर्ण नृत्य नाट्य में बाइसन की आक्रामक मुद्रा का शानदार अभिनय किया जाता है। इसमें शिकारी रूप एवं सिरहा का अभिनय अत्यंत नाटकीय व प्रभावशाली होता है। नाट्य में शिकार उपरांत गौर को गाँव लाते दिखाया जाता है तथा नृत्यगीत का आयोजन होता है। देवी-देवताओं को आभार प्रकट किया जाता है, अंत में सिरहा देवता को मदिरा अर्पित कर प्रसाद रूप में सभी आदिवासी मदिरापान करते और आनंद मनाते हैं। शिकार पर भेजने व वापसी पर उत्सव मनाने के दौरान युवतियों की भागीदारी नाट्य में होती है।

खंब स्वाँग : खंब स्वाँग का अर्थ खंब के आसपास किया जानेवाला नृत्य है। खंब का आशय मेघनाद खंब से है। खंब स्वाँग, संगीत, अभिनय और मंचीय दृष्टि से कोरकू आदिवासियों का संपूर्ण नाट्य है। किंवदंती है कि रावणपुत्र मेघनाथ ने कोरकूओं को एक बार बड़ी विपत्ति से बचाया था, उसी की स्मृति में इसका आयोजन किया जाता है। क्वार नवरात्रि से देव प्रबोधनी एकादशी तक इसी खंब के आसपास 'कोरकू' प्रत्येक रात नए-नए स्वाँग खेलते हैं।

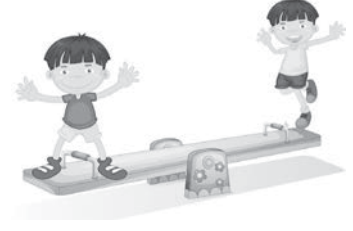
उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि लोकनाट्यों का मूल उद्देश्य मनोरंजन के साथ समाज की अच्छाई और बुराई की नब्ज पर हाथ रखना है। लोकानुरंजन लोक-नाट्य की पहली शर्त है, लेकिन हास्य के माध्यम से उनमें तिलमिला देनेवाली व्यंग्यात्मकता भी होती है। लोकनाट्य के विषय जीवन के किसी भी आयाम से संबद्ध होते हैं। लोकनाट्यों की विषयवस्तु या कथानक को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता, क्योंकि लोकनाट्य की सामग्री लिखित नहीं होती, 'लोकनाट्य' लिखे नहीं बल्कि रचे जाते हैं।

(सा.अ.)

सहायक प्राध्यापक हिंदी,
राजीव गांधी शास. महावि. सिमगा,
जिला बलौदाबाजार-भाटापारा (छ.ग.)



बाल-कविता



इतिहास बन गए...

• सुरेंद्र दत्त सेमल्टी

आसमान में निकला चाँद

आसमान में निकला चाँद,
दिख रहा मनमोहक-बाँद!
सोलह कलाएँ लेकर आया,
सबका मन देखकर हर्षाया!
संग में लाया असंख्य तारे,
वे भी दिख रहे सुंदर सारे!
आज तिथि है पूर्णमासी,
चाँदनी बिछी अच्छी-खासी!
एकटक चकोर रहा निहार,
बुला रहा उसे संग हर बार।
मिलना चाहता उससे सागर,
भरना चाहता ज्ञान की गागर!
काया उसकी धवल दुग्ध सी,
है साथ में गुण शीतल भी।
उतरो धरा पर कहते बच्चे,
जो होते निर्मल-सीधे-सच्चे।
जो संग हमारे नहीं आओगे,
कृष्ण पक्ष में पछताओगे!
फिर पढ़-लिख पंख लगाकर,
आएँगे हम सभी तुम्हारे घर।
बच्चों की पूरी हुई न बात,
तबतक खुल चुकी थी रात।
दिवाकर देव की डर के मारे,
चट नौ दो ग्यारह हुए सारे!
गाँवों का बदलता परिवेश
देखा न कभी था ऐसा मंजर,
सिंचित खेत पड़े सब बंजर!
जहाँ उगते थे अन्न अनेक,
दिल टूट रहा है उनको देख!
लहलहाती थी फसलें हर बार,

भरे रहते थे अन्नों से भंडार!
मानव-पशु-पक्षी थे पलते,
चूल्हे सब दिनभर थे जलते।
पड़ी पलायन की ऐसी मार,
छोड़ चले अपना घर-द्वार!
खेत बंजर घर हुए खँडहर,
पगडंडी-सड़क सब जर्जर!
चक्की-ओखल औ खलिहान,
गाँवा चुके सब अपनी जान!
चबूतरों के बरगद औ पीपल,
रोग-शोक से गए टूट-ढल!
पनघट कोई नजर न आते,
और न कोई वहाँ हैं जाते!
कर रहे गाँव शहरों की नकल,
बदलती जा रही उनकी शकल!
भले ही घरों की कच्ची दीवार,
रिश्तों से बँधे होते थे परिवार।
सिर्फ सुअर-लंगूर और बंदर,
दिखते खेत-गाँव के अंदर!
रहते हैं दो-चार वृद्ध गाँव में,
शक्ति न जिनके हाथ-पाँव में!
करते हैं बीते दिनों की चर्चा,
रहता न पास में उनका खर्चा!
उनकी बूढ़ी आँखें तरस रही हैं,
बिना बरसात के बरस रही हैं!
ऋतु फलों के जो थे बाग,
ओ भी गए हैं मानो भाग!
संस्कृति भी बच नहीं पाई,
बढ़ रही नित दो दिलों में खाई!
इतिहास बन गए गाँव हमारे,
बदले रंग में अब दिखते सारे!



सुपरिचित लेखक। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित तथा दूरदर्शन, आकाशवाणी के अनेक केंद्रों से अनवरत प्रसारण। 'शैलेश मटियानी राज्य शैक्षिक पुरस्कार' सहित देश-विदेश की अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

गाय-भैंस-बैल-बकरी-घोड़े,
ये पालने सब लोगों ने छोड़े!
ग्राम देवता झाड़ियों में बंद,
करते जानवर विचरण स्वच्छंद!
ऐसा न करो लौटकर के आवो,
गाँवों को मिल फिर से बसाओ।
मातृभूमि पुत्रों को रही पुकार,
सबका होगा गाँवों में सत्कार।
माता न होती कुमाता कभी,
है टिका धरती में धर्म अभी।
दादी की अलमारी
देखो तो दादी की अलमारी,
चीजें रखी हैं बहुत सारी!
रंग-बिरंगे कपड़े नए-पुराने,
सामान से भरे हैं सब खाने।
सोने-चाँदी के गहने अनेक,
आश्चर्य होता है उनको देख!
जवानी में जो दादी ने पहने,
रखे सुरक्षित ओ सब गहने।
गठड़ियाँ कई हैं छोटी-बड़ी,
बंद पड़ी एक टेबल घड़ी।
भड्डू-डेगची-लोटा-थाली,
गिलास-कटोरी हैं सब काली।
लोहे की बड़ी सी एक कड़ाही,
दादी करती हैं बहुत बड़ाई!

गरीबी में दिया था इसने साथ,
काम आती थी यह दिन-रात!
कॉपी-किताबें फटी पुरानी,
सँभाली थी जैसे रखती नानी।
बटुआ एक फटा था जादा,
सिक्कों से भरा हुआ था आधा।
एक-दो पैसे कोई थे आने,
चलते थे जो किसी जमाने।
दिखे नए-पुराने कुछ नोट,
दादाजी का एक पुराना कोट।
जंग लगा चाकू दरौंती-कुदाल,
विश्राम कर रहे हुए कई साल।
लगाकर रखती हरपल ताला,
चाबी गले सजती ज्यों माला।
पहिए मिट्टी से लिप-लिपकर,
धँस चुके थे जमीन के अंदर।
समझती दादी प्राणों से प्यारी,
अपनी लकड़ी की अलमारी।

(सा अ)

मोथरोवाला, फाइरिंग रेंज
(सैनिक कॉलोनी)
लेन नंबर-३, फेज-२
निकट महालक्ष्मी हार्डवेयर
देहरादून-२४८११५ (उत्तराखंड)
दूरभाष : ९६९०४५०६५९

वर्ग पहेली (२०१)

अगस्त २००५ अंक से हमने 'वर्ग पहेली' प्रारंभ की, जिसे ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक श्री विजय खंडूरी तैयार कर रहे थे; उनके देहावसान के उपरांत अब श्री ब्रह्मानंद खिच्ची इसे तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ जनवरी, २०२३ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड़ॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें तीन सौ रूपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते मार्च २०२३ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर 'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ के पते पर भेजें।

बाएँ से दाएँ—

१. चालाक या चुस्त व्यक्ति (३,३)
६. विवाहिता अंग्रेज या यूरोपिय स्त्री (२)
७. दूल्हा, वर (२)
८. मनबहलाव, ताजगी, सैरसपाटा (४)
११. कहीं जाने की लिखित आज्ञा या अनुमति (२)
१२. कारीगरों का औजार (२)
१४. दस का मान या भाव (३)
१६. नहीं, बगैर, बिना (२)
१७. समूह राशि (२)
१८. कपड़े आदि के फटने का शब्द, पासे का खेल (२)
१९. तुरंत ब्याही हुई गाय का दूध, पेयूष (२)
२०. लंबी यात्रा, गंतव्य (३)
२१. घर, महान (४)
२३. बहुत मोटी रोटी, हाथियों का रातिब (२)
२४. अधपका, प्रसन्न सब्ज (२)
२७. पाप-पुण्य का फल, खाद्य-सामग्री (२)
२८. अनुचित और क्रूर विधान (मुहा.) (२,३)
३०. माननीय (२)
३१. होश में आना, ज्ञान, अनुभूति (३)
३२. खाए हुए अन्न का प्रथम परिणाम, स्वाद (२)

ऊपर से नीचे—

२. ओठ, होंठ (२)
३. घूम-फिरकर आते-जाते रहना (४)
४. लगा हुआ, लीन (२)
५. केसर (४)
६. मूत्र, बकरा, वर्षा, बड़ा (२)
९. भालू (२)
१०. किसी को उसके अनुचित कार्य का दंड देना (मुहा.) (२,३)
१३. अशुभपूर्ण (नेत्र) (३)
१५. थकावट, असफलता, माला (२)
१३. समूचा, सारा (३)
१७. ढेर लगाया हुआ (३)
१९. क्रिकेट में गुल्ली व स्टंप (३)
२१. आरोग्य, स्वस्थ (३)
१२. स्नान कराना (४)
२५. पूर्णिमा की रात (२)
२६. ईर्ष्या, जलन, क्रोध (३)
२७. खाद्य पदार्थ (२)
२८. भेड़ों के बाल काटने की कैंची (२)
२९. ज्योति प्रकाश (२)

वर्ग पहेली (२००) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (१९९) का शुद्ध हल

१	वि	श्व	२	मु	३	स्का	४	न	५	व	६	स	
	झा		७	झ	ल	का		८	च	र	९	स	
१०	प	११	स		१२	र	र	१३	क	ना		रा	
१४	न	द	१५	म		१६	ना	डी	व	१७	ल	य	
	१८	चा	र					१९	क्षे	प			
२०	चि	क	ना	२१	प	न		२३	ष	क	ना		
	चा		२८	प	ट्टी	दा	र	२६	र	२७	ना	का	
२८	न	रा	च		३०	ल	बा	दा				बं	
	३३	स	ना	थ		३३	व	र	बा	दी			

★ पुरस्कार विजेता ★

१. श्री द्वारका प्रसाद वाष्ण्य
४५ सी, झिलमिल डी.डी.ए. फ्लेट्स
दिल्ली-११००९१
२. श्री हरिश्चंद्र उनियाल
ग्राम-मल्लासीरा, पो. जयतेश्वर
जिला-अल्मोड़ा-२६३६६१ (उ.खं.)

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १९९ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री जयभगवान सैनी (हिसार), विवेक सिंह (जयपुर), रामेश्वर दयाल (जबलपुर), सुनीता शर्मा (गुरुग्राम), विजय बहादुर (कानपुर), उमेश प्रसाद (मेरठ), हरि शंकर वर्मा (नोएडा), दिवाकर द्विवेदी (गोरखपुर), विमल कुमार (हरिद्वार), माला श्रीवास्तव (ग्रेटर नोएडा), आनंद शर्मा, कुलभूषण सोनी, राधेश्याम सिंह (दिल्ली), रामेश्वर सुथार (अजमेर), ब्रजभूषण (नारनौल)।

वर्ग पहेली (२०१)

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४	६५	६६	६७	६८	६९	७०	७१	७२	७३	७४	७५	७६	७७	७८	७९	८०	८१	८२	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४	९५	९६	९७	९८	९९	१००
---	---	---	---	---	---	---	---	---	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	-----

प्रेषक का नाम :

पता :

दूरभाष :

‘साहित्य अमृत’ मेरी प्रिय पत्रिका है। इसमें रचनाओं का वैविध्य रहता है। सभी रचनाएँ बहुत रोचक होती हैं। कोई भी रचना अनावश्यक दर्शन या फिलासफी के परिणामस्वरूप बोझिल नहीं होती।

—ओम प्रकाश शर्मा ‘प्रकाश’, नई दिल्ली

‘साहित्य अमृत’ का दिसंबर अंक मिला, आप सभी सदस्यों की लगन व मेहनत का परिणाम है कि हम पाठकों को साहित्य के रसास्वादन का आनंद मिलता रहता है। प्रतिस्मृति में गरीब हृदय कहानी भावपूर्ण है। ऋता शुक्ल बहुत अच्छा लिखती हैं, उनकी संस्कृतनिष्ठ लेखन शैली बहुत प्रभावित करती है। ओडिशा कहानी ‘अनदेखा भाव’ में हम पेड़-पौधों को कितनी आत्मीयता से अपने दुःख-सुख से जोड़ लेते हैं। सुंदर चित्रण है। सेहत से जुड़े नए सुभाषित आकर्षक, ज्ञानवर्द्धक, मनोरंजक भी हैं, जैसे दौड़ने से छरहर... आदि। उत्कल मणि गोपबंधुजी के चरित्र व कार्यकुशलता के बारे में विस्तार से जानकर अच्छा लगा। बाढ़ व अकाल के संकट के समय वे प्रेरणापुरुष बन जाते थे। कविताएँ सभी अच्छी हैं, विशेष रूप से डी.एस.पी. सुश्री राजश्री सिंह की कविता ‘खाकी’ बहुत अच्छी लगी। ‘इस देश की हर पीढ़ी उनकी कर्जदार है।’ ‘वर्ग पहली’ मेरा प्रिय स्तंभ है। जून के अंक में विजेता के रूप में अपना नाम देखकर हर्षित हुई। हमारे बालगीतों को अपनी पत्रिका में स्थान देकर आपने मेरा मान बढ़ाया है।

—माला श्रीवास्तव, ग्रेटर नोएडा

‘साहित्य अमृत’ पत्रिका हमें नियमित प्राप्त हो रही है। एतदर्थ बहुत-बहुत आभार। सुरेश बाबू मिश्रा की कहानी ‘आखिरी प्रणाम’ दिल को छू गई। श्री सुरेश जैन का आलेख ‘अपने जीवन के अमृत काल का आनंद लें’ में बुजुर्गों के लिए बहुत ही हितकारी बातों का उल्लेख किया है। यदि इन बातों को वृद्धजन अपनाएँ तो उनका जीवन भी सदा प्रफुल्लित, प्रसन्न रहेगा। उन्हें जीवन में किसी प्रकार की कमी महसूस नहीं होगी। पर्यावरण के बारे में श्री सलिल सरोज का आलेख ‘प्रकृति रसति रक्षित’ प्रकृति संरक्षण की महत्ता को दर्शाता है। पत्रिका नियमित समय पर प्रकाशित होना अपने आप में सबसे बड़ी उपलब्धि है।

—कृष्णचंद्र टवाणी, किशनगढ़ (राज.)

‘साहित्य अमृत’ का दिसंबर अंक समय से मिल गया। अलाव पर आग सेंकते बच्चे सर्दी का एहसास दिला रहे हैं। प्रतिस्मृति में विश्वंभर नाथ कौशिक की कहानी ‘गरीब हृदय’ बड़ी मार्मिक एवं हृदय को द्रवित करनेवाली है। अन्य कहानियों में ऋता शुक्ल की ‘अब लौं नसानी...’, नंद किशोर कौशिक की ‘झाड़ी की आवाज’, विजय कुमार की ‘बाप जी की दुकान’, मंजु मधुकर की ‘पुत्रवती’ बेहद पसंद आई, ये कहानियाँ हृदय को गहराई तक छू गईं, मनोरंजक के साथ-साथ प्रेरणादायी भी

बन पड़ी हैं। कहानीकारों को बधाई। सत्य शुचि की लघुकथाएँ मारक हैं। अंकुर सिंह की ‘कोख का बँटवारा’ अच्छी बन पड़ी है। आलेखों में श्रीधर द्विवेदीजी ने स्वास्थ्य के मामले में जागरूक कर पाठकों की आँखें खोलने का काम किया है। इससे पता चलता है कि वे लोक-स्वास्थ्य के प्रति कितने चिंतित हैं। सेहत ठीक तो सब ठीक, उनकी सूक्तियाँ सारगर्भित और अपना योग्य हैं। स्वतंत्रता सेनानी गोपबंधु को चक्रधर त्रिपाठीजी ने शिद्दत से याद किया है, उनके लिए यह शानदार शब्दांजलि है। राहिला रईसजी ने निराला और गांधीजी का अच्छा दिग्दर्शन किया है। कविताओं में रामनिवास मानव के ताँका, सूर्यप्रकाश मिश्र के गीत, राजश्री की कविताएँ, बी.एल. आच्छा की कविता ‘चीख’, सत्यशील राम के दोहे मन को भा गए। ऊषा निगम का संस्मरण ‘हरसिंगार के फूलों से मेरा रिश्ता’ उनके प्रकृति प्रेम को बयाँ करता है। बंदी प्रसाद वर्मा की बाल-कहानी ‘सब्जी चोर’ बड़ी मजेदार लगी। अर्चना बाजपेईजी की बाल-कविताएँ बाल मनोभावों को अच्छे से व्यक्त करने में समर्थ हैं। कुल मिलाकर पूरा अंक ही सुंदर और पठनीय है।

—कुलभूषण सोनी, दिल्ली

‘साहित्य अमृत’ का दिसंबर अंक समय पर मिल गया। पत्रिका ने अपना स्तर बनाए रखा है। यही ऐसी पत्रिका है, जिसमें हम हिंदी साहित्य की ज्यादातर विधाओं की रचनाएँ एक साथ पढ़ सकते हैं। साथ ही हर आयुवर्ग के लेखक-कवियों की रचनाओं का आनंद ले सकते हैं। भारतीय परिपार्श्व स्तंभ के अंतर्गत हर अंक में एक प्रांतीय भाषा की रचना पढ़ने को जरूर मिल जाती है, वैसे ही कुछ विश्व परिपार्श्व स्तंभ के अंतर्गत विदेशी भाषा की रचना सहज सुलभ हो जाती है। साहित्यिक गतिविधियों में पूरे साहित्य जगत् की गतिविधियों का लेखा-जोखा एक साथ ही मिल जाता है। कवि-सम्मेलन, गोष्ठी, लोकार्पण इत्यादि की रपट प्रमुखता से घर बैठे ही पढ़ने को मिल जाती है। ‘साहित्य अमृत’ सच में साहित्य का अमृत हम पाठकों को उपलब्ध करा रही है। नए वर्ष की हार्दिक शुभकामनाएँ।

—भूपसिंह, हरिद्वार

‘साहित्य अमृत’ पत्रिका समय की पाबंद है। हर अंक की प्रतीक्षा रहती है। दिसंबर अंक में प्रतिस्मृति में विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की चर्चित कहानी ‘गरीब-हृदय’ पढ़कर मन पर छा गई। ऋता शुक्ल की ‘अब लौं नसानी...’, मंजु मधुकर की ‘पुत्रवती’, नंद किशोर कौशिक की ‘झाड़ी की आवाज’, विजय कुमार की ‘बापजी की दुकान’, रश्मि गौड़ की ‘याद उन्हें भी कर लें!’ बहुत अच्छी लगीं, ये इस अंक की जान हैं। आलेखों में श्रीधर द्विवेदीजी का ‘सेहत से जुड़े कुछ सुभाषित’ बड़े मजेदार और उपयोगी हैं। इन्हें जीवन में अपनाना चाहिए। ओडिशा के क्रांतिकारी गोपबंधु हर प्रकार से वंदनीय हैं। सूर्य प्रकाश मिश्र के गीत, बी.एल. आच्छा की कविता ‘चीख’ उद्वेलित करनेवाली है। बंदी प्रसाद वर्मा बच्चों के लेखक हैं, उनकी कहानी ‘सब्जी चोर’ मजेदार लगी। अर्चना की बाल-कविताएँ अच्छी हैं। पूरा अंक पठनीय है।

—आनंद शर्मा, नोएडा

साहित्यिक गोष्ठी संपन्न

४ दिसंबर को पूर्णिया के रामबाग स्थित साहित्याकाश (ग्रीन हाउस पुस्तकालय) में एक साहित्यिक गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री विजय नंदन प्रसाद, प्रियंवद, संजय सनातन, सत्य प्रकाश, सुमित प्रकाश को सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में श्री दीर्घ नारायण के प्रथम उपन्यास 'रामघाट में कोरोना' पर प्राक-विमोचन, विमर्श भी संपन्न हुआ। सर्वश्री प्रभात नारायण झा, सुरेंद्र शोषण, सुरेंद्र नाथ, सुमित प्रकाश, प्रियंवद, संजय सनातन, के.के. चौधरी, संजीव सिंह, शंभूलाल वर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। अध्यक्षता श्री विजय नंदन प्रसाद ने की। मंच संचालन श्री उमेश आदित्य ने किया। □

'अंतर्मन-यात्रा अनंत' कथा संग्रह विमोचित

विगत दिनों हिसार के आकाशवाणी केंद्र के प्रांगण में श्री सुनील आदित्य की 'अंतर्मन-यात्रा अनंत' कथा-संग्रह का विमोचन हरियाणा लेखक मंच के अध्यक्ष श्री कमलेश भारतीय ने किया। इस अवसर पर सर्वश्री विनय कुमार, कुसुम सैनी, बंसीलाल गुर्जर, मनोज कुमार, सुनील श्योराण ने अपने विचार व्यक्त किए। विशिष्ट अतिथियों में सर्वश्री राधेश्याम महला, राजेश सरदाना, शेर सिंह बशेर, रामचंद्र कालिया, राहुल रमन और धर्मपाल उपस्थित रहे। आभार श्री ओमप्रकाश ने व्यक्त किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों इंदौर में आपले वाचनालय तत्वावधान में वसंत राशिनकर स्मृति अ.भा. समारोह का समापन हुआ, जिसमें मुख्य अतिथि मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी के निदेशक श्री विकास दवे ने अपने विचार व्यक्त किए। श्री अनिल कुमार ने अपने उद्बोधन में वसंतजी के कार्यों और समर्पण को स्मरण किया और उन्हें शहर की सांस्कृतिक धरोहर निरूपित किया। कार्यक्रम में कवि श्री राजू देसले को 'कविवर्य बसंत राशिनकर स्मृति अ.भा. सम्मान' से सम्मानित किया गया। उल्लेखनीय कृतियों को दिए जानेवाले अ.भा. वसंत राशिनकर काव्य सम्मान से सर्वश्री रारावीकर, संदीप काले, शिवाजी नारायण सिंदे, पल्लवी परुलेकर, साईनाथ पाचारने, विद्याधर बंसोड, संदीप विट्ठल कांबले, हबीब भंडारे को सम्मानित किया गया। शिक्षा के क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धि पानेवाले भूषण राजुनकर को श्री अच्युत पोतदार प्रदत्त 'रामू भैया दाते स्मृति पुरस्कार' प्रदान किया गया। श्रीमती अकलनंदा साने की अध्यक्षता में मराठी कवि सम्मेलन भी आयोजित किया गया, जिसका संचालन सुश्री जया तथा श्रीति राशिनकर ने किया। अतिथियों का स्वागत सर्वश्री अरुण डिके, दीपक शिरालकर, दीपक देशपांडे ने किया तथा आभार श्री संदीप राशिनकर ने व्यक्त किया। □

म.प्र. हिंदी संस्कृति परिषद् के पुरस्कार घोषित

साहित्य अकादमी, मध्य प्रदेश संस्कृति परिषद्, भोपाल द्वारा वर्ष २०१८ के लिए अखिल भारतीय पुरस्कारों के अंतर्गत पं. माखनलाल

साहित्यिक गतिविधियाँ

चतुर्वेदी (निबंध) डॉ. रामदीन त्यागी को 'मीडिया से दूर गिरिजन' के लिए; गजानन माधव मुक्तिबोध (कहानी) इंजी. आशा शर्मा को 'तस्वीर का दूसरा रुख' के लिए; राजा वीरसिंह देव (उपन्यास) श्रीमती कृष्णा अग्निहोत्री को 'हरिप्रिया' के लिए; आचार्य रामचंद्र शुक्ल (आलोचना) प्रो. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी को 'साहित्य का अभिप्राय' के लिए; पं. भवानी प्रसाद मिश्र (गीत एवं हिंदी गजल) श्रीमती कांति शुक्ला 'उर्मि' को 'कल्पना के उग आए पंख' के लिए; अटल बिहारी वाजपेयी (कविता) आचार्य देवेंद्र 'देव' को 'हठयोगी नचिकेता' के लिए; कुबेरनाथ राय (ललित-निबंध) श्री नर्मदा प्रसाद उपाध्याय को 'चिनगारी की विरासत' के लिए; विष्णु प्रभाकर (आत्मकथा-जीवनी) श्री महेश सोनी को 'यादों से भरा झोला' के लिए; निर्मल वर्मा (संस्मरण) डॉ. आनंद प्रकाश शर्मा को 'चैतुआ' के लिए; महादेवी वर्मा (रेखाचित्र) डॉ. मंजरी शुक्ला को 'यादों की दुपहरी' के लिए; प्रो. विष्णुकांत शास्त्री (यात्रा-वृत्तांत) श्री राजेंद्र उपाध्याय को 'नावें, समुद्र और जहाज' के लिए; भारतेन्दु हरिश्चंद्र (अनुवाद) श्री अरविंद जवलेकर को 'कृतार्थ मैं! कृतज्ञ मैं' के लिए; नारद मुनि (फेसबुक/ब्लॉग/नेट) श्री केशव गुप्ता को उनके पेज 'फेसबुक/ब्लॉग/नेट' के लिए दिया जाएगा।

प्रादेशिक पुरस्कारों में वृंदावनलाल वर्मा (उपन्यास) श्री आलोक शर्मा को 'अनंत चंद्र' के लिए; सुभद्रा कुमारी चौहान (कहानी) श्री गोकुल सोनी को 'कठघरे में हम सब' के लिए; श्रीकृष्ण सरल (कविता) श्री प्रतीक सोनवलकर को 'समर्पण' के लिए; आचार्य नंददुलारे वाजपेयी (आलोचना) श्री राधेश्याम आचार्य को 'श्रीयमुने रसपान' के लिए; हरिकृष्ण प्रेमी (नाटक) श्री संजय श्रीवास्तव को 'सरहदें' के लिए; राजेंद्र अनुरागी (डायरी) श्री ब्रजेश राजपूत को 'ऑफ द स्क्रीन' के लिए; पं. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के लिए (प्रदेश के लेखक की पहली कृति) श्रीमती सीमा शर्मा को 'गीत अँजुरी' के लिए; ईसुरी (लोकभाषा विषयक) श्री महेश जोशी 'अनल' को 'हाल चाल सब अच्छा छे' के लिए; हरिकृष्ण देवसरे (बाल साहित्य) श्री ओमप्रकाश क्षत्रिय 'प्रकाश' को 'बच्चो, सुनो कहानी' के लिए; श्री नरेश मेहता (संवाद, पटकथा लेखन) श्री पवन सक्सेना को पटकथा लेखन 'चंबल का शौर्य' के लिए; जैनेंद्र कुमार 'जैन' (लघुकथा) श्री प्रताप सिंह सोढ़ी को 'मेरी प्रिय लघुकथाएँ' के लिए; सेठ गोविंद दास (एकांकी) श्री देविंदर सिंह ग्रोवर को 'रानी दुर्गावती' के लिए; शरद जोशी (व्यंग्य) श्री आशीष दशोत्तर को 'मोरे अवगुन चित में धरो' के लिए; वीरेंद्र मिश्र (गीत) श्री यतींद्रनाथ 'राही' को 'सांध्य के ये गीत लो...' के लिए तथा दुष्यंत कुमार पुरस्कार (गजल) श्री अनिल त्रिवेदी को 'जिंदगी मिलेगी दोबारा' के लिए दिया जाएगा।

वर्ष २०१९ के लिए अखिल भारतीय पुरस्कारों के अंतर्गत पं.

माखनलाल चतुर्वेदी (निबंध) डॉ. मनोज पांडेय को 'आलोचना के नए परिप्रेक्ष्य' के लिए; गजानन माधव मुक्तिबोध (कहानी) श्री सच्चिदानंद जोशी को 'पलभर की पहचान' के लिए; राजा वीरसिंह देव (उपन्यास) प्रो. मनीषा शर्मा को 'ये इश्क' के लिए; आचार्य रामचंद्र शुक्ल (आलोचना) डॉ. कविता भट्ट को 'भारतीय साहित्य में जीवन-मूल्य' के लिए; पं. भवानी प्रसाद मिश्र (गीत एवं हिंदी गजल) के लिए डॉ. आर.पी. सारस्वत को 'तुम बिन' के लिए; अटल बिहारी वाजपेयी (कविता) डॉ. इंदु राव को 'छाँह संस्कृति की' के लिए; कुबेरनाथ राय (ललित-निबंध) श्री राजेश जैन को 'ईश्वर की आत्मकथा' के लिए; विष्णु प्रभाकर (आत्मकथा-जीवनी) डॉ. कुलदीप चंद अग्निहोत्री को 'श्रीगुरु नानक देवजी' के लिए; निर्मल वर्मा (संस्मरण) प्रो. सूर्यप्रकाश चतुर्वेदी को 'बदलती हवाएँ' के लिए; महादेवी वर्मा (रेखाचित्र) श्री प्रशांत पोल को 'वे पंद्रह दिन' के लिए; प्रो. विष्णुकांत शास्त्री (यात्रा-वृत्तांत) डॉ. सुधा गुप्ता 'अमृता' को 'चलें भ्रमण की ओर' के लिए; भारतेंदु हरिश्चंद्र (अनुवाद) श्री संतोष रंजन को 'थेलमा मेरी कोरिली' के लिए एवं नारद मुनि (फेसबुक/ब्लॉग/नेट) श्री अजय जैन 'विकल्प' को उनके पेज 'फेसबुक/ब्लॉग/नेट' के लिए दिया जाएगा।

प्रादेशिक पुरस्कारों में वृंदावनलाल वर्मा (उपन्यास) डॉ. अश्विनी कुमार दुबे को 'किसी शहर में' के लिए; सुभद्रा कुमारी चौहान (कहानी) डॉ. गरिमा संजय दुबे को 'दो धुवों के बीच की आस' के लिए; श्रीकृष्ण सरल (कविता) श्री गुरु सक्सेना को 'सीता वनवास' के लिए; आचार्य नंददुलारे वाजपेयी (आलोचना) श्रीमती बूला कार को 'साहित्य मीमांसा' के लिए; हरिकृष्ण प्रेमी (नाटक) श्री अशोक मनमानी को 'वतन आजाद देखूँ' के लिए; राजेंद्र अनुरागी (डायरी) श्री राजेश अवस्थी को 'अतीत के शब्दबिंब' के लिए; पं. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (प्रदेश के लेखक की पहली कृति) डॉ. अन्नपूर्णा सिसोदिया को 'औरत बुद्ध नहीं होती' के लिए; ईसुरी (लोकभाषा विषयक) आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल को 'मदन रस बरसें' के लिए; हरिकृष्ण देवसरे (बाल साहित्य) डॉ. प्रेमलता नीलम को 'गले का हार' के लिए; श्री नरेश मेहता (संवाद, पटकथा लेखन) श्री संदीप शर्मा को 'प्रयाग प्रवाह और जयतु सिंहस्थ' के लिए; जैनेंद्र कुमार 'जैन' (लघुकथा) डॉ. गिरिजेश सक्सेना को 'चाणक्स के दाँत' के लिए; सेठ गोविंद दास (एकांकी) डॉ. सुधीर आजाद को 'मैं खुदीराम त्रैलोक्यनाथ बोस' के लिए; शरद जोशी (व्यंग्य) श्रीमती मीरा जैन को 'हेल्थ हादसा' के लिए; वीरेंद्र मिश्र (गीत) श्री राजेंद्र शर्मा 'अक्षर' को 'संबोधन' के लिए एवं दुष्यंत कुमार (गजल) डॉ. प्रियंका त्रिपाठी को 'गुनगुनी धूप' के लिए दिया जाएगा।

वर्ष २०२० के लिए अखिल भारतीय पुरस्कारों के अंतर्गत पं. माखनलाल चतुर्वेदी (निबंध) श्री शिखर चंद जैन को 'जिंदगी' मिलेगी दोबारा' के लिए; गजानन माधव मुक्तिबोध (कहानी) डॉ. दिनेश पाठक 'शशि' को 'निरीह' के लिए; राजा वीरसिंह देव (उपन्यास) श्री आशुतोष राणा को 'रामराज्य' के लिए; आचार्य रामचंद्र शुक्ल (आलोचना) डॉ.

शंभूसिंह 'मनहर' को 'नई कविता को रघुवीर सहाय का योगदान' के लिए; पं. भवानी प्रसाद मिश्र (गीत एवं हिंदी गजल) डॉ. वीरेंद्र 'निर्झर' को 'संघर्षों की धूप' के लिए; अटल बिहारी वाजपेयी (कविता) श्रीमती सविता दास 'सवि' को 'किनारे पर आकर' के लिए; कुबेरनाथ राय (ललित निबंध) डॉ. विधि नागर को 'संगीत नृत्य कथक' के लिए; विष्णु प्रभाकर (आत्मकथा-जीवनी) डॉ. अंजनी कुमार झा को 'अटल बिहारी वाजपेयी' के लिए; निर्मल वर्मा (संस्मरण) श्री ललित कुमार को 'विटामिन जिंदगी' के लिए; महादेवी वर्मा (रेखाचित्र) श्री विजय मनोहर तिवारी को 'उफ ये मौलाना' के लिए; प्रो. विष्णुकांत शास्त्री (यात्रा-वृत्तांत) श्री विमला भंडारी को 'अध्यात्म का वह दिन' के लिए; भारतेंदु हरिश्चंद्र (अनुवाद) डॉ. दामोदर खड्गसे को 'नौकरस्याही के रंग' के लिए एवं नारद मुनि (फेसबुक/ब्लॉग/नेट) डॉ. अर्पण जैन 'अविचल' को पेज 'फेसबुक/ब्लॉग/नेट' के लिए दिया जाएगा।

प्रादेशिक पुरस्कारों के तहत वृंदावनलाल वर्मा (उपन्यास) डॉ. जय बैरागी को 'दंडकारण्य' के लिए; सुभद्रा कुमारी चौहान (कहानी) श्री संतोष मोहंती 'दीप' को 'छाँव की तलाश में' के लिए; श्रीकृष्ण सरल (कविता) श्री मुरलीधर चाँदनीवाला को 'विरासत के फूल' के लिए; आचार्य नंददुलारे वाजपेयी (आलोचना) डॉ. राजेश श्रीवास्तव को 'राम अयन' के लिए; हरिकृष्ण प्रेमी (नाटक) श्रीमती साधना श्रीवास्तव को 'दादी की नजर' के लिए; राजेंद्र अनुरागी (डायरी) श्री आलोक सेठी को 'बचपन से पचपन' के लिए; पं. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (प्रदेश के लेखक की पहली कृति) श्री जगत शर्मा को 'धनुष उठाओ हे अवधेश' के लिए; ईसुरी (लोकभाषा विषयक) श्री अखिलेश जोशी को 'निमाड़ की वात छे छुहावणी' के लिए; हरिकृष्ण देवसरे (बाल साहित्य) श्री महेश सक्सेना को 'जल ही कल है' के लिए; श्री नरेश मेहता (संवाद, पटकथा लेखन) श्री विशाल कलंबकर को पटकथा लेखन 'क्रांति नायक' के लिए; जैनेंद्र कुमार 'जैन' (लघुकथा) श्री संतोष सुपेकर को 'सातवें पन्ने की खबर' के लिए; सेठ गोविंद दास (एकांकी) डॉ. नाथूराम राठौर को 'संकल्पों के पंख' के लिए; शरद जोशी (व्यंग्य) श्री कुमार सुरेश को 'व्यंग्य राग' के लिए; वीरेंद्र मिश्र (गीत) श्री श्याम सुंदर तिवारी को 'मैं किन सपनों की बात करूँ' के लिए एवं प्रादेशिक दुष्यंत कुमार (गजल) श्री हेमराज नामदेव 'राजसागरी' को 'चलो अब घर खों चलिए' को दिया जाएगा।

वर्ष २०२१ के लिए अखिल भारतीय पुरस्कारों के अंतर्गत पं. माखनलाल चतुर्वेदी (निबंध) प्रो. श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी को 'मन मानस में राम' के लिए; गजानन माधव मुक्तिबोध (कहानी) डॉ. प्रभा पंत को 'मेरी प्रतिनिधि कहानियाँ' के लिए; राजा वीरसिंह देव (उपन्यास) श्री बलवीर सिंह 'करुण' को 'डीग का जौहर' के लिए; आचार्य रामचंद्र शुक्ल (आलोचना) डॉ. सत्य प्रकाश पाल को 'भाषा, साहित्य और संस्कृति' के लिए; पं. भवानी प्रसाद मिश्र (गीत एवं हिंदी गजल) डॉ. रामवल्लभ आचार्य को 'मैं तुम्हारी बाँसुरी हूँ' के लिए; अटल बिहारी

वाजपेयी (कविता) डॉ. आनंद कुमार सिंह को 'अथर्वा' के लिए; कुबेरनाथ राय (ललित निबंध) श्री रजनीश कुमार शुक्ल को 'भारतीय ज्ञानपरंपरा और विचारक' के लिए; विष्णु प्रभाकर (आत्मकथा-जीवनी) श्री दिनेश पाठक को 'पं. रविशंकर नव्यता के नायक' के लिए; निर्मल वर्मा (संस्मरण) प्रो. अजहर हाशमी को 'संस्मरण का संदूक समीक्षा के सिक्के' के लिए; महादेवी वर्मा (रेखाचित्र) डॉ. भैरूलाल गर्ग को 'यादों की धूप-छाँह' के लिए; प्रो. विष्णुकांत शास्त्री (यात्रा-वृत्तांत) श्रीमती ज्योति जैन को 'यात्राओं का इंद्रधनुष' के लिए; भारतेन्दु हरिश्चंद्र (अनुवाद) डॉ. क्रांति कनाटे को 'गुजराती काव्य संपदा' के लिए एवं नारद मुनि (फेसबुक/ब्लॉग/नेट) श्री लोकेन्द्र सिंह राजपूत को पेज 'फेसबुक/ब्लॉग/नेट' के लिए दिया जाएगा।

प्रादेशिक पुरस्कारों के अंतर्गत वृंदावनलाल वर्मा (उपन्यास) डॉ. ममता चंद्रशेखर को 'स्वदेश' के लिए; सुभद्रा कुमारी चौहान (कहानी) श्री पुरुषोत्तम गौतम को 'काशीफल एवं अन्य कहानियाँ' के लिए; श्रीकृष्ण सरल (कविता) श्री यशवंत चौहान को 'अनंत की ओर' के लिए; आचार्य नंददुलारे वाजपेयी (आलोचना) श्री गोविंद गुंजन को 'आलोचना का हृदय पक्ष एवं रस दृष्टि' के लिए; हरिकृष्ण प्रेमी (नाटक) श्रीमती प्रियंका शक्ति ठाकुर को 'शौर्या' के लिए; राजेंद्र अनुरागी (डायरी) श्री दिनेश प्रभात को 'आए हैं तो काटेंगे...' के लिए; पं. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (प्रदेश के लेखक की पहली कृति) श्री राजेंद्र गट्टानी को 'युग का गरल पिया करते हैं' के लिए; ईसुरी (लोकभाषा विषयक) श्री प्रमोद भार्गव को 'सहरिया आदिवासी' के लिए; हरिकृष्ण देवसरे (बाल साहित्य) डॉ. अर्जुन दास खत्री को 'मैं छोटा सा प्यारा बच्चा' के लिए; श्री नरेश मेहता (संवाद, पटकथा लेखन) श्रीमती राधारानी चौहान 'मानवी' को पटकथा लेखन 'एकता का सूत्र : हिंदी' के लिए; जैनेंद्र कुमार 'जैन' (लघुकथा) डॉ. अखिलेश बार्चे को 'जो देखा अपने आसपास' के लिए; सेठ गोविंद दास (एकांकी) श्री श्रीपाद जोशी को 'महाप्रयाण' के लिए; शरद जोशी (व्यंग्य) डॉ. पिलकेंद्र अरोरा को 'श्री गूगलाय नमः' के लिए; वीरेंद्र मिश्र (गीत) कुँअर उदयसिंह 'अनुज' को 'मन का हरसिंगार' के लिए एवं प्रादेशिक दुष्यंत कुमार (गजल) श्री सतीश राठी को 'कोहरे में गाँव' के लिए दिया जाएगा। □

'स से स्टोरीज' पुस्तक लोकार्पित

६ दिसंबर को पटना पुस्तक मेला में सुप्रसिद्ध लेखिका श्रीमती भावना शेखर की सद्यःप्रकाशित पुस्तक 'स से स्टोरीज' का लोकार्पण 'पद्मश्री' से सम्मानित वरिष्ठ लेखिका श्रीमती उषाकिरण खान एवं वरिष्ठ कथाकार श्री अवधेश प्रीत एवं श्री शिवदयाल के करकमलों से संपन्न हुआ। □

'महायोद्धा की महागाथा' कृति लोकार्पित

८ दिसंबर को आकाश मेस, नई दिल्ली में भारत के प्रथम चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ जनरल बिपिन रावत की प्रथम पुण्यतिथि पर श्रद्धांजलि स्वरूप उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर आधारित वरिष्ठ

रक्षा संवाददाता श्री मनजीत नेगी पुस्तक 'महायोद्धा की महागाथा' का लोकार्पण राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार श्री अजीत डोभाल के करकमलों से थलसेना, वायुसेना, नौसेना एवं भारतीय तटरक्षक के वरिष्ठ अधिकारियों की उपस्थिति में संपन्न हुआ। लेखकीय वक्तव्य श्री मनजीत नेगी ने दिया। सुरक्षा सलाहकार श्री अजीत डोभाल ने जनरल बिपिन रावत की कर्मठता, नेतृत्वकौशल, वीरता, साहस, शौर्य और दूरदृष्टि को स्मरण किया। उन्होंने कहा कि जनरल रावत केवल एक महान् जनरल ही नहीं थे वरन् बड़े उदारमना और सबकी सहायता करनेवाले व्यक्ति थे। इस अवसर पर जनरल रावत की सुपुत्री सुश्री तारिणी रावत भी उपस्थित थीं। □

'टोक्यो ओलंपिक के खिलाड़ियों' पुस्तक लोकार्पित

११ दिसंबर को पटना में बोधगया सभागार, पटना पुस्तक मेला, में वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी एवं प्रसिद्ध लेखक श्री दिलीप कुमार की सद्यःप्रकाशित पुस्तक 'टोक्यो ओलंपिक के खिलाड़ियों की प्रेरक कहानियाँ' का लोकार्पण संपन्न हुआ। □

'ओ री गौरैया' कृति लोकार्पित

११ दिसंबर को पटना में बिहार की राजकीय पक्षी गौरैया पर केंद्रित प्रसिद्ध पर्यावरणविद् लेखक श्री संजय कुमार की सद्यःप्रकाशित पुस्तक 'ओ री गौरैया' का लोकार्पण विशिष्ट पर्यावरणविदों एवं पत्रकारों के करकमलों से संपन्न हुआ। □

डॉ. हेडगेवार प्रज्ञा सम्मान

१२ दिसंबर को कोलकाता की सुप्रसिद्ध साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था श्रीबड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय द्वारा प्रवर्तित ३३वें वर्ष का डॉ. हेडगेवार प्रज्ञा सम्मान उच्चतम न्यायालय में दीर्घकालीन विवादित श्रीरामजन्म भूमि विषय को सफलता दिलाने में अहम भूमिका निभानेवाले श्री पाराशरण को देने की घोषणा की गई। सम्मानस्वरूप उन्हें मानपत्र एवं एक लाख रुपए की राशि भेंट की जाएगी। □

संगोष्ठी संपन्न

१३ दिसंबर को दिल्ली विश्वविद्यालय में श्री गुरु तेग बहादुर खालसा कॉलेज के हिंदी विभाग द्वारा 'भारतीय विज्ञान कथाओं में नारीवादी चेतना' विषय पर आयोजित एक दिवसीय संगोष्ठी में श्री अरविंद मिश्र ने विज्ञान कथाओं में नारीवादी चेतना को रेखांकित करते हुए कहा कि स्त्री देश के अन्वेषण का प्रयास है स्त्री विज्ञान कथा लेखन। सर्वश्री अरविंद मिश्र, स्मिता मिश्र, अर्चना मिरजकर, कल्पना कुलश्रेष्ठ, उर्वशी कोहाड़, प्रज्ञा गौतम, क्षमा गौतम ने अपने विचार व्यक्त किए। स्वागत भाषण डॉ. सुमिता लोहिया ने तथा संचालन श्रीमती अलका मणि ने किया। □

कार्यक्रम आयोजित

विगत दिनों को पटना में भारतीय युवा साहित्यकार परिषद के तत्वावधान में फेसबुक के अवसर साहित्यधर्मी पत्रिका के पेज पर

ऑनलाइन 'तेरे मेरे दिल की बातें' एपिसोड-१० में सर्वश्री सिद्धेश्वर, कृष्ण मुरारी, सुनीता सिंह 'सुधा', अपूर्व कुमार, अनिल पतंग, शैलेंद्र सिंह, संतोष मालवीय और राज प्रिया रानी ने अपने विचार व्यक्त किए। इनके अतिरिक्त सर्वश्री ललन सिंह, सुधा पांडे, पुष्प रंजन, राजेंद्र राज, बिन्नी मिश्रा, सपना चंद्रा, हरि नारायण हरि, ऋचा वर्मा, गोरख प्रसाद मस्ताना, शैलेंद्र सिंह, राज कांता, श्रीकांत गुप्त, दुर्गेश मोहन, सिद्धेश्वर सिंह, शैलजा, सुनील कुमार उपाध्याय, नीलम श्रीवास्तव ने भी अपने विचार रखे। □

लोकार्पण और कवि सम्मेलन संपन्न

हिंदी लेखक संघ, हैदराबाद की ५७६वीं और गोलकोंडा दर्पण विचार मंच की १८७वीं संयुक्त गोष्ठी के तत्त्वावधान में नामपल्ली स्थित हिंदी प्रचार सभा सभागृह में 'गोलकोंडा दर्पण' के नए अंक का लोकार्पण श्रीमती सुधा ठाकुर के करकमलों से हुआ। डॉ. प्रेमलता श्रीवास्तव ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की। श्री गोविंद अक्षय ने संचालन किया। इस अवसर पर आयोजित कवि सम्मेलन में नगरद्वय के कविगण ने अपनी समसामयिक कविताएँ, गीत, गजल, हास्य व्यंग्य की कविताओं का पाठ किया। आरंभ में श्रीमती रत्नकला मिश्र ने स्वागत किया। □

डॉ. कमल किशोर गोयनका सम्मानित

१७ दिसंबर को पटना के भारतीय नृत्य कला मंदिर में नई धारा साहित्य सम्मान समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर विश्वप्रसिद्ध प्रेमचंद मर्मज्ञ डॉ. कमल किशोर गोयनका को 'उदयराज सिंह स्मृति सम्मान' से सम्मानित किया गया। सर्वश्री सुभाष चंद्र और शहंशाह आलम को नई धारा रचना सम्मानस्वरूप शॉल, सम्मान-पत्र, प्रतीक चिह्न और २५-२५ हजार रुपए की राशि से सम्मानित किया गया। अध्यक्षता डॉ. उषाकिरण खान ने की। सर्वश्री महेश दर्पण, सुभाष चंद्र, शहंशाह आलम ने अपने विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम में बिहार की प्रथम महिला आई.पी.एस. श्रीमती मंजरी जारुहार की पुस्तक 'मैडम सर' का लोकार्पण किया गया। संचालन श्री शिव नारायण ने तथा धन्यवाद ज्ञापन श्रीमती रूबी भूषण ने किया। □

काव्य-गोष्ठी संपन्न

१५ दिसंबर को लखनऊ विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में फादर कामिल बुल्के शिक्षक-कक्ष में प्रो. रश्मि कुमार के संयोजकत्व में तथा प्रो. कालीचरण स्नेही की अध्यक्षता में आयोजित काव्य गोष्ठी में सर्वश्री सुरेश उजाला, कालीचरण स्नेही, गिरीश कुमार वर्मा 'डंडा लखनवी', सोहनलाल 'सुबुद्ध', आर.के. श्रीवास्तव, टी.पी. राही आदि ने अपनी प्रतिनिधि रचनाओं का पाठ किया। साथ ही सर्वश्री योगेंद्र प्रताप सिंह, रविकांत, सेंथिल कुमार, अलका पांडेय, कुंज बिहारी ने काव्य की रचना-प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए काव्य पाठ किया। संचालन डॉ. सुरेश उजाला ने तथा धन्यवाद ज्ञापन डॉ. टी.पी. राही ने किया। □

भूल सुधार



'साहित्य अमृत' के दिसंबर, २०२२ अंक में 'साहित्यिक क्षति' के अंतर्गत भूल से प्रो. विश्वनाथ त्रिपाठीजी का विवरण दिवंगत साहित्यकारों में प्रकाशित हो गया था। वे पूर्णतः स्वस्थ हैं। हम इस बड़ी त्रुटि के लिए क्षमा-प्रार्थना करते हुए उनके दीर्घ एवं स्वस्थ जीवन की कामना करते हैं।

दिल्ली-कला-उत्सव संपन्न

१९ दिसंबर को संस्कार भारती, दिल्ली प्रांत द्वारा संगीत नाटक अकादेमी के तत्त्वावधान में दो दिवसीय दिल्ली कला-उत्सव का उद्घाटन केंद्रीय संस्कृति एवं संसदीय कार्य राज्यमंत्री श्री अर्जुनराम मेघवाल ने किया। समारोह में भजन प्रस्तुति सहित अनेक कलाकारों की मनोरम और रम्य प्रस्तुतियों के साथ प्रसिद्ध नृत्यांगना पद्मभूषण डॉ. सरोजा वैद्यनाथन की शिष्याओं, प्रसिद्ध बाँसुरी वादक श्री प्रसन्ना कुमार, प्रतिष्ठित गायिका सुश्री विधि शर्मा, प्रसिद्ध नृत्यांगनाओं सुश्री ऋचा गुप्ता एवं सुश्री समीक्षा शर्मा की नृत्य प्रस्तुति सहित, संगीत विधा से अवनिश त्यागी के समूह सहित संस्कार भारती की विविध विधाओं की भावप्रवण तथा आकर्षक प्रस्तुतियाँ दर्शकों को देखने को मिलीं। इस अवसर पर 'भारतीय संस्कृति एवं विरासत' विषय पर आयोजित 'युवा पोस्टर प्रतियोगिता' में सौ से अधिक प्रतिभागियों ने अत्यंत सुंदर चित्र बनाए।

उत्सव में संस्कार भारती के राष्ट्रीय अध्यक्ष सुप्रसिद्ध चित्रकार श्री वासुदेव कामथ, राष्ट्रीय स्वयंसेवक क्षेत्र के उत्तर क्षेत्र संघचालक डॉ. सीताराम व्यास, प्रसिद्ध नृत्यांगना श्रीमती रंजना गौहर, पद्मश्री से विभूषित विख्यात ध्रुपद गायक श्री वसीफुद्दीन डागर की विशेष उपस्थिति रही। वरिष्ठ नाट्य निर्देशक जयप्रकाश सिंह द्वारा निर्देशित प्रखर क्रांतिकारी श्रीअरविंद घोष के जीवन पर केंद्रित नाटक 'निर्जन कारावास' के मंचन को विशेष सराहना मिली। प्रसिद्ध कवियों सर्वश्री गजेंद्र सोलंकी, मनवीर मधुर, पूनम वर्मा व चरनजीत 'चरन' ने अपनी ओजस्वी और प्रभावी कविताओं से श्रोताओं को आनंदित कर दिया।

इस अवसर पर 'संस्कारम्' नामक स्मारिका का प्रकाशन भी किया गया, जिसमें भारतीय कला-संस्कृति का परिचय देते सर्वश्री वासुदेवशरण अग्रवाल, पं. विद्यानिवास मिश्र, दत्तोपंत टेंगड़ी के लेखों के साथ ही दिल्ली की कला, संगीत, नृत्य, कला-संस्थानों, खान-पान आदि पर केंद्रित आलेख संकलित हैं। भारतीय कला-संस्कृति, धर्म-दर्शन, स्वाधीनता संग्राम, महापुरुषों आदि की प्रेरक पुस्तकों की प्रदर्शनी भी लगाई गई। □